मैत्रेयी पुष्पा का कथा-साहित्य -
एक अनुशीलन

**(MAITHRAI PUSHPA KA KATHASAHITYA-
EK ANUSEELAN)**

Thesis
Submitted to
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY

For the Degree of
DOCTOR OF PHILOSOPHY

Under the Faculty of Humanities

By
स्मिता एस. नायर
SMITHA. S. NAIR

Supervising Teacher
Dr. K. VANAJA

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
KOCHI - 682 022

DECEMBER 2008

Certificate

This is to certify that the research work presented in the thesis entitled **"MAITHRAI PUSHPA KA KATHASAHITYA EK ANUSEELAN"** is an authentic record of research work carried out by **Mrs. SMITHA. S. NAIR** under my supervision at the Department of Hindi, Cochin University of Science And Technology, in partial fullfillment of the requirements for the degree of DOCTOR OF PHILOSOPHY in HINDI and that no part thereof has been included for the award of any other degrees.

Dr. K.VANAJA
Dept. of Hindi
Cochin University of Science
And Technology
Kochi - 22

Place COCHIN
Date 26-12-2008

DECLARATION

I hereby declare that the thesis entitled **'Maithrai Pushpa Ka Kathasahitya Ek Anuseelan'** is a bonafide record of the original work carried out by me under the supervision of **Dr. K.VANAJA** at the Department of Hindi, Cochin University of Science and Technology and no part thereof has been included in any other thesis submitted previously for the award of any degree .

SMITHA. S. NAIR

Department of Hindi,
Cochin University of
Science and Technology,
Cochin - 682 022

December - 2008

प्राक्कथन

आज हम पल-पल परिवर्तित संसार में जी रहे हैं। आज की युवा पीढ़ियों को साहित्य में लगाव इसलिए कम है कि कोई साहित्यिक रचना पढ़कर चिंतन-मनन करने केलिए उनके पास वक्त नहीं है। इस ज़माने में भी कथासाहित्य का महत्व इसमें है कि वह व्यावहारिक जीवन के सबसे निकट है। समकालीन हिंदी कथा साहित्य में वर्तमान-बोध के साथ अतीत और भविष्य का विवेक बोध भी निहित है।

श्रीमती मैत्रेयीपुष्पा हिंदी कथासाहित्य जगत की बहुचर्चित लेखिका हैं। वे अपने उपन्यासों और कहानियों द्वारा ग्रामीण नारियों तथा दलित और जनजातियों की मुक्ति के सवाल का जवाब ढूँढती हैं। नारी और उपेक्षित वर्गों की मुक्ति धारणाओं से ओतप्रोत सैद्धांतिक विचार ही उनके कथासाहित्य की भूमिका है। अपने कथासाहित्य में उन्होंने जिन पात्रों का चित्रण किया है वे पीड़ित, शोषित और उपेक्षित वर्गों और उनके शोषकों के प्रतीक हैं। उनके अधिकांश कथासाहित्य की पृष्ठभूमि तो बुंदेलखंड है जहाँ उनका जन्म और परवरिश हुआ था। भूमंडलीकरण, बाज़ारवाद, पाश्चात्यवत्करण से शोषित ग्राम और ग्रामीणों की ज़िंदगी का संघर्ष लेखिका ने सशक्त और तेज़ भाषा में अभिव्यक्त किया है। ग्रामीओं की बोलचाल की भाषा के यथातथ्य प्रयोग से लेखिका का लक्ष्य तो उनकी संस्कृति और सभ्यता की यथार्थ अभिव्यक्ति है। प्रजातंत्र के नाम पर

राजनीति के क्षेत्र में होनेवाले भ्रष्टाचार, सांप्रदायिकता से उत्पन्न आतंकवाद, जातिवाद दलित और जनजातियों का शोषण उन्होंने अपने कथासाहित्य का विषय बनाया। नारियों की समस्याएँ अभिव्यक्त करने केलिए और शोषण के विरुद्ध विद्रोह प्रकट करने केलिए लेखिका ने पूरा ध्यान दिया है।

मैत्रेयी पुष्पा के तीन कहानी संग्रह और दस उपन्यासों पर विचार विश्लेषण करने ऐसा लगता है दूसरे कथा साहित्यकारों से मैत्रेयीजी का स्थान अलग पंक्ति पर है। उन्होंने पीड़ितों और शोषितों की ज़िंदगी में कलम डुबोकर साहित्य रचना की है। जिसके कैनवास तो भारत के गाँव हैं जो दिन दिन भूमण्डलीकरण, बाज़ारीकरण और पाश्चात्यकरण के चंगुल में पड़कर विनाश की ओर जा रहे हैं। गांव और गांव निवासियों की सुरक्षा केलिए आजकी युवापीढ़ियों का प्रेरणास्रोत है मैत्रेयीजी का कथासाहित्य। अपने भाषा की खासियत के कारण मैत्रेयीजी को साहित्यजगत में एक विशेष स्थान भी मिला है। ग्रामीणों की तमतमाहट और ज़िंदगी की कड्वाहट उनकी भाषा में ज़रूरी दिखाई पड़ती है। उनकी पारदर्शक भाषा में कपटता और दिखावा लेशमात्र भी नहीं है। उच्चवर्ग के सदाचार की कपटता का खुलासा केलिए उनकी भाषा सक्षम है। इसलिए मैत्रेयीजी के कथा साहित्य पर शोध करके उनकी रचनाओं की प्रासंगिकता पर विचार करने का कोशिश मैं ने यहाँ की मेरा शोध प्रबंध का विषय है "मैत्रेयी पुष्पा का कथा साहित्य एक अनुशीलन।"

सुविधानुसार इस शोध प्रबंध को पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया है। पहला अध्याय है "समकालीन हिन्दी कथा साहित्य और मैत्रेयीजी

पुष्पा।" प्रस्तुत अध्याय में समकालीन साहित्यिक प्रवृत्तियों में ग्राम्य जीवन अथवा आंचलिकता, प्रकृति शोषण, नारीवाद, नारी शोषण और विद्रोह, दलित और जनजाति शोषण और विद्रोह, सामाजिक, रिश्ते-नाते का नया स्वरूप, भूमण्डलीकरण बाज़ारवाद राजनीति, सांप्रदायिकता आदि समसामयिक विषयों पर ज़ोर दिया गया है। समकालीन परिवेश की ज्वलंत समस्याओं पर विचार करने के साथ समकालीन हिंदी कथा साहित्य की तात्कालिकता प्रमुख महिला लेखिकाएँ और उनकी रचनाओं की खासियत पर भी प्रकाश डाला गया। मैत्रेयीजी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर भी इस अध्याय में विचार किया गया है।

दूसरे अध्याय में नारी शोषण और शोषण के प्रति उनके विद्रोह पर भी प्रकाश डाला गया है। सिर्फ परिवार और वैवाहिक जीवन में ही नहीं समाज में भी नारी शोषित है। नारी का बलात्कार, हत्या, आत्महत्या आदि की खबर हम रोज़ सुनते हैं। नारी पढ़ी लिखी हो या अनपढ़ हो सर्वत्र शोषण का शिकार बनती है। विविध स्तर की नारियों का शोषण और शोषण के प्रति नारी-विद्रोह की सशक्त अभिव्यक्ति लेखिका ने अपने कथासाहित्य में की है।

तीसरे अध्याय में मैत्रेयीजी के कथासाहित्य के ग्राम्य स्पन्दन पर ज़ोर दिया गया है। ग्राम्य जीवन की समग्र निरीक्षणात्मक अभिव्यक्ति कथागति के साथ हम महसूस कर सकते हैं। मैत्रेयीजी का जन्म और परवरिश बुंदेलखंडीय वातावरण में हुआ था। इसलिए गांव का प्रभाव उनके कथा साहित्य का अभिन्न अंग है। दूसरे साहित्यकारों से मैत्रेयीजी की अलग पहचान है 'ग्राम्य लेखिका'।

चौथे अध्याय में दलित और जनजातियों का जीवन संघर्ष, समाज और राजनीतिक क्षेत्र में उनका शोषण, दलित और जनजाति की नारियों का शोषण और शोषण के प्रति उनके विद्रोह आदि पर विचार-विश्लेषण किया गया है।

पाँचवाँ अध्याय मैत्रेयीजी के कथा साहित्य के शिल्प पक्ष का विश्लेषणात्मक अध्ययन है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध कोच्चिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय की रीडर डॉ. के. वनजा जी के निदेशन एवं निरीक्षण में तैयार किया गया है। समय समय पर उन्होंने जो प्रेरणा और आत्मबल मुझे दिए हैं, उसके कारण में इस शोध प्रबन्ध की पूर्ती केलिए सक्षम हो सकी। इसकेलिए उन्हें धन्यवाद प्रकट करने केलिए कोई भी शब्द पर्याप्त नहीं लगा। मेरे शोध कार्य को सफल बनाने में उन्होंने जो सुझाव एवं उपदेश दिये, उनकेलिए मैं सदैव आभारी रहूँगी। मेरी प्रार्थना है कि भविष्य में मेरी ज़िंदगी के हर कदम में उनके सलाह और आशीष ज़रूर मिलें।

विभागाध्यक्ष प्रो. डॉ. एन. मोहनन के प्रति मैं अपना असीम आदर प्रकट करती हूँ। उनके उदार मनःस्थिति और समुचित मार्गदर्शन से मेरा शोध कार्य सुचारू रूप से संपन्न हुआ।

मेरे इस शोध कार्य का विषय विशेषज्ञ प्रो. डॉ. षण्मुखन जी के प्रति मैं अपने आदर और कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। उनके उचित मार्ग दर्शन ओर सजगता केलिए मैं उनसे सदैव आभारी रहूँगी। विभाग के मेरे

अन्य गुरुजनों के प्रति भी मैं इस अवसर पर आभार प्रकट करती हूँ, जिनके आशीर्वाद में मुझे इस शोध कार्य केलिए सबल प्रदान किया।

कोच्चिन विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के कार्यालय और पुस्तकालय के कर्मचारियों के प्रति भी मैं आभार प्रकट करती हूँ, जिन्होंने इस शोध कार्य को सुगम बनाने केलिए काफी सहयोग दिया है।

मैं अपने प्रिय मित्रों के प्रति भी आभारी हूँ कि वे मुझे अपने छोटी मोटी ज़रूरतों के लिए सदा उपस्थित रहे हैं।

अपने उन समस्त प्रियजनों एवं शुभचिंतकों के साथ इस अवसर पर अपने प्रिय परिवार पिताजी, माताजी दोनों भाइयाँ सुनिल आनंद, सुजित आनंद, उनकी पत्नी सुमी और विद्या, मेरे प्रिय पति श्री. एम.पी. श्रीकुमार, बेटी शिवकीर्तना, मेरे ससुरालवाले को मैं कभी भी भूल नहीं सकती, जिन्होंने प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से मुझे सहायता पहूँचाई है। इसलिए यह शोधप्रबंध मैं अपने प्रिय परिवार केलिए समर्पित करती हूँ।

मैं यह शोध प्रबंध सविनय विद्वानों के सामने प्रस्तुत कर रही हूँ। इसमें जो गलतियाँ एवं खामियाँ आयी हैं, उनकेलिए मैं क्षमा प्रार्थी हूँ।

सविनय,

स्मिता. एस. नायर

विषयसूची

अध्याय-1 **1 - 74**

समकालीन हिंदी कथा साहित्य और मैत्रेयीपुष्पा

समकालीन हिंदी कथासाहित्य की तात्कालिकता - भूमंडलीकरण व बाज़ारवाद सांप्रदायिकता राजनीति - इतिहास और मिथक - आंचलिकता सामाजिक रिश्ते-नाते का नया स्वरूप दलित जीवन कथा साहित्य में 'फेमिनिस्म' हिंदी कथा साहित्य की महिला लेखिकाएँ मैत्रेयीपुष्पा के व्यक्तित्व और कृतित्व

अध्याय-2 **75 - 123**

मैत्रेयीपुष्पा के कथा साहित्य में नारी शोषण और शोषण के विरुद्ध विद्रोह

नारियों का शोषण परिवार में - वैवाहिक जीवन में - समाज में - नौकरी के क्षेत्र में - दलित नारी का शोषण - नारी शोषण के प्रति विद्रोह

अध्याय-3 **124 - 175**

मैत्रेयीपुष्पा के कथा साहित्य में ग्राम्य स्पंदन

ग्राम्य जीवन का परिदृश्य प्रकृति शोषण और प्रतिरोध - ग्रामीण किसान - मज़दूर - ग्राम की राजनीति ग्राम की विभिन्न जातियां - ग्रामीण संस्कृति ग्राम्य जीवन में जागरण

अध्याय-4 **176 - 213**

मैत्रेयीजीपुष्पा के कथा साहित्य में दलित और जनजाति की अस्मिता

दलित और जनजातियों का जीवन संघर्ष दलित और जनजातियों के शोषण राजनैतिक क्षेत्र में दलित और जनजातियों का शोषण दलित और जनजातियों की नारीयों का शोषण दलितों और जनजातियों की संस्कृति शोषण के प्रति विद्रोह

अध्याय-5 **214 - 258**

मैत्रेयीपुष्पा के कथा साहित्य में शिल्प का नया आयाम

कहानियों में शिल्प	उपन्यासों का शिल्प
1. कथ्य	1 कथ्य
2. पात्र-परिकल्पना	2. पात्र-परिकल्पना
3. थल-काल	3. थल-काल
4. संवाद	4. संवाद
5. भाषा-शैली	5. भाषा-शैली

उपसंहार **259 - 264**

संदर्भग्रन्थ सूची **265 - 283**

अध्याय-1

समकालीन कथा साहित्य और मैत्रेयी पुष्पा

समकालीन कथा साहित्य और मैत्रेयी पुष्पा

हिंदी साहित्य की जैत्र-यात्रा आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल, आधुनिककाल से होकर आज समकालीन तक पहुँचती है और आगे बढ़ रही है। आदिकाल, भक्तिकाल और रीतिकाल में प्रचुर-मात्रा में काव्य के विभिन्न क्षेत्रों का विकास हुआ, लेकिन आधुनिककाल में गद्यसाहित्य की महत्ता अधिक स्वीकार की गयी है। समकालीन साहित्य की गरिमा उसकी चोटी तक पहुँचाने का श्रेय 'कथा-साहित्य' माने 'उपन्यास' और 'कहानी' को मिला।

'समकालीनता' का शाब्दिक तथा आर्थिक विश्लेषण

समकालीन साहित्य के विश्लेषण करन से पूर्व 'समकालीनता' पर विचार करना अनिवार्य है। "समकालीन 'शब्द' सम 'उपसर्ग तथा 'कालीन' विशेषण के योग से बना है। 'सम' उपसर्ग का प्रयोग प्रायः 'साथ-साथ' या 'एक साथ' के अर्थ में होता है। 'समकालीन' का अर्थग्रहण किया जाता है 'समय के साथ।" अंग्रेज़ी के 'काण्टेम्पेरेरी' के अर्थ में हिंदी में 'समकालीन शब्द का प्रयोग किया जाता है। "समकालीनता' मात्र वर्तमान का बोध नहीं बल्कि अतीत के तहत वर्तमान को गहराई में समझने और वर्तमान को बदलकर एक नये भविष्य को गढ़ना है।"[1]

---

1. डॉ. ज्ञानवती अरोरा समकालीन हिंदी कहानी यथार्थ के विविध आयाम पृ. 1

"समकालीनता में वर्तमान बोध के साथ अतीत और भविष्य का विवेक-बोध भी निहित है। वर्तमान समाज के अत्याचार, वर्बरों के खूनी आतंक, शोषण आदि समस्याओं को समझकर ही समकालीनता उसे एक नई दिशा प्रदान करती है। समकालीनता यथार्थ चिंतन का अवलोकन नहीं अपितु परिवर्तन की ललक का पर्याय है।"[1]

"समकालीनता, एक काल में साथ-साथ जीना नहीं है। समकालीनता अपने काल की समस्याओं और चुनौतियों का 'मुकाबला' करना है। समस्याओं और चुनौतियों में भी केंद्रीय महत्व रखनेवाली समस्याओं की समझ से समकालीनता उत्पन्न होती है।"[2]

हिंदी साहित्य में समकालीनता वास्तव में आधुनिकता का ही विस्तार है। आधुनिकता में प्रमुखतः दो साहित्यिक धाराएँ है - 'अस्तित्ववादी दर्शन से प्रभावित और दूसरा 'सामाजिक यथार्थ से उभरी आधुनिकता। अस्तित्ववादी दर्शन के तहत विकसित आधुनिकता का साहित्य अज्ञेय, मोहन राकेश, निर्मलवर्मा, उषा प्रियंवदा, कृष्णा सोबती जैसी प्रतिभाओं की देन है। सामाजिक यथार्थ से प्रभावित साहित्य के क्षेत्र में कमलेश्वर, राजेंद्र यादव, नरेश मेहत्ता, रांगेय राघव, भगवतीचरण वर्मा, धर्मवीर भारती आदि सक्रिय रहे हैं। पहली धारा बीस साल के बाद धीरे-धीरे अस्त हो गयी। पर दूसरी धारा का विकास है 'समकालीनता'। इस धारा का लंबा प्रवाह भारतेंदु से प्रारंभ होता है। समकालीन साहित्य से तात्पर्य है कि "समकालीन

---

1. डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी समकालीन हिंदी साहित्य व विविध परिदृश्य - पृ. 24
2. डॉ. विश्वंभरनाथ उपाध्याय समकालीन सिद्धान्त और साहित्य पृ. 16

रचनाकार यथार्थ को यथास्थिति स्वीकार नहीं करता, बल्कि आलोचनात्मक दृष्टि से इसकी जाँच-पड़ताल करता है। उसमें व्याप्त विसंगतियों और अंतर्विरोधों के कारण यह क्रांतिकारी रवैया भी अपनाता है।"[1]

समकालीन साहित्य - बदलते परिदृश्य

स्वतंत्रता के पूर्व और स्वतंत्रता के बाद हिंदी साहित्य क्षेत्र में रोमान्टिसिसम, प्रगतिवादी, प्रयोगवाद, मनोवैज्ञानिकता, सामाजिकता, प्राचीन सांस्कारिकता, व्यंग्यात्मकता, आंचलिकता आदि विभिन्न वादों व संवेदनाओं की भरमार थी। लकिन आज समकालीन रचनाकार देश-काल के बदलाव को मानवीय संदर्भ में देखते हैं क्योंकि उनकी अभिलाषा यह है कि आम-आदमी भी आदमी की तरह जी सकें, समाज के उच्च-निम्न विवेचन खतम करें। इसलिए उनकी रचनाओं में निषेध, अस्वीकार, विद्रोह, व्यंग्य, लताड़, आक्रोश और पछाड़ के स्वर गूँज उठते हैं। "प्रत्येक समकालीन रचना एक तीखा इंजेक्शन है। भारतीय रक्त में, जनमानस में यह इंजेक्शन धीरे-धीरे संक्रामक परिवर्तन कर रहा है।"[2]

समय और स्थिति के अनुसार साहित्य भी परिवर्तित एवं परिमार्जित होता जा रहा है। देश की स्वतंत्रता केलिए ही नहीं, साहित्य द्वारा समाज में व्यक्ति स्वतंत्रता केलिए भी अनगिनत आंदोलन चल रहे हैं। सामाजिक अत्याचारों के प्रति साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के ज़रिए विद्रोह प्रकट किया। ज़माना आगे बढ़ने के साथ हमारे समाज में उगनेवाली ज्वलंत

---

1. डॉ. अशोक भाटिया समकालीन हिंदी कथा-साहित्य का इतिहास पृ. 13
2. डॉ. विश्वंभरनाथ उपाध्याय समकालीन सिद्धांत और साहित्य पृ. 18

समस्याओं के प्रति समकालीन साहित्यकार हमेशा सजग हो उठते हैं और पूरे यथार्थ के साथ जन-मानस तक पहुँचाने में वे प्रयत्न करते हैं।

इस संदर्भ में हम कैसे भूल सकते हैं प्रेमचंदजी को। उपन्यास व कहानी सम्राट प्रेमचंद का योगदान हिंदी साहित्य की सशक्त नींव है। भारत के किसानों, मज़दूरों, पीड़ितों, शोषितों, नारियों की जो-जो समस्याएँ उन्होंने अपने उपनयासों व कहानियों द्वारा संप्रेषित की वे हर समय केलिए प्रासंगिक हैं। बाद में आनेवाले लेखक भी इसी आदर्श को अपनाकर रचना करके काल-सीमा से बाहर अग्रसर होते जा रहे हैं।

समकालीन साहित्य की ज्वलंत समस्यएँ

समकालीन साहित्यकारों ने भारतीय समाज की ज्वलंत समस्याओं को अपनी रचना का विषय बना लिया है। इसके परिणामस्वरूप वे समाज की हर अमानवीय वृत्तियों के प्रति अपना सख्त विद्रोह जाहिर करते हुए हमेशा जनता के साथ देते रहते। समकालीन साहित्य आज के मानव को यथार्थ का सच्चा रूप दिखाने हरदम कोशिश कर रहा है। यह तर्क का विषय नहीं कि हमारे आगे-पीछे जो भी प्रतिकूल परिस्थिति हो, इसका सामना करने का साहस साहित्य देता है।

समकालीन साहित्य के बदलते परिदृश्य की पृष्ठभूमि पर विचार करें तो बढ़ते हुए आतंकवाद, भूमण्डलीकरण व बाज़ारवाद, उपभोक्तृवाद, आज़ादी से मोहभंग, दो-दो प्रधान मंत्रियों की हत्या, बाबरी-मस्जिद का उजाड़, कर्जदार कर्षकों की खुदकुशी, आवश्यक चीज़ों की दुर्लभता, चीज़ों की महँगाई, चुनाव के संदर्भ होनेवाली समस्याएँ, विभिन्न राजनैतिक दलों

की सरकारों की असफलताएँ और उनके छद्म, भ्रष्टाचार, दलाली, रिश्वतखोरी, नैतिक मूल्यों का पतन, सांप्रदायिक दंगे, धार्मिक कट्टरता का आधिक्य, अखबार, मीड़िया तथा जनसंचार माध्यमों का दुरुपयोग, राजनीति का अपराधीकरण, दलितों पर अत्याचार, नारी-वाद, नारी-संबंधी विभिन्न समस्याएँ, पारिवारिक विघटन, जातिवाद का आतंक आदि ऐसी परिस्थितियों ने समकालीन साहित्य की नींव डाली। समकालीन साहित्यकार विशेषतः उपन्यासकार व कहानीकार इन सारी समस्याओं पर खूब विश्लेषण करके अपनी रचनाओं की सृष्टि करते हैं।

समकालीन साहित्य के बदलते परिदृश्य की नींव पर खड़े होकर आज की ज्वलंत समस्याओं पर विचार करते समय यह भी अनिवार्य है कि समकालीन उपन्यास और कहानियों की तात्कालिकता पर सोच-विचार करना।

समकालीन हिन्दी उपन्यासों और कहानियों की तात्कालिकता

समकालीन हिंदी उपन्यासों और कहानियों में पहले की अपेक्षा ज़्यादातर परिवर्तन आया। यथार्थबोध ने अब कथासाहित्य को व्यावहारिक विचारधारा के उत्तुंग शिखर पर पहुँचाया। महिला-लेखन की एक अजस्र धारा पूरे साहित्य-जगत पर बह रही है। समकालीन कथा-साहित्य के पात्र अपनी परिस्थितियों से निरंतर जूझती रहती है, संघर्ष करके वे परिस्थितियों को बदलती है और अपने आपको भी। समकालीन कथा-साहित्य यह बात अत्यंत कलात्मक ढंग से वास्तविकता के धरातल पर प्रस्तुत करते हैं।

करीब सन् 1980 से शुरू होनेवाला समकालीन कथा-साहित्य सामाजिक यथार्थ का सच्चा चित्रण हमारे सामने प्रस्तुत कर जैत्र-यात्रा ज़ारी कर रहा है। समकालीन उपन्यास पर विचार करें तो पहले संजीव का नाम आते हैं। सन् 1981 में प्रकाशित पहला उपन्यास 'किसानगढ़ के अहेरी' सर्कस (1984), 'सावधान! नीचे आग है' (1986), 'धार' (1990), सन् 2000 में प्रकाशित 'पाँव तले की दूब' 'जंगल जहाँ शुरू होता है' आदि उपन्यासों में ग्रामीण जीवन के यथार्थ, झारखंड की जनजातियों का आंदोलन आदि देख सकते हैं। संजीव की प्रमुख कहानियाँ - 'तीन साल का सफरनामा' (1981), 'अपराध' 'तिरवेनी का तड़बन्ना', 'पिशाच' आदि है। सन् 1990 में प्रकाशित 'प्रेतमुक्ति' उनकी प्रतिनिधि कहानियों में एक है।

1982 में प्रकाशित 'पंकज विष्ट के उपन्यास' लेकिन दरवाज़े' में दिल्ली के समकालीन लेखक-समाज की ज़िन्दगी का दस्तावेज है। 1989 में प्रकाशित उनके 'उस चिड़िया का नाम' उपन्यास में पहाड़ी जीवन का यथार्थ चित्रण-पहाड़ी स्त्रियों की दयनीय स्थिति, पुरुष समाज द्वारा उनके शोषण, उनकी दयनीय मृत्यु का जीवंत चित्रण है। अब तक इनके दो कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं 'बच्चे गवाह नहीं हो सकते?' (1986) तथा 'टुण्ड्रा प्रदेश तथा अन्य कहानियाँ'। सामाजिक घटनाओं और स्थितियों के भीतरी सत्य को यथार्थाभास शैली में लिखित पंकज विष्ट की कहानियां आलोचनात्मक यथार्थवाद की कहानियाँ हैं।

अब्दुल बिस्मिल्लाह का उपन्यास 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' (1986) में बनारस के बुनकर समाज का प्रामाणिक दस्तावेज है। इस

उपन्यास द्वारा उन्होंने धार्मिक संकीर्णता और संप्रदायवाद का जमकर विरोध किया है। फिर 1990 में 'दन्तकथा' और 1996 में 'मुखड़ा क्या देखें' भी प्रकाशित हुआ। इनकी कहानियाँ अद्यतन कथा-प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करती हैं। इनकी कहानियों का मूलस्वर प्रगतिशील है। 'टूटा-हुआ पंख' (मोहभंग की कहानी), 'कितने-कितने सवाल' (1984) 'रैन बसेरा (1989), 'अतिथि देवो भवः' (1984) 'रफ़-रफ़ मेल' (2000) इनके कहानी-संग्रह है।

उदयप्रकाश समकालीन कहानीकार के रूप में जाने जाते हैं। 'दरियाई घोड़ा' 'तिरछि' (1989) तथा 'और अंत में प्रार्थना' (1994) आदि कहानी संग्रहों द्वारा "वे यथार्थ के पहले बिम्ब में ढ़ालते हैं, जो आगे चलकर वे प्रतीक बन जाते हैं और फिर मिथकों में तब्दील हो जाते हैं।"[1]

'कथा प्रस्थान' (1992), 'आज़ादी मुबारक' आदि कमलेश्वर की समकालीन कहानियाँ हैं।

गिरिराज किशोर की कहानियों 'जगततारनी तथा अन्य कहानियाँ (1981), 'गाना बड़े गुलाम अलीखाँ का' (1986), 'वल्द रोज़ी' (1989) तथा 'यह देश किसकी है' (1990) में सामाजिक सत्यान्वेषण की प्रवृत्ति प्रचुरमात्रा में देखी जा सकती हैं।

गोविंद मिश्र, जगदीश चतुर्वेदी, ज्ञानप्रकाश विवेक, ज्ञानरंजन, तारा पांचाल, दूधनाथ सिंह, धीरेन्द्र अस्थाना, पुन्नीसिंह, बटरोही, बलराम,

---

1. डॉ. अशोक भाटिया समकालीन हिंदी कहानी का इतिहास पृ. 48

भीष्म साहनी आदि कहानीकारों की रचनाओं में भी समकालीन प्रवृत्तियों का सजीव चित्रण देखा जाता है।

समकालीन कथा-साहित्य की महिला लेखिकाएँ प्रमुख धारा से मिलकर सशक्त होकर आगे बढ़ रही है। 'राजी सेठ' ने अपने उपन्यास 'तत्-सम' में आधुनिक नारी के पुनर्विवाह की समस्या को अत्यंत संवेदनात्मकता के साथ प्रस्तुत किया है। 'तीसरी हथेली' (1981) तथा 'यात्रा मुक्त' (1987) उनकी समकालीन कहानियाँ हैं, जिनमें पारिवारिक संबंधों और नारी समस्याओं पर विशेष बल दिया गया है।

नासिराशर्मा का पहला 'सात नदियाँ एक समुँदर' (1984) में आधुनिक ईरान की पृष्ठभूमि में आयत्तुल्ला खुमैनी की रक्तरंजित इस्लामिक क्रांति का मार्मिक चित्रण किया है। 'श्यामली' (1987) में आधुनिक परिस्थितियों में पति-पत्नी की समस्या व्यक्त की है। 'ठीकरे की माँगनी' (1989) में मुस्लीम समाज की कहानी और 1993 में प्रकाशित 'ज़िन्दा मुहावरे में भारत-विभाजन की त्रासदी का मार्मिक चित्रण है।

प्रभाखेतान की रचनाएँ नारी समस्याओं पर आधारित हैं। एक अमरीकी औरत के जीवन के भयानक सच को प्रस्तुत करनेवाला हिंदी का पहला उपन्यास है - 'आओ पेपे घर चलें' (1990)। इसके बाद 'तालाबंदी' (1991), 'छिन्नमस्ता' (1993) 'अपने अपने चेहरे' (1994), 'पीली आँधी' (1996) आदि उपन्यास भी प्रकाशित हो चुकी है।

मैत्रेयीपुष्पा अपनी साहित्यिक ज़िन्दगी का सफ़र 1990 में प्रकाशित 'स्मृतिदंश' नामक उपन्यास से शुरु हुआ। उनका दूसरा लघु उपन्यास है

'बेतवा बहती रही' (1993)। उपन्यासकार के रूप में उनकी पहली पहचान 'इदन्नमम' (1994) द्वारा हुई। इसके बाद 'चाक' (1997), 'झूलानट' (1999), 'अलमा-कबूतरी' (2000), 'विज़न' (2000), 'कस्तूरी कुंडल बसै' (2002), 'कही ईसुरी फाग' (2004), आदि का भी प्रकाशन हुआ। 'चिह्नार' 'ललमनियाँ' 'गोमा हँसती है' नामक तीन कहानी-संग्रह भी इनकी है।

इन लेखिकाओं के अलावा कृष्णा अग्निहोत्री, चित्रा मुद्गल, दीप्ति खण्डेलवाल, नमिता सिंह, मंजुल भगत, मणिका मोहिनी, ममता कालिया, मालती जोशी, मृणाल पाण्डेय, मृदुला गर्ग, गीतांजली श्री, अलका सरावगी आदि लेखिकाएँ समकालीन उपन्यास व कहानी के क्षेत्र में अपना-अपना व्यक्तित्व एवं कृतित्व का गहरा छाप डाला है।

समकालीन कथा-साहित्य की प्रवृत्तियाँ

समकालीन कथा-साहित्य की प्रवृत्तियों में प्रमुखतः भूमण्डलीकरण व बाज़ारीकरण, सांप्रदायिकता, राजनीति, इतिहास और मिथक, आँचलिकता, सामाजिक रिश्ते-नाते का नया स्वरूप, दलित-जीवन, फेमिनिसम आदि मुख्य हैं।

भूमण्डलीकरण अथवा बाजारवाद

भूमण्डलीकरण या भूमण्डलीय समरूपीकरण / विख्यायन / जगतीकरण / वैश्वीकरण (ग्लोबलाइज़ेशन) का पहला और प्रथम अर्थ है 'एक विश्व-अर्थतंत्र और विश्व बाज़ार का निर्माण जिससे प्रत्येक राष्ट्र की

अर्थव्यवस्था को अनिवार्य तौर से जुड़ना होगा। पहले 'गैट' (जनरल एग्रीमेंट ऑन टैरिफ़ एंड ट्रेइड) के द्वारा यह प्रक्रिया चलायी जा रही थी, अब इसकी जगह 'विश्व व्यापार संगठन' (WTO) ने ले ली है। दूसरा मदलब है कि दुनिया की राजनीति को इसी अर्थतंत्र और बाज़ार की ज़रूरतों के हिसाब से संचालित करने की परियोजना। तीसरा मतलब है कंप्यूटर, इंटरनेट और संचार के अन्य आधुनिकतम साधनों के ज़रिए दुनिया में राष्ट्रों, समुदायों, संस्कृतियों और व्यक्तियों के बीच फासलों का कम से कमतर होते जाना। चौथा मतलब है उपग्रहीय टेलिविज़न की मदद से एक भूमण्डलीय संस्कृति की रचना करना।

"भूमण्डलीकरण के रूप में आधुनिकीकरण या बाज़ारीकरण की प्रक्रिया अपने चरम पर पहुँच गयी है और सारा जगत एक ही साँचे में ढ़ाल जाएगा। 'वसुधैव कुटुंबकम' के साथ साथ भूमण्डलीकण के विचार को संदेह की दृष्टि से देखा जा सकता है समझा जाता है इसके तहत दुनिया भर एक नई सत्ता व्यवस्था थोपी जा ही है।"[1]

भारत का भूमण्डलीकरण

24 आगस्त 1991 को श्री नरसिंहराव सरकार द्वारा संसद में एक नया केंद्रीय बजट पेश किया गया - यहीं से भारत के ग्लोबलाइजेशन यानी भूमण्डलीकरण की शुरुआत थी। भूमण्डलीकरण ने गाँव की जगह शहर और नागरिक की जगह उपभोक्ता की सत्ता को अंतिम तौर पर स्थापित

---

1. सं. अभयकुमार दुबे भारतीय भूमण्डलीकरण पृ. 439, 440

किया। यह "इतनी व्यापक थी कि जीवन का कोई भी क्षेत्र इससे अछूता नहीं सका-भारत के पुराने राष्ट्रवादी पूँजीपतियों से लेकर सूचना-प्रौद्योगिकी के व्यवसाय से बने उद्योगपतियों तक, पब्लिक सेक्टर की चौधराहट के तले पनपे नौकरशाहों और सत्तारूढ़ रहने की आदत डाल चुके राजनेताओं से लेकर विपक्ष और अरहमति की राजनीति में रचे-बसे राजनीतिक दलों और जनपक्षीय आंदोलनकारियों तक, पिछडी जातियों, महिलाओं, शहरी-गरीबों और दलितों के हितों में सोचनेवालों से लेकर मार्क्सवादियाँ, नक्सलवादियों पर्यावरणवादियों तक को इस पक्ष-विपक्ष में राय बनानी पड़ी।"[1]

भूमण्डलीकरण के आज के दौरे ने विज्ञान और परिस्थितियों में रहनेवाले आदमी-आदमी के बीच की दूरियाँ कम कर दी है। मीड़िया एक शक्ति के रूप में उभरा है, 'मैटिरियलिज़्म' चरम पर है। भौतिक अस्तित्व की गुणात्मकता बढ़ाने केलिए भ्रष्टाचार चरम पर है। उपलब्धि-सुख पाने केलिए कर्म और पुरुषार्थ के मार्ग पर कोई चलना ही नहीं चाहता। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आगमन से देश-देश कम बाज़ार ज़्यादा दीखने लगा है।

"जीवन की महत्ता और मूल्यों को वस्तुओं की संख्या में बदल दे, जिससे ज़िन्दगी एक बाज़ार जैसी लगने लगी।"[2]

'बाज़ारवाद' में बाज़ार का मतलब सिर्फ खरीदने-बेचने की जगह नहीं बल्कि एक व्यापक-तंत्र व्यवस्था और विचारधारा होता है। यहाँ

---

1. सं. अभयकुमार दुबे भारतीय भूमण्डलीकरण पृ. 22, 23
2. साहित्य और बाज़ार मधुमति जनवरी-फरवरी 2001 पृ. 47

'बाज़ार' से अभिप्राय भूमण्डलीकरण से जुड़ी तमाम आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, तकनीकी और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं से होता है। "नए पूँजीवाद अर्थात् भूमण्डलीकरण की तमाम प्रक्रियाओं और चिह्नों को एक साथ बनाने केलिए 'बाज़ार' का प्रयोग होता है।"[1]

भूमण्डलीकरण के कारण भारत जैसे विकसनोन्मुख लोकतंत्र राष्ट्र की सामाजिक सुरक्षा दिन व दिन बिगड़ रही है। सुरक्षा देनेवाला वेतन, एक स्थिर जीवनोपाधि, संतुष्ट और शांत ज़िन्दगी सब भारतियों के स्वप्न बन रहे हैं। आप के आर्थिक विकास और सामाजिक व्यवथा अत्यंत संकीर्ण बन गए हैं। विकसित राष्ट्रों से यहाँ आनेवाले बहु-राष्ट्र कंपनियाँ मानव ताकत पूर्णतः छोड़कर तकनीकी द्वारा उत्पादन दुगुना बन जाए तो समाज की सारी चेतना जड़ होती जा रही है।

तीसरे जगत में भूमण्डलीकरण द्वारा होनेवाले आर्थिक अस्वतंत्रता, प्रजातंत्र-निषेध या मानवाधिकार निषेध तक पहुँचती है। IMF, World Bank, G-7, फोरम आदि आजकल प्रजातांत्रिक विरुद्ध संस्थाओं के नाम से जाने जाते है। अपनी सत्ता वापस लाने केलिए, हमेशा केलिए कायम रहने केलिए प्रतिक्रिया की रास्ता अपनाना अनिवार्य है।

'There is no alternation' (TINA) - भूमण्डलीकरण का कोई जवाब नहीं यही इसके वक्ताओं का नारा है। लेकिन आज दुनिया-भर इसके प्रतिक्रिया-स्वरूप संस्थाएँ व्याप्त होती जा रही है। आज की जनता

---

1. हंस अक्तूबर 2008 बाज़ार और संस्कृति पृ. 102

व्यक्त करती हैं भूमण्डलीकरण या बाज़ारवाद की समाप्ति केलिए ज़रूर रास्ता है There is people's alternative (TIPA) अमेरिका के कृषि-क्षेत्र में, भारत के गाँवों में, एशिया, आफ्रिका, लैटिन अमेरिका में पुराने स्वतंत्रता-आंदोलन की याद दिलानेवाली आंदोलन बढ़ती जा रही है। आगे भी एक नहीं अनेक गाँधियों के जन्म की हम प्रतीक्षा करें।

समकालीन हिंदी कथा साहित्य में भूमण्डलीकरण अथवा बाज़ारवाद

यथार्थ की ओर आँखें मूँदना समकालीन साहित्यकारों की प्रवृत्ति नहीं। भूमण्डलीकरण जैसे ज्वलंत समस्या के विरुद्ध वे कलमरूपी तलवार लेकर रण-क्षेत्र में उछल पड़े। समकालीन साहित्य की सारी ज्वलंत समस्याएँ-नारीशोषण, पारिस्थितिक शोषण, दलित शोषण, सांप्रदायिकता, राजनीतिकशोषण, सामाजिक-सांस्कृतिक शोषण, पारिवारिक विघटन सब भूमण्डलीकरण का परिणाम है, इस पर कोई शक नहीं।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'चाक' 'इदन्नमम' 'अल्मा कबूतरी' आदि भूमण्डलीकरण ने जिसप्रकार जनता के दिल और दिमाग को फँसा लिया है इसकेलिए अच्छे उदाहरण हैं। 'चाक' में अतरपुर के बनिया द्वारा मैत्रेीजी ने व्यक्त किया कि जिसप्रकार बहुराष्ट्र कंपनियों अनो उत्पादनों को बिक रही है, यहाँ मेवा बनिया केवल एक व्यक्ति नहीं उपनिवेश है। 'इदन्नमम' में क्रैशरों के 'बिसिनस' द्वारा गाँववाले कितने शोषित हैं इसका आविष्कार लेखिका ने किया है। 'अल्मा कबूतरी' मे अशिक्षित अज्ञान दलित वर्गों के द्वारा सभ्य समाज किसप्रकार अपराध कराते हैं इसका चित्रण लेखिका ने अलग ढंग से की है।

घर के बाहर हमारे चारों ओर किसी न किसी चीज़ या संस्था का विज्ञापन ही विज्ञापन है। केवल सेनिमा, सीरियल, अभिनेताओं, राजनीतिक नेताओं ही नहीं किसान, मज़दूर, पुलिस, डाक्टर, इंजिनियर, अध्यापक, ड्राइवर इसप्रकार समाज के हर क्षेत्र में काम करनेवाले भी विज्ञापन में आकर सभीप्रकार के लोगों के मन में उत्पन्न कर आवश्यकताबोध जगाते हैं। विज्ञापन से होकर नर-नारी बच्चे सब अपने आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, पारिस्थितिक स्थिति भूलकर उस उत्पन्न को कब्जे में पाने केलिए भागते हैं और बैंक से लाँन लेकर, कहीं से कर्ज लेकर उसे अपनाते हैं। आम आदमी को भ्रम में डालने केलिए बहुराष्ट्र कंपनियाँ प्रतियोगिता में भाग लेती है। तकनीकी बाज़ारवाद जीवन की सुविधाएँ बढ़ाकर मानव को आलसी बना देता है। लोगों के मन बहलाकर विज्ञापन की ओर आकर्षित कर उत्पन्न केलिए ज़्यादा खर्च करना बाज़ारवाद का टिकाना है। इसका साक्षात् चित्रण श्री विनोद कुमार शुक्ल के "नौकर की कमीज़" में पाया जाता है।

आज के भूमण्डलीकरण के युग में भारतीय संस्कृति की मूल्यच्युति का उत्तमोदाहरण है प्रियंवद का 'परछाई नाव'। अब देश में पेयजल की नई-नई कंपनियाँ स्थापित होती जा रही हैं। साम्राज्यवाद से प्रेरणा पाकर देश की संस्कृति, धर्म, दर्शन जैसे मूल्यवान तत्वों को बेईमानी ढंग से उपयोग कर रहा है।

'इदन्नमम' में मैत्रेयीजी ने क्रेशर ठेकेदारों द्वारा गाँव की खेती के नुकसान का मार्मिक चित्रण किया है। भूमण्डलीकरण के द्वारा विकास के

नाम पर निम्नवर्ग की जनता को अपनी कृषि-भूमि, पैतृक भूमि नष्ट होती जा रहा है।

आजकल मीड़िया, टी.वी, कंप्यूटर, इंटरनेट, मोबैल नेटवर्क आदि आज की युवापीढ़ि को धर्मच्युति की ओर ले जाते हैं। चक्रव्यूह में फँसनेवाले अभिमन्यु की तरह भूमण्डलीकरण के चक्रव्यूह में फँसकर हमारे भारत की भविष्य-प्रतीक्षा आज की युवा पीढ़ी नशे में डूबकर, गुंडा बनकर, विदेशी संस्कृति अपनाकर हमेशा केलिए नाश की ओर जा रही है। उदयप्रकाश के 'पीली छतरीवाली लड़की' इसका सूक्ष्मोदाहरण है। युवा लोगों के मन से दया, सहानुभूति, स्नेह आदि विकार नष्ट करके बदले हत्या करने की प्रेरणा, क्रूरता आदि भरना बाज़ारीकरण का लक्ष्य लगता है।

आज के लोग अपनी आर्थिक स्थिति भूलकर परिस्थिति को नाश करके, वातावरण को प्रदूषित कर नये-नये इमारतें बनाते हैं। प्रकृति और संस्कृति की सुरक्षा उनके मन से अस्त हो गयी है। वीरेंद्र जैन का 'डूब' इसी दृष्टि से उल्लेखनीय है। विदेशी संस्कृति को अपनाकर अपनी संस्कृत को बिगड़नेवाले भारतीयों की कथा श्री रवीन्द्रवर्मा ने 'निन्यानब्बे' में स्पष्ट किया है।

समकालीन उपन्यास मात्र नहीं समकालीन कहानियाँ भी भूमण्डलीकरण के दस्तावेज बनकर हमारे सामने हैं। रमेचन्द्रशाह की 'कहानी' नामक कहानी पढ़कर हमें लगता है आज के व्यक्ति को पग-पग पर यह अहसास होता है कि बाज़ारीकरण की इस दुनिया में सबसे बड़ी बात पैसा है, पोज़ीशन है, बाकी सब ढ़कोसला है।

राकेश वत्स की कहानी 'छुट्टी का एक दिन' भी भूमण्डलीकरण का एक प्रमाण पत्र है।

बाज़ारीकरण का एक भयानक परिणाम है 'बेरोजगारी'। समकालीन हिंदी कहानी में इस समस्या का सूक्ष्म चित्रण हुआ है। गंभीरसिंह पालनी की 'मेंढ़क' शेहर जोशी की 'मेरा पहाड़' मंजुल भगत की 'नालायक बहु', गिरिराज किशोर की 'वल्दजोशी' आदि इसका उदाहरण है।

शहरी संस्कार में नारी की स्थानच्युति मैत्रेयी पुष्पा की कहानी 'अपना अपना आकाश' में देख सकते हैं। उनकी 'बेटी' नामक कहानी में पारिवारिक शोषण देखते हैं। मृणाल पाण्डेय की 'कगार पर' में भारतीय और पाश्चात्य संस्कृति में पनपे पति-पत्नी की विफ़ल प्रेम-संबंधों का वर्णन है। उदय प्रकाश के 'पालगोमरा का स्कूटर', वारणहेस्टिंगय का सांड भी इसके उदाहरण है।

इसप्रकार भूमण्डलीकरण अथवा बाज़ारीकरण का असर मानव जीवन में विशेषतः भारतीय जीवन में कितने हद तक है, इसका स्पष्टीकरण करने में समकालीन कथासाहित्य सक्षम सिद्ध होता है। भूमण्डलीकरण के विरुद्ध प्रत्येक व्यक्ति कार्यरत होने का समय अब ही बीत गया है, इसका दायित्व केवल साहित्यकारों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर भूमण्डलीकरण के खिलाफ़ हथियार लेना हमारा कर्तव्य है।

सांप्रदायिकता

भारत कई धर्मों, जातियों और संस्कृतियों का देश है साथ ही साथ भारतीय संविधान के अनुसार यह एक 'धर्मनिरपेक्ष' राष्ट्र है। 'धर्मनिरपेक्षता'

का सीधा-सा अर्थ यह है कि प्रशासनिक व्यवस्था में किसी भी धर्म का कोई स्थान न हो और धर्म उससे माननेवालों की व्यक्तिगत सीमा से आगे न बढ़े। लेकिन 'धर्मनिरपेक्षता' को एक जीवन-दर्शन के रूप में हमारे जीवन में स्वीकार करने को हम असफल रहे।

धर्म और संप्रदाय का सीधा संबंध है। 'सम्यक प्रदीयत्त इति' 'संप्रदाय' के अनुसार गुरु-परंपरा से जो सम्यक रूप से मंत्र, आराध्य, उपासना एवं आचार-पद्धति प्रदान करता है, उसका नाम 'संप्रदाय' है। संप्रदाय की परिभाषा के संदर्भ में बौद्ध, जैन, पारसी, यहूदी, ईसाई, इस्लाम एवं सिख संप्रदाय हैं न कि धर्म के सत्य, अहिंसा, अस्तेय, इंद्रिय-निग्रह एवं पवित्रता रूपी सनातना सिद्धान्तों पर आधारित है।"[1]

लेकिन आज सांप्रदायिकता माने धर्म के नाम पर परस्पर विद्रोह करना, हत्या करना है। भारत के महानुभावों ने कबीर, श्रीरामकृष्ण परमहंस, स्वामि विवेकानंद, श्रीनारायणगुरु, गाँधीजी आदि धर्म के नाम पर व्याप्त अनैतिकता समाप्त करने केलिए खूब प्रयत्न किया। लेकिन आज भी सांप्रदायिकता की आग राजनीति रूपी तूफ़ान के कारण हमारे भारत को निगल रही है। हिंदु-मुसलमान एकता केलिए सांप्रदायिकता अंत करने केलिए भारत के हर नागरिक को कार्यरत होना चाहिए। आज धर्म का सबसे महान उद्देश्य हो गया है अपने अनुयायी को वर्ग-संघर्ष से भटकाना।

---

1. जगदीश नारायण श्रीवास्तव उपन्यास की शर्त पृ. 220

सांप्रदायिकता विचारधारा रूपी खतरनाक रोग के कारण सामाजिक वातावरण में इस रोग के विषैली कीटाणु व्याप्त होने के कारण हमारा देश विषमय बन गया है। इसके गर्भ से नस्लवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद की भावनाएँ विकसित होने लगती हैं। पंजाब इसकी ताज़ा मिसाल है। हिंदु-मुस्लीम दौरे के जैसे कालांतर में 'हिंदु-सिख दौरे का भयानक दृश्य भी हमने देखा।

भारत धर्म, सभ्यता और संस्कृति का पर्याय माना जाता है। धर्म और संस्कृति के मेल-मिलाव के कारण हमारा देश दूसरे देशों के आगे हैं। इसी धर्म और संस्कृति की एकता ही भारत की पहचान है। सन् 1947 में हुआ भारत-पाक विभाजन से यह एकता मिट्टी में मिल गयी। इस विभाजन ने ही आधुनिक भारत की सांप्रदायिकता की नींव डाली। जन-मानस में सांप्रदायिकता समाप्त करने केलिए सद्भावना और सौहार्द की भावना बढ़ाने केलिए भारतीय साहित्यकारों का प्रयास इतिहासकाल से शुरु होकर आज भी ज़ारी रहा है।

समकालीन हिंदी कथा साहित्य में सांप्रदायिकता

भारतीय कथा-साहित्य में जातीय-एकता का पहला प्रयास प्रेमचंदजी ने 1909 में प्रकाशित अपना उर्दु कथा-संग्रह 'सोज़ेवतन' से प्रारंभ किया। समकालीन कथा-साहित्यकार भी 'सांप्रदायिकता' अपनी रचनाओं में एक विशेष प्रवृत्ति मानकर उसके प्रति अपना विद्रोह प्रकट करते हैं।

सदी के अंतिम दशक में श्री अमृतलाल नागर कृत 'सिंधु पुत्र' (1991), दीपचंद्र निर्मोही कृत 'और कितने अंधेरे' (1995) हरदर्शन

सगगल कृत 'टूटी हुई ज़मीन' (1996), द्रोणवीर कोहली कृत' वह कैंप (1998), प्रताप सहगल कृत 'अनहदनाद' (1999) आदि उपन्यासों में देश-विभाजन की त्रासदी और सांप्रदायिक दंगों से बचकर आए शरणार्थी परिवारों की कथा कही गयी है। अब्दुल बिस्मिल्लाह के 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' (1986) में मुस्लिम समाज के उस वर्ग-बनारस के बुनकर समाज का चित्रण किया गया है जिनकी मुख्य समस्या जीवनयापन का है। उनकी कहानी 'अतिथि देवो भवः' सांप्रदायिकता के विद्रोह प्रकट करनेवाली सशक्त कहानी है। "कमलेश्वर के 'कितने पाकिस्तान' (2000) में भी एक सांप्रदायिक विरोधी विज़न है जो धर्म, राजनीति, क्षेत्रीय महत्वकांक्षा, भौतिक सुखों की होड़, प्रजातीय और बौद्धिक अहंकार आदि के तहत देश, दुनिया और मानवता को बाँटने, एक दूसरे से अलग और लहुलुहान करने की दानवी प्रवृत्ति के अंकन और उसके प्रतिरोध से युक्त है।"[1]

समकालीन हिंदी कथा-साहित्य के महिला उपन्यासकारों में नासिराशर्मा दूसरों से अलग खड़ी है, क्योंकि उनके ज़्यादातर उपन्यासों का परिवेश मुस्लिम समाज से जुड़ा है। प्रगतिशील विचारों की लेखिका नासिा शर्माजी मनुष्य को धर्म-संप्रदाय के ऊप मानती है। 1984 में प्रकाशित उनका पहला उपन्यास 'सात नदियाँ एक समंदर' में आयत्तुल्ला खुमैनी की रक्तरंजित इस्लामिक क्रांति का प्रस्फुटीकरण है। उनकी उपन्यास 'ज़िंदा मुहावरे' भारत विभाजन की त्रासदी पर आधारित है। उनकी 'ठीकरे की मँगनी' (1989) में मुस्लिम परिवारों की अंदरूनी ज़िंदगी और सामाजिक समस्याओं का चित्रण है।

---

1. गोपालराय हिंदी उपन्यास का इतिहास पृ. 438

चित्रा मुद्गल ने अपनी कहानी 'रूना आ रही है' में सांप्रदायिक संकीर्णता संबंधों को तोड़ने का कारण बनती है। सांप्रदायिक दंगे को पूँजीवादी चरित्र के सहारे स्पष्ट करने में नमिता सिंह की चर्चित कहानी 'राजा का चौक' सफ़लता पाई है।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'इदन्नमम' और 'अल्मा कबूतरी' में सांप्रदायिकता के बुरेप्रभाव का जीवंत चित्रण देख सकते हैं।

सांप्रदायिकता के विविध आयामों को उभरनेवाली महत्वपूर्ण कहानियों में नमिता सिंह ('रक्षक' 'कफ्र्यू', 'सांड') गीतांजलीश्री ('बेलपत्र'), पंकज विष्ट ('नरो वा कुंजरो वा') बदीउज्जमाँ ('परदेशी') आदि की कहानियाँ प्रमुख है। उदयप्रकाश की 'और अंत में प्रार्थना', शिवमूर्ति कृत 'त्रिशूल', महेश दर्पण द्वारा चरित्र 'चेहरे' तथा रवींद्र वर्मा की कहानी 'मैं ईंट नहीं हूँ' आदि कहानियों में सांप्रदायिकता के प्रति विद्रोह की सीमा आक्रामकता तक पहुँचने का दृश्य दिखाई देते हैं।

इसप्रकार समकालीन कथासाहित्य की तत्कालीन प्रवृत्तियों में 'सांप्रदायिकता' को प्रमुख स्थान है। सांप्रदायिकता के बदले सौहार्द, सद्भावना और सदाशयता बढ़ाने केलिए भीष्मसाहनी, ('झुटपुटा'), कमलेश्वर (सोलह छतों का घर'), शिवसागर मिश्र ('अकेला आदमी'), रजिया सज्जाद जहीर ('नामक'), महीप सिंह ('दिल्ली कहाँ है'), नमिता सिंह, नासिरा शर्मा ('पाँचवाँ बेटा') आदि का प्रयास प्रशंसनीय है।

राजनीति

राजनीति मानव जीवन में इतनी घुलमिल गयी कि उसके अतिरेक से न समाज बच सकता है, न व्यक्ति और न साहित्य। स्वतंत्रता संग्राम के समय राजनीति देश-प्रेम का पर्याय मानी गयी, लेकिन स्वतंत्र-भारत में राजनीति पशु-तुल्य भोगों की लिप्सा और भौतिक सुखों के तृष्णा का क्षेत्र बन गई। आज गणतंत्र भारत चोरबाज़ारी और भ्रष्टाचार का साम्राज्य बन गया। आज की युवा-पीढ़ियों को दिशाहीन बनाकर विध्वंसात्मक मार्ग की ओर ले जाने का कार्य भी राजनीति करती है।

भारत के अधकांश नागरिक अपने दायित्व-बोध भूलकर, अपने अस्तित्व बोध भूलकर राजनीति के मिथ्या-जगत में घूम रहे हैं। वर्तमान राजनीति ने आदमी के सामाजिक एवं पारिवारिक संबंधों को बुरी तरह प्रभावित किया है। जनसाधारण को अपने पक्ष में लाने केलिए चुनाव के संदर्भ में पैसा पानी की तरह बहाया जाता है। अपनी स्वार्थ सिद्धि केलिए निरपराध लोगों को शहीद बनाकर अपराधियों को शरण दी जाती हैं। यदि भारतीय राजनीति का उद्देश्य हिंदुस्तान में लोकतंत्र सामाजिक न्याय और धर्मनिरपेक्षता को मज़बूत बनाना है तो यह कहना पड़ेगा कि इन लक्ष्यों की पूर्ति में हमारे राजनीतिक दल पूरी तरह विफ़ल रहे हैं। "यदि लोकतंत्र का अर्थ है शासन चलाने में लोगों की भागीदारी तो हमारा लोकतंत्र अत्यंत रोगग्रस्त है।"[1]

---

1. जगदीश नारायण श्रीवास्तव उपन्यास की शर्त पृ. 262

भारत की राजनीति में भ्रष्टाचार ही भ्रष्टाचार व्याप्त है। राजनीति पर कानून का नियंत्रण कम हो जाने के कारण यहाँ साधारण लोगों को न्याय नहीं मिलेगा। विभिन्न पार्टियों के नाम पर लोग कानून अपने हाथ में लेते हैं। यही कारण है कि आज देश के हर एक कोने में सांप्रदायिक दंगे, मारकाट, लूट-पाट, हिंसा आदि साधारण घटनाएँ बन गए हैं।

वस्तुतः राजनीति दो प्रकार की होती हैं 'परिवर्तन की राजनीति' और दूसरी 'सौदे की राजनीति'। परिवर्तन की राजनीति पूरे देश को आगे बढ़ाने की चेष्टा करती है तो सौदे की राजनीति का लक्ष्य शक्ति की प्राप्ति है। इसकेलिए वर्गों, जातियों संप्रदायों और धर्मों से सौदेवाजियाँ होती है और पूँजीवाद, आंतरिक कलह, आतंकवाद आदि बढ़ते जा रहे हैं। दुर्भाग्यवश हमारे भारत की राजनीति यही बन रही है।

वास्तव में स्वातंत्र्योत्तर काल में भारतीय समाज में आया हुआ सबसे बडा परिवर्तन कुर्सी के प्रति बढ़ता हुआ मोह है। गाँधीजी का स्वप्न यह था कि आज़ाद भारत में शासक अपने आपको जनता का सेवक समझें और जनता को अपना स्वामी। किंतु आज भारत के शासक लोग चुनाव के समय झूठे-मूठे वायदे करके खोखली हँसी भरे मुख से हाथ जोड़कर जनता के सामने आते हैं। हर पाँच वर्ष के बाद वे यही करते हैं और पैसे के बल से वोट पकड़ते हैं। बिलासिता की कोई भी वस्तु इनकेलिए दुर्लभ न थी। शासित गरीब से गरीब होते गए और शासक अमीर से अमीर। भ्रष्टाचार से भरी इस राजनीति का रास्ता छोडकर गाँधीजी के स्वप्न की राजनीति को सत्ता में लाना हर एक भारतीय का कर्त्तव्य है।

हमारे साहित्यकार अपनी रचनाओं द्वारा आज की राजनीति के प्रति अपने विद्रोह प्रकट करते हैं। समकालीन हिंदी कथा-साहित्यकार भी इससे भिन्न नहीं है। वे आज की युवा-पीढ़ी को भ्रष्टाचार मुक्त राजनीति की ओर ले जाने का पूरा प्रयास कर रहे हैं।

समकालीन हिंदी उपन्यास में राजनीति

समकालीन हिन्दी उपन्यासकारों ने अपनी रचनाओं द्वारा समसामयिक राजनीति के दुष्प्रभाव और उससे मुक्त होकर यथार्थ राजनीति के स्वरूप को दिखाने की कोशिश की है।

संजीवजी ने अपने बहुचर्चित उपन्यास 'जंगल जहाँ शुरु होता है' में देश में राजनीति के अपराधीकरण और अपराध के राजनीतिकरण की बढ़ती प्रवृत्तियाँ सच्चे अनुभव के रूप में वर्णित किया है। समकालीन राजनीति के क्रूर मुख का वर्णन श्री राजकृष्ण मिश्र ने अपने उपन्यास 'दारुल सफ़ा' में वर्णित किया है। उपन्यासकार ने इस उपन्यास द्वारा यह व्यक्त किया कि सत्ता पर अधिकार जमाने केलिए की जानेवाली क्रूर और घृणित जोड़-तोड़ की प्रवृत्ति और राजनीतिज्ञ अपने स्वार्थ केलिए करनेवाले तस्करी, रिश्वत, नारी-शरीर, चित्रित-हनन, अपहरण, हत्य आदि। श्रीमती चंद्रकांता के उपन्यास 'ऐलान गली ज़िन्दा है' में जीविका की खोज में ऐलान गली से पलायन करनेवाले युवापीढ़ी की कहानी है साथ-साथ गली की राजनीतिक विशेषताओं का खूब चित्रण भी किया गया है।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'चाक' 'इदन्नमम' 'अलमाकबूतरी' में राजनीति के भ्रष्टाचार और समाज में राजनीति के कुप्रभाव का यथार्थ

चित्रण मिल गया है। वीरेंद्र जैन के 'डूब' विजय के उपन्यास 'साकेत के युक्लिप्टस' 'सीमेंट नगर' स्वयंप्रकाश के 'बीच में विनय' अलका सरावगी का 'कलिकथा वाया बाइपास' चित्रा मुद्गल का 'आवाँ' मृदुला गर्ग का 'कठगुलाब' आदि ज़्यादातर समकालीन उपन्यासकारों के प्रमुख उपन्यासों में राजनीति एक पृष्ठभूमि जैसे दीख पड़ती है।

समकालीन साहित्य में केवल उपन्यास द्वारा ही नहीं कहानियों द्वारा ही साहित्यकारों ने आज की राजनीति का यथार्थ चित्रण किया है। कमलेश्वर की 'रातें' राजनीतिक परिवेश में रची गई कहानी है। 'एक पैरवनाला शेर' नामक कहानी मेनमितासिंह ने देश की वर्तमान चुनाव व्यवस्था के घृणित स्वरूप तथा राजनीतिज्ञों की अमानवीय वृत्तियाँ उजागर की है। भीष्मसाहनी के 'वाङ्यू' में एक बुद्ध भिक्षु को केंद्र में रखकर राजनीतिक अंतर्विरोधों की पड़ताल की गई है। 'प्रतिदिन' कहानी संग्रह के 'लड़के' कहानी में श्रीमती ममता कालिया ने राजनीतिक-धार्मिक पाखण्डों पर व्यंग्य किया है। महीप सिंह ने कहानी 'एक प्रभावशाली व्यक्ति' और 'चार मुर्गो की कहानी' में आपातकाल का विवेचन किया हैं और उन्होंने में आपातकाल का विवेचन किया हैं और उन्होंने 'एक गुंडे का समयबोध' द्वारा राजनीति के क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा गुण्डागिरी पर प्रकाश डाला है। मैत्रेयी पुष्पा की कहानियाँ 'प्रेम भाई आण्ड पार्टी' 'फैसला' आदि राजनीति के कुप्रभाव व्यक्त करने में सफ़ल बन पड़ी है।

'राजनीति' माने 'राज्य केलिए नीति' इस दुनिया के सबसे बडे गणतंत्र देश भारत केलिए एक लिखित संविधान है, एक प्रजातंत्र राजनीति भी है। एक हद तक भारत की सुरक्षा केलिए, दूसरे देशों के सामने कायम

रहने केलिए हमने अपनी राजनीति में पानी डाला। लेकिन इन सबसे परे भारतीय जनता की भलाई केलिए गठित राजनीति की सुविधाएँ निम्नस्तर तक नहीं आती हैं। समाज के उच्चवर्ग, शासकवर्ग और अमीर लोगों तक सीमित है राजनीति। इसका दुष्प्रभाव ही हम भोगते हैं, इसके विरुद्ध आजके साहित्यकार सक्रिय रहे हैं।

इतिहास और मिथक

हमें लगता है 'इतिहास और मिथक' यथार्थ ज़िन्दगी से दूर रहे हैं, लेकिन तत्कालीन जीवन से व साहित्य से पृथक नहीं है। बीती हुई घटनाओं को भूलकर जीना असंभव है। उससे ही प्रेरणा पाकर, संदेश या पाठ अपनाकर आज हम जीते हैं। इसलिए समकालीन साहित्य में इतिहास और मिथक का सही इस्तेमाल किया गया है। "अतीतकालीन घटनाओं का वस्तुपरक या आत्मपरक इतिवृत्तात्मक और क्रमबद्ध एवं निरुपण इतिहास की संज्ञा प्राप्त करता रहा है। वर्तमान दूसरे ही क्षण भूत हो जाता है। इसलिए वर्तमान में घटित घटनाओं का इतिहास भी लिखा जाना संभव है।"[1]

"मिथक आदिम समाज में एक अपरिहार्य आवश्यकता की पूर्ति करता है यह विश्वासों की अभिव्यक्ति करता है, बढ़ावा देता है, कूटबद्ध करता है, वह नैतिकता को प्रोत्साहित करता है, अनुष्ठानों की कुशलता या निपुणता केलिए साक्ष्य होता है तथा मनुष्य के दिशा-निदर्शन केलिए व्यावहारिक नियमों को धारण करता है।"[2]

---

1. डॉ. अशोक भाटिया समकालीन हिंदी कहानी का इतिहास पृ. 18
2. मालतीसिंह मिथक-एक अनुशीलन - पृ. 27

अर्थ की दृष्टि से देखें तो मिथक इतिहास का विरोधी है। इतिहास-बीती हुई घटनाओं का दस्तावेज हैं। इसमें काल्पनिकता नहीं होती। लेकिन मिथक का सीधा-संबंध जीवन यथार्थ से न होकर चमत्कारिकता से है। मिथकीय विचार मानव-विचार में जन्म होते कल्पनाओं और अनुष्ठानों से संबंधित है। मिथक और इतिहास एक सिक्के के दो भाग होने पर भी मानव-सभ्यता के इतिहास में बहुत दूर तक इतिहास तथा मिथक मिलकर चलते रहे हैं तथा एक दूसरों को प्रभावित करते हैं।

हिंदी के समकालीन कथा-साहित्य में मिथकीय संदर्भ तथा ऐतिहासिक संदर्भ

"समाज के बिखराव, उदासीनता, अनाचार पर अनुशासन की डोर थामनेवाले मिथक किसी भी युग में साहित्य केलिए अप्रासंगिक नहीं रहे हैं।"[1] आदिकाल से अब तक हिंदी साहित्य का कोई भी कालखण्ड मिथकीय अवचेतना से दूर नहीं रहा। रासो-काव्य ग्रन्थों में, सूर, कबीर, तुलसी के ग्रन्थों में, रीतिकालीन ग्रन्थों में तथा काफ़ी परिवर्तन पाकर आधुनिक समकालीन रचनाओं में घटनाओं के प्रभाव केलिए मिथकीय संदर्भों का प्रयोग ज़रूरी किया जाता है।

भारतीय संस्कृति में मिथकीय साहित्य मूलतः पूज्य भावनाओं से ओतप्रोत है। समकालीन साहित्य में नारी की महत्ता, जाति-पांति-अभेद, नैतिकता की रक्षा, वीरता, भारतीय संस्कृति की सुरक्षा करने के निमित्त बिंब और प्रतीक के रूप में मिथकीय संदर्भ उभरा।

---

1. डॉ. उषापुरी विद्यावाचस्पति मिथक उद्‌भव और विकास तथा हिंदी साहित्य पृ. 65

ऐतिहासिक व्यक्तियों या ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर साहित्यकारों ने अनेक उपन्यासों व कहानियों की रचना समकालीन हिंदी साहित्य पर किया है।

श्री अमृतलाल नागर का उपन्यास 'खंजन नयन' (1981) महाकवि सूरदास के जीवन पर आधारित है। जन्मांध सूर के चरित्र इतिहास और मिथक के सहारे नागरजी ने सफ़ल रूप से किया है।

'अनुत्तर योगी' में वीरेंद्रजैन ने वर्धमान महावीर के संपूर्ण जीवन को अपने विचारों के साथ प्रस्तुत किया है। महान महावीर की ज़िन्दगी के चित्रण करने केलिए उपन्यासकार को इतिहास के साथ मिथक की मदद भी लेनी चाहिए था। उनके आध्यात्मिक विचारों को प्रामाणिक रूप में उभरने केलिए उन्होंने कठिन परिश्रम किया।

स्वामी विवेकानंद की जीवनी को 'तोडो कारा तोड़ो' नामक उपन्यास द्वारा नरेंद्र कोहली ने समकालीन साहित्य में उभरा। इसमें चरित-नायक के अन्तर्द्वन्द्व, अदम्य आत्मविश्वास और लोकनिष्ठा की प्रखर अभिव्यक्ति हुई है। विवेकानंदजी के ऐतिहासिक जीवन का स्पष्टीकरण उन्होंने सफ़लता से किया है।

एक साधारण व्यक्तित्ववाले मोहनदास ने 'महात्मा' में बदलने की पूरी ऐतिहासिक कहानी गिरिराज किशोर ने 'पहला गिरमिटिया' (1999) में उतार थी है। जैनेंद्र की 'दर्शाक' (1983), निर्मलवर्मा के 'रात का रिपोर्टर' (1989), 'अंतिम अरण्य' (2000), कृष्णा बलदेव बैद के 'गुज़रा हुआ ज़माना' (1981), 'नर-नारी' (1996), मायालोक (1999),

मनोहर श्याम जोशी के 'कुरु कुरु स्वाहा' (1980), 'हरिया हरक्यूलीज की हैरानी' (1996), विनोद कुमार शुक्ल के 'खिलेगा तो देखेंगे' (1996) 'दीवार मे एक खिड़की रहती थी' (1997), प्रियंवदा का 'परछाई नाव' (2000) आदि उपन्यासों की रचनाओं केलिए उपन्यासकारों ने इतिहास, मिथक, प्रतीक, रहस्य, रोमांच आदि संवेदनाओं का प्रयोग किया है।

1987 में प्रकाशित शरद पगारे के उपन्यास 'गंधर्वसेन' प्राचीन भारतीय इतिहास पर आधारित है। 1989 में प्रकाशित शत्रुघ्न के 'हेमचंद्र विक्रमादित्य' ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी में उज्जयिनी के शासक गंधर्वसेन और उसके बाद के इतिहास से संबंधित है।

मैत्रेयी पुष्पाजी अपने उपन्यास 'अल्मा कबूतरी' (2000) में कबूतरा वर्ग की वंशपरंपरा राणी पद्मिनी और झंसी की रानी लक्ष्मीबाई की अंगरक्षिका झलकारी से जोड़ती है। उपन्यासकार ने बुंदेलखंड़ीय इतिहास और वातावरण को अपनी सारी रचनाओं की पृष्ठभूमि बनायी।

प्रियंवदा का उपन्यास 'परछाई नाव' (2000) एक प्रतीकात्मक उपन्यास है। उपन्यास के बौने पात्र विदेशी पूँजीपति शक्ति का प्रतीक है जो वामन के मिथक की भाँति पूरे भूमण्डल को अपने अधिकार में लाने की क्षमता दिखाता है।

अरगर वजाहत का उपन्यास 'सात आसमान में' (1996) मुगल साम्राज्य के पतन और उसके बाद सत्ता में आए नवाब सामंतों की ऐतिहासिक कहानी का चित्रण है। ऐतिहासिक मिथकीय कहानियाँ समकालीन

हिंदी साहित्य में पर्याप्त मात्रा में इसलिए नहीं है कि यह बृहद् और व्यापक विषय हैं।

पारिस्थितिक सजगता

इस दुनिया में भारत जैसे महान सभ्यता और संस्कृतिवाला और कोई देश नहीं है। यहाँ प्रकृति और इनसान का मेल (प्रकृति-पुरुष समन्वय) अर्थ-नारीश्वर संकल्प से जुड़ा है (प्रकृति देवी का प्रतीक है)। शरीर का आधा-आधा भाग जोड़कर जिसप्रकार शिव-पार्वती समन्वय हुआ उसीप्रकार प्रकृति-पुरुष संबंध अभिन्न होगा। बिना प्रकृति से जीव-जंतु जी नहीं सकते। प्रकृति ही परिस्थिति या पर्यावरण आदि भन्न नाम से जानी जाती है। यह पर्यावरण या प्रकृति मनुष्य के अंदर और बाहर है। हवा, पानी, मिट्टी, पेड़-पौधे तथा जीव-जंतु सब पर्यावरण के अंतर्गत आते हैं।

प्रकृति और मानव के बीच का यह अभेद्य रिश्ता नष्ट हो रहे हैं। मानव प्रकृति के साथ होड़ कर रहा है। कौन विजयी होगा? निस्संदेह कहा जा सकता है प्रकृति। क्योंकि बुद्धि-राक्षस मानव की शक्ति पर विजय पाने केलिए प्रकृति के पास दूफ़ान, बाढ़, दसुनामी, भूचाल आदि अमानुषिक शक्ति है जिसका फल हम कभी-कभी भोग रहे हैं।

तीन-चार दशक के पहले तक भारत में औद्योगिकरण, भूमण्डलीकरण और आधुनिकीकरण इतने व्यापक रूप में नहीं हुए थे। आज हम अपने देश के विकास पर गौरव करने के साथ पर्यावरण की दयनीय अवस्था पर लज्जित होना की ज़रूरत भी है। गाँव भी मेट्रो सिटि ही नहीं सैबर सिटि बन रहा है। बाज़ारीकरण की कराल मुष्ठि से गाँव ही न बच सका।

आबादी अनियंत्रित रूप से बढ़ने के कारण एक हद तक पर्यावरण को बरबाद करने केलिए मनुष्य मज़बूर हो गए हैं।

यातायात की सुविधा बढ़ाने केलिए पहाड़ों को तोड़कर रास्ता बनाते हैं, वृक्षों को काटकर रास्ता बढ़ाते हैं क्योंक मोटर गाड़ियों की संख्या में दिन व दिन वृद्धि होती रहती है। इसके कारण वायु-भू-आवाज़ प्रदूषण बढ़ रहा है।

नदियों में 'डाम' बाँधकर नदी का बहाव रोककर पानी की ऊर्जा से बिजली बनाई जाती है। गंगा, ब्रह्मपुत्रा, कावेरी, कृष्णा, गोदावरी, नर्मदा, यमुना आदि सैकड़ों नदियाँ हमारी संस्कृति की शान है। कारखाने द्वारा नदियाँ प्रदूषित हो जाने के कारण नदियों तथा बरसात से अनुग्रहीत भारत देश के निवासी पंद्रह रुपए देकर एक बोतल पानी खरीदकर पीते हैं। बहुराष्ट्र कंपनियाँ आजकल हमको पानी ही नहीं पीने देती, उनके 'ड्रिंक्स' (कोकाकोाा, पेप्सी, तंसअप, स्प्राइट, मिरिन्डा जैसे) ही पीने देती है।

पहले हमारा देश वनों से हरा भरा था, आज भी है लेकिन सिर्फ वनों से नहीं, 'कानक्रीट वनों' से है। सौ से अधिक मंजिलोंवाली फ्लैटों की भरमार से हमारा भारत अमेरिका को भी लज्जित करा देते। वनों के कटाव बढ़ने के कारण पशु-पक्षियों की आवास-व्यवस्था के साथ बरसात भी कम होती जा रही है, गर्मी बढ़ती जाती है। वृक्षों के कटाव के कारण मिट्टि का बल नष्ट होकर भूचाल की संभावना बढ़ती जा रही है।

सुविधा केलिए बहुत सारी इलक्ट्रोणिक चीज़ों का इस्तेमाल हम करते हैं - फ्रिड्ज, मोबैल फोन, एक्स-रेस आदि के उपयोग ने हमारे जीवन को खतरे में डाल दिया है।

भारत के कृषिप्रधान गाँव भी अब बहुराष्ट्र कंपनियों के उपभोक्ता बन गए हैं। कृषि नाम मात्र केलिए ही है। वहाँ रासायनिक कीटनाशिनियों (एंडोसल्फान जैसे) के इस्तेमाल के कारण प्रकृति के साथ मनुष्य की अवस्था भी बिगड़ रही है। "प्लास्टिक' पर्यावरण प्रदूषण के क्षेत्रों में एक नया अतिथि है और नगरीकरण के कारण घर के 'वेस्ट' डालने को भी स्थान नहीं है।

कोयल खान में खनन करके हम अपने जीवन को ही नही प्रकृति को ही खतरे में डालते हैं। बडे-बडे 'बम्ब' या 'एक्स्प्लोसीव रखकर पहाड़ों को तोड़कर 'पत्थर' 'मेटल' आदि लेकर प्रकृति का संतुलन नष्ट होता जा रहा है। पानी की खोज में भूमि के निचले तह तक 'पैप कुएँ' खोदकर छोटे बच्चों का साँस नहीं पृथ्वी का साँस भी लेते हैं।

पर्यावरण प्रदूषण की समस्या का सामाधान केलिए दुनिया का हर एक मानव सजग रहने का समय अब ही बीत चुका है। मानव-सभ्यता के सामे इतना गंभीर और कोई समस्या नहीं है। इसकेलिए भारतीय को सक्षम बनाने का प्रयास समकालीन साहित्यकार अपनी रचनाओं द्वारा कर रहे हैं। कुदरत और इनसान का नाता सनातन हैं।

इस गंभीर समस्या को लेकर हिंदी में कई उपन्यासों एवं कहानियाँ लिखे गए हैं।

मैत्रेयीजी के 'इदन्नमम' में कैशरवालों ने पहाड़ तुड़वाकर प्रकृति का शोषण करने का चित्रण यथार्थ स्वरूप में अवतरित किया गया है। संजीव का 'धार' उपन्यास में कोयला अवैध खनन और उसके फलस्वरूप

हुए पर्यावरण प्रदूषण का चित्रण है। 'सावधान! नीचे आग में' उन्होंने झरिया क्षेत्र के कोयला खान में हुई दुर्घटना और कोयला के संचालक वर्ग ठेकेदारों और उनके दलालों के शोषण का वर्णन है। इनके द्वारा शोषितों की कथा भी इसका इतिवृत्त है। 'जंगल जहाँ शुरु होता है' में जंगलों के कटाव के कारण नष्ट होते हुए प्रकृति संतुलन का चित्रण है।

तकनीकी ने नये-नये यंत्रों का आविष्कार किया है। और उसके उपयोग से परिस्थति का उन्मूलन हो रहा है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'बेतवा बहती रही' में मानव द्वारा प्रकृति के संहार का चित्रण है। पहाड़ों को तोड़कर प्रकृति संतुलन बिगड़ने का सजीव चित्रण इसमें है। मृदुला गर्ग के उपन्यास 'कठगुलाब' उदयप्रकाश का 'पीली छतरीवाली लड़की' आदि में पारिस्थितिक सजगता का सजीव चित्रण है। वीरेंद्र जैन के 'डूब' में 'बांध के कारण उत्पन्न होनेवाला पारिस्थितिक विघटन का चित्रण वहाँ के रहनेवालों की ज़िन्दगी द्वारा व्यक्त किया गया है, पशु-पक्षी भी मनुष्य के तरह ज़मीन छोड़कर चले जाते हैं। सरकार भी इस योजना को सहयोग हे रही है। उपन्यासों जैसे कई कहानीकारों के कहानियों में पारिस्थितिक शोषण का सजीव चित्रण देखा जा सकता है।

आंचलिकता

'आंचलिकता शब्द सुनने पर मन में रेणुजी का रूप उभर आता है जिन्होंने सर्वप्रथम 'आंचलिक' शब्द का प्रयोग अपने पहला उपन्यास 'मैला आंचल' की (1954) भूमिका में लिखा है। रेणुजी ने पिछड़े गाँव, उसके खेत-खलिहानों, लोकगीतों, जल-वायु, भाषा के विशिष्ट मुहावरों,

लोकोक्तियों लोक-संस्कृति और प्रकृति के मनोरम दृश्य आदि को आंचलिकता की स्थायी पहचान के रूप में स्वीकार किया है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद लेखकों का ध्यान पिछड़े उपेक्षित अंचलों, वर्गों और जन-जातियों के जीवन की बहुरंगी समस्याओं की ओर गया। हिंदी कथा-साहित्य में आंचलिक कथा-साहित्य एक नया क्रांतिकारी मोड़ है। आंचलिक कथा-साहित्य "भौतिकवादी कृत्रिम नागरी सभ्यता से दूर गाँव के प्रकृति की मनोहारी गोद में स्वाभाविक जीवन जीनेवाले सरल, सहृदय, भोले और गुण-दोष युक्त मानव-समूह की समस्त ज़िंदगी को उसकी सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं आर्थिक चेतना के समय-सापेक्ष संदर्भ में व्यक्तित्व तथा अभिव्यक्ति प्रदान करता है।"[1]

आंचलिक रचनाओं का कथानक इतना जटिल होता है कि उसके तंतुओं अथवा सूत्रों को अलगाकर देखा नहीं जा सकता। वह समग्र अंचल की कथा होती है। इसके कथानक का उद्देश्य और लक्ष्य आंचलिक जन-जीवन का समग्र चित्रण है।

"समाज अपनी भौगोलिक परिस्थितियों की उपज होता है अतः अंचल के भूगोल का, वहाँ के निवासियों के रहन-सहन खान-पीन, रीति-रिवाज़ आदि पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है।"[2] चूँकि यह प्रभाव उस समाज पर पड़ता है जो अपेक्षाकृत असभ्य होता है। इसलिए अंधविश्वास व अद्‌भुत एवं असामान्य लगनेवाली स्थितियों को वह जन्म दे सकता है।

---

1. डॉ. दंगल झालटे नये उपन्यासों के नये प्रयोग पृ. 29
2. डॉ. आदर्श सकसेना हिंदी के आंचलिक उपन्यास और उनकी शिल्प विधि पृ. 60

परंतु प्रकृति से सीधा-संबंध होने के कारण उनके जीवन में जिस सरलता एवं स्वाभाविकता का दर्शन होता है वह सभ्य समाज में प्राप्त नहीं होता।

अंचल के जटिल चित्र को अंकित करने केलिए अनेक पर्वों, उत्सवों, परंपराओं, विश्वासों, व्यथा के अवसरों, लोकगीतों, संघर्षों, प्रकृति के रंगों, पुराने-नए जीवन मूल्यों आदि का प्रयोग समकालीन लेखकों ने किया है।

भारत विकास के रास्ते पर है। यहाँ के महानगर विदेशी नगरों के साथ होड करने में सक्षम हैं। फिर भी भारत की आत्मा गाँवों में है। यथार्थ भारत की ज़िन्दगी वहाँ पनपी है। इसलिए आज के साहित्यकारों ने भी अपने लेखन की पृष्ठभूमि केलिए गाँव चुना है।

"पिछड़े हुए इलाकों को उपन्यास का क्षेत्र बनाकर उपन्यासकार उपेक्षित जीवन के प्रश्नों आकांक्षाओं तथा गरीबी और अशिक्षाजन्य विषमता एवं असंदुरता का अंकन करता है इन सबके बीच भी मानवीय संवेदना की छवि को अंकित कर उधर हमारा ध्यान आकृष्ट करता है। इसप्रकार वह हमारे सौंदर्य-बोध और संवेदना का विस्तार करता है। अनदेखी जीवन-छवियाँ हमारे सामने उजागर हो उठती है।"[1]

आंचलिक कथाओं के सामाजिक संदर्भों की विश्वसनीयता केलिए अंचल-विशेष के पर्व-त्योहार, संस्कृति आदि का स्पष्टीकरण लेखक करते हैं। लोकगीतों का प्रयोग आंचलिक-संस्कृति का द्योतक है। हर एक लोकगीतों के पीछे कोई ऐतिहासिक या मिथकीय कथा होती है जो परंपरागत

---

1. रामदरश मिश्र और ज्ञान चंद्रगुप्त हिंदी के आंचलिक उपन्यास पृ. 7

रूप से पीढ़ियों में व्याप्त होती जा रहा है। लोकगीत और लोकनृत्य अंचल विशेष के लोगों की एकता का प्रत्यक्षीकरण है।

आंचलिक साहित्य में लेखक स्थानीय भाषा का प्रयोग करने में अधिक ध्यान देते हैं। स्थान विशेष और ज़िन्दगी की मूल सहजता व्यक्त करने केलिए स्थानीय भाषा के प्रयोग करते हैं। अंचल-विशेष के निवासियों की संस्कृति व अनुभूति की सजीवता प्रकट करने केलिए परंपरागत शब्दों, मुहावरे तथा लोकोक्तियों से युक्त स्थानीय भाषा का प्रयोग साहित्यकार करते हैं।

आज़ादी के बाद गाँवों की जीवन-स्थिति में थोड़ा बहुत बदलाव आया है। गाँव की आबादी शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात, रोजगार आदि सुविधाओं केलिए कस्बे, नगर, महानगरों में निरंतर पलायन करते हैं। राजनीति और सांप्रदायकता के झटके गाँवों को भी लगने लगे हैं। मंदिर-मस्जिद के घड़ड़े वहाँ भी हो रहे हैं। दलित और पिछडे लोग अपने अधिकारों केलिए उग्र संघर्ष की ओर बढ़ रहे हैं। स्त्री भी अपने अधिकारों के प्रति सजग उठती है। गाँवों की ज़िंदगी में तूफ़ान की तेज़ी से बदलाव आ रहा है। समकालीन कथा-साहित्य में निरंतर परिवर्तनशील अंचल-विशेष की कहानी है।

समकालीन कथा-साहित्यकार संजीव के उपन्यासों का ('धार' 'जंगल जहाँ शुरु होता है' 'पाँव तले की दूब') कथानक झारखंड और बिहार के दूरदराज अंचलों के यथार्थ से जुड़ा हुआ है। मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों व उपन्यासों की पृष्ठभूमि बुंदेलखंड है। वीरेंद्र जैन का 'डूब'

मध्यप्रदेश के एक पिछड़े अंचल को सशक्त रूप से प्रस्तुत करनेवाला उपन्यास है। गाँवों में ज़मींदारों और किसानों के सीधा संघर्ष का चित्रण कमलाकांत त्रिपाठी के दूसरा उपनयास 'बेदखल' में देखा जा सकता है।

उपन्यास की तरह समकालीन कहानियों भी आंचलिक विशेषताओं की भरमार है। चित्रा मुद्गल, मैत्रेयी पुष्पा, कृष्णा सोबती, मृणाल पाण्डेय आदि समकालीन लेखिकाओं की अधिकतर कहानियाँ की पृष्ठभूमि अंचल-विशेष है। बरटोही, मार्कण्डेय, रामदरश मिश्र, संजीव आदि लेखकों ने परिवर्तनशील गाँव का चित्रण स्थानीय भाषा के सहारे अपनी कहानियों से किया है।

समकालीन कथा-साहित्य में प्रायः अधिकांश रचनाओं में आंचलिकता का संस्पर्श पाया जाता है। भारत के सत्तर प्रतिशत आबादी गाँव में रहते हैं। इसलिए आंचलिक रचनाओं को पाठक बहुत आसानी से आत्मसात करते हैं।

सामाजिक रिश्ते-नाते का नया स्वरूप

सामाजिक मूल्यों का आशय व्यक्ति का समाज से बाँधनेवाले जीवन मूल्यों से है। यह मूल्य हमेशा बदलता रहता है। हर दिन नवीन मूल्य-निर्माण चलता रहता है। आजकल सामाजिक मूल्यों और रिश्ते-नाते की शिथिलता सर्वत्र दिखाई दे रही है।

समाज की जड़ परिवार है। आजकल परिवार का स्वरूप बहुत छोटा होता जा रहा है। संयुक्त परिवार का विघटन समकालीन रिश्ते की शिथिलता का कारण बन गया।

नगरीकरण व औद्योगीकरण के कारण आज संयुक्त परिवार ही नहीं अणु-परिवार का ही विघटन हो रहा है। बाज़ारवाद के आधिक्य के कारण मनुष्य फ्लैट, विल्ला-संस्कृति को अपनाकर अकेला जीने की आज़ादी अनुभव करता है। आज की युवा-पीढ़ी किसी के नियंत्रण में रहना नहीं चाहती। वे अपनी मर्जी के अनुसार जीना चाहती हैं।

आजकल युवा-लोग भोग-विलास के प्रति ज़्यादा इच्छुक है। भारत की संस्कृति और सभ्यता के प्रति उनके मन में कोई आदर का भाव नहीं। विदेशी संस्कृति के अंधानुकरण करके वे दिन-रात पब-होटल में घूम रहे हैं। वे अपनी माँ, बहन, बेटी, मौसी, दादी किसी को नहीं पहचानते, नारियों को सिर्फ 'माल' के रूप देखते हैं।

समकालीन नारी पूर्वापेक्षा स्वावलंबी और शिक्षिता है। वह स्वतंत्र अस्तित्व की प्राप्ति की ओर बढ़ रही है। वह पुरुष को साथी के सिवाय कुछ नहीं समझती। परंपरागत सामाजिक मान्यताओं को तोड़कर जीने की क्षमता उनमें है। विवाह-प्रस्थान पर उनकी आस्था नष्ट होती जा रही है। दहेज-प्रथा के प्रति वे अपना पूरा विद्रोह प्रकट करती हैं। विवाह-पूर्व शारीरिक संबंधों को और विवाह को बाद पति छोड़कर दूसरे पुरुषों से रिश्ता रखने को वे असन्मार्गिक नहीं मानते। खुला सेक्स भी आधुनिक परिवेश में कपड़े और भोजन की तरह अनिवार्य होता जा रहा है।

इस संघर्षशील दुनिया में माँ-बाप के बीच का तनाव व घुटन बच्चों केलिए हानिकारक बनते हैं। आज की माँ बच्चों साथ अपनी भूमिका नहीं निभाती, वे बच्चों को 'डे-केयर' छोड़कर पैसे कमाने के लक्ष्य में

दौड़ती रहती हैं। आज की बहुराष्ट्र कंपनियों में दिन-रात शिफ्ट में काम करने के कारण माँ-बाप और बच्चों को एक साथ मिलने जुलने का फुरसत भी नहीं मिलेगा।

आज के लोगों ने वृद्ध माता-पिताओं को ज़िंदगी का बोझ मान लिया हैं। वे उन्हें किसी वृद्ध सदन में छोड़ते हैं। सास और बहु भी एक घर में रहने केलिए तैयार नहीं। वे आपस में 'एडजेस्ट' नहीं कर सकती, विवाह के पहले दिनों में वे अलग रहने का प्रबंध कर रहे हैं। विवाह आजकल दिखावा मात्र बन रहा है। पहले की तरह ति-पत्नी में पवित्र विश्वास और स्नेह नहीं रहा। विवाह पूर्व संबंध द्वारा युवतियाँ गर्भधारण करने पर बिना हिचक से वे गर्भपात करती हैं या बच्चों को जन्म देने पर कोई पछतावा किये बिना उसे अनाथालय छोड़कर दूसरे पुरुष के हाथ पकड़ती है।

आजके संघर्षपूर्ण जीवन में मानव का लक्ष्य सामाजिक संबंध बढ़ाना नहीं सिर्फ वैयक्तिक सुख-सुविधाओं को पाना है। नये सुविधाएँ पाने केलिए समाज के सारे रिश्ते, विशेषतः अपने माँ-बाप-बच्चे, उनकेलिए रुकावट बन जाते हैं। विदेशी संस्कृति का अंधानुकरण करके हमारे भारत की अपनी संस्कृति को गड्ढ़े में डालकर आगे बढ़ना आज की पीढ़ी की आदत है। ऐसी समस्याओं के पर्दाफाश करनेवाले हैं। आज के साहित्यकार रचनाओं के द्वारा सामाजिक रिश्ते-नाते का ह्रास हम पहचानते हैं।

श्रीमती कृष्णा सोबती के उपन्यास 'दिलि दानिश' (1993) में स्त्रियाँ परम्परागत पारिवारिक संहिता को झेलती हुई कुंठाग्रस्त जीवन बिताती थीं। पुरुष अपनी प्रेमिका के बच्चों के बाप बन जाने पर स्थिति

और भी नाजुक और संघर्षपूर्ण बन जाती है। इस उपन्यास में अवैध संतान की समस्या को गहरी संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास भी दिखाई देता है।

उनके उपन्यास 'समय सरगम' (2000) में वृद्ध व्यक्तियों की समस्याओं का चित्रण है। कमलकुमार के 'आवर्तन में' (1992) कालिज परिसर की पृष्ठभूमि में दांपत्य और दांपत्येतर संबंधों के द्वन्द्व का चित्रण है। और 'अपार्थ' (1986) में पारिवारिक परिवेश की उन अमानवीय स्थितियों का चित्रण किया गया है जो मनुष्य को आत्महत्या की ओर ले जाती है।

समस्त संवैधानिक अधिकारों के बावजूद भारतीय स्त्री पारिवारिक और सामाजिक शोषण की शिकार बनी हुई है। नासिराशर्माजी ने अपने उपन्यास 'श्यामली' द्वारा पारिवारिक और सामाजिक परिस्थिति में आज की नारी का मूल्यशोषण का चित्रण किया है।

वैश्विक स्तर पर पारिवारिक विघटन, उच्चवर्गीय जीवन के अंतर्विरोध, बाहर और भीतर की ज़िन्दगी का तनाव, संबंधहीनता, नकली ज़िन्दगी, पति-पत्नी की टकराहट में टूटने-पिसते बच्चे, भोग-विलास के पीछे अंधी दौड़ आदि का चित्रण श्रीमती प्रभाखेतान ने अपने उपन्यास 'आओ पेपे घर चलें' (1990) में प्रस्तुत किया है।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'इदन्नमम' में नायिका माँ ने अपनी बच्ची को छोड़कर विधवा होने के बाद एक गुंडे के साथ पलायन किया, उसकी भाभी कुसुम भी एक अन्य पुरुष के साथ अनैतिक संबंध रखती थी। उनके

उपन्यास 'चाक' में रेशम की हत्या पर न प्रतिक्रिया करनेवाले समज का चित्रण है। इस समाय में दलित-स्त्री को प्रेम करने का अधिकार नहीं है। रेशम, जिसकी हत्या हुई की रिश्ते की बहन सारंग हत्या के विरुद्ध विद्रोह करती है और संभवतः श्रीधर प्रजापति के साथ देह-संबंध स्थापित करती है। 'झूलानट' में जाट सामाज की परिस्थिति में लेखिका ने सास-बहु, माँ-पेटे, पति-पत्नी और देवर-भाभी के संबंधों की कहानी एक खास अंदास में कही गई है। 'स्मृतिदंश' 'अलमा कबूतरी' 'विज़न' 'कही ईसुरी फाग' और 'कस्तुरी कुंडल बसै' में भी इसप्रकार के रिश्तों का प्रामाणिक चित्रण देखा जा सकता है।

चित्रामुदगल की 'लिगडु' अलका सरावगी का 'शेष कादंबरी' निर्मल वर्मा का 'अंतिम अरण्य' आदि शिथिल रिश्तों की अभिव्यक्ति में समर्थ उपन्यास है।

समकालीन कहानियों का विषय बनकर भी सामाजिक रिश्ते-नाते का नया-स्वरूप हमारे सामने आता ह। कामतानाथ की कहानी 'छुट्टियाँ' 'वह' कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी 'स्वतंत्रता संग्राम सेनानी', गिरिरिजा किशोर की कहानी 'पगडंडियां' चित्रा मुदगल की 'मामला बढ़ेगा अभी', शानरंज की 'शेष होते हुए' दीप्ति खण्डेलवाल, मैत्रेयी पुष्पा आदि की कहानियाँ इसका दस्तावेज है।

इतिहास काल में धर्म स्थापना केलिए भाई-भाई की हत्या (महाभारत) की गयी है लेकिन आज अधिकार और संपत्ति प्राप्त करने केलिए भाई-भाई की हत्या (प्रमोद महाजन की हत्या) चल रही है। हर दिन अखबार पढ़ें तो देख सकते हैं दो उम्रवाली बच्ची का बलात्कार, पिता द्वारा बेटी का

बलात्कार, छोटे बच्चों को छोड़कर प्रेमी के साथ पलायन करनेवाली माँ, अपने प्रेमी के साथ, पत्नी या प्रेमिका के साथ पति अपने जीवन साथी की हत्या करनेवाले, संपत्ति केलिए वृद्ध माता-पिताओं की हत्या, नशे में डूबकर घर जलानेवाला और पत्नी व बच्चों ही हत्या करनेवाला, अध्यापक और छात्रा का अपमान, पूर्व-विद्यार्थियों के रागिंग का भीषण चित्रण। ये सब पढ़कर हम समझने है कि आज के लोग दया, स्नेह, आदर सब भूल गये हैं, अधिकार प्राप्त करना और सुख-सुविधा पाना उनका टिकाना है। उस समय उनके सामने कोई भी, किसी भी बाधा-माँ, बाप, बच्चा, शिष्या, दोस्त-हो उन्हें हटाकर आगे बढ़ने का कठोर साहस वे करते हैं।

समकालीन साहित्य में किसी आधुनिक मानव हमारी पुरानी संस्कृति के प्रति सजग हो अथवा भारतीय कर्तव्य का पहचान हो, वह साहित्यकार धन्य हो जाएगा।

दलित जीवन

'दलित' के व्यत्वत्ति और प्रयोग में विद्वानों में मतभेद हैं। हिंदी व्याकरण के अनुसार 'दल + इत्' से 'दलित' विशेषण बनता है, जिसका अर्थ है, दलों के लोग, दल में समाविष्ट जन या समुदाय।

"डॉ. भोलानाथ तिवारी ने दलित शब्द का अर्थ इसप्रकार किया है -

1. दलित कुचला हुआ, मर्दित, मसला हुआ रौंदा हुआ।
2. पास हिम्मत, हत्तोत्साह
3. अछूत, जनजाति, ड्रिपेस्ड म्लास"।[1]

---

1. डॉ. भोलानाथ तिवारी - हिंदी पर्यायवाची कोश पृ. 270

गौरव की बात है कि भारत दुनिया का सबसे बड़ा गणतंत्र राष्ट्र है। यहाँ मानव-मानव के बीच कोई भेद-भाव नहीं होना चाहिए। लेकिन भारत के राजनीतिक सामाजिक परिवेश में हमेशा तनाव व घुटन की भरमार हैं। डॉ. अम्बेदकर के नेतृत्व में लिखा गया भारत का 'संविधान' सच्चे अर्थ में नहीं लागू किया गया है।

> "स्वतंत्रता, समता और बंधुभाव के आधार पर स्थापित सामाजिक जीवन ही लोकतंत्र कहलाता है। स्वतंत्रता तो हमें मिली, किंतु भारत में समता का अभाव है। यहाँ के सामाजिक और आर्थिक जीवन में विषमता का बोलबाला है। इस विषमता को हमें शीघ्र मिटा देना चाहिए। अन्यथा बड़े परिश्रम से निर्मित इस लोकतंत्र का मंदिर मिट्टी में मिल जाएगा।"[1]
>
> डॉ. बी.आर. अंबेड्कर

आदिम युग का समाज वर्गहीन समाज था। उसमें जाति, संप्रदाय, ऊँच-नीच, भेदभाव, राजा-प्रजा आदि वर्ग नहीं बने थे। ज़िंदगी की सुविधाएँ बढ़ाने में मानव के द्वारा मानव के शोषण की परंपरा प्रारंभ हो गयी। एक वर्ग अधिक सुविधाएँ तथा धन संजोता गया, जबकि दूसरे वर्गों के साथ दासों की तरह व्यवहार होने लगा।

शोषित या पीड़ित वर्गों के 'दलित कहला गया जिन्हें गाँधीजी ने 'हरिजन' और अंबेड्कर ने 'बहिष्कृत' पुकारा। "कहाँ जा सकता है कि भारतीय सनातनी सामाजिक वर्ण-व्यवस्था में निचली श्रेणी का वर्ण और

---

1. डॉ. रातेश कुमार दलित चेतना और समकालीन पृ. 16

उनसे संबन्धित विभिन्न जातियां और वर्ण-व्यवस्था में बाहर जीनेवाली जन-जातियां जो हिंदु-वयवस्था में परंपरा से अछूत, सांस्कृतिक दृष्टि से उपेक्षित, बहिष्कृत समाज 'दलित' कहलाता है।

स्वातंत्रता के 60 वर्ष गुज़र जाने पर भी निम्न दलित वर्ग की समस्या में कोई परिवर्तन नहीं आया। जातिप्रथा, छुआछूत, वैवाहिक समस्या, जन संपर्क के अवसर पर भेदभाव, शिक्षा की समस्या, आर्थिक व कृषि-भूमि की समस्या, बेरोजगारी, दलित-नारी शोषण आदि किसी न किसी रूप में उनकी ज़िंदगी में आज भी मौजूद हैं। वे ऋण एवं गरीबी से अधिक ग्रस्त हैं। राजनीतिक क्षेत्र में और सामाजिक स्तर पर भी उनकी भागादारी का अभाव है।

दलित साहित्य

आधुनिक भारतीय साहित्य में दलित साहित्य का प्रारंभ पहले मराठी में हुआ। दलितों को सामाजिक समता दिलाने केलिए कई सामाजिक आंदोलन चलाये गए जिनके परिणामस्वरूप 'दलित साहित्य' का आविर्भाव हुआ। दलित आंदोलन के मूल में डॉ. अंबेड्कर के तीन सूत्र हैं शिक्षा, संगठन और संघर्ष। इस अंबेड्करवादी साहित्य चेतना ने युगों से उपेक्षित, अपमानित, अछूत, शोषणग्रस्त जन-समुदाय के आत्म घुटन को साहित्य सृजन के माध्यम से व्यक्त किया है। इस आंदोलन के केंद्र में समाज के उपेक्षित वर्ग की संघर्षशील ज़िन्दगी का यथार्थ चित्रण है।

दलित साहित्य का दलित मुक्ति, जिसका तात्पर्य एक विशेष प्रकार की परिस्थिति और परिवेश से मुक्ति है जिसमें वे शोषित और घृणित हैं।

दलितमुक्ति का प्रखर स्वर साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा आत्मकथाओं, उपन्यासों और कहानियों में देखा जा सकता है। मोहनदास नैमिशराय का 'अपने-अपने पिंजरे' ओमप्रकाश वात्मीकि का 'जूठन' और कौशल्या बैसंत्री की 'दोहरा अभिशाप' आदि आत्मकथाएँ दलित-मुक्ति का दस्तावेज है।

समकालीन उपन्यासों में दलित-जीवन

'हम दलित' मासिक पत्रिका का संपादक श्री प्रेम कपाडिया द्वारा 1985 में रचित उपन्यास है 'मिट्टी की सौगंध'। उन्होंने इसमें गाँव की ज़मींदारी संस्कृति को केंद्र में रखा गया है जो दलितों के शोषक और न्याय के बाधक है। बुराई और अच्छाई की विजय ही उपन्यासकार का लक्ष्य था।

1986 में प्रकाशित जयप्रकाश कर्दम का पहला उपन्यास 'करुणा' और दूसरा उपन्यास 'छप्पर' दलित साहित्य की बहसों में चर्चित रहे हैं। 'करुणा' के नायंक-नायिका सांसारिक समस्याओं से त्रस्त होकर बौध्य धर्म ग्रहण करते हैं। दलित शोषण के प्रति सशब्द विद्रोह ही 'छप्पर' का कथानक है।

"जस तस भई सबेर' सत्यप्रकाश के उपन्यास है, जो आज़ादी के बाद के एक दलित परिवार को केंद्र में रखकर लिखा गया है। यहाँ परिवार पूरे समाज का प्रतिनिधित्व करता है। नई राजनीति-व्यवस्था द्वारा दलित समाज में आए परिवर्तन का सजीव चित्रण यहाँ देखा जा सकता है।

समकालीन दलित साहित्यकारों में प्रमुख श्री मोहनदास नैमिशराय का पहला उपन्यास है 1999 में प्रकाशित 'मुक्तिपर्व'। इस उपन्यास के

द्वारा उपन्यासकार का लक्ष्य यह था कि सदियों से वर्णाश्रम व्यवस्था की गुलामी झेलने लोगों की स्वतंत्रता का अर्थ समझना चाहिए। इसप्रकार वर्णाश्रम व्यवस्था से मुक्ति की आकांक्षा आधुनिक जीवन मूल्यों की वकालत और अपने स्वतंत्र अस्मिता की खोज आदि की अभिव्यक्ति दलित साहित्य में हो रही है।

संजीवजी के 'धार और' जंगल जहाँ शुरु होता है 'दलित शोषण' चित्रण करनेवाला उपन्यास है। निम्न वर्ग के मुस्लिम परिवार की कहानी अब्दुल बिस्मिल्लाह के 'मुखड़े क्या देखे' (1996) का केंद्र है।

मैत्रेयी पुष्पा के 'इदन्नमम' 'चाक' 'अल्माकबूतरी' आदि दलित नारी शोषण का सच्चा दस्तावेज है। उनकी रचना 'अल्मा कबूतरी' कबूतरे जनजाति की ज़िन्दगी, जो अभी तक हमने नहीं देखा, सच्ची अर्थ में एक दलित मुक्ति संघर्षशील रचना हैं। जिसे पढ़कर हमको गहरी पीड़ा लगती हैं।

समकालीन कहानियों में दलित-जीवन एक प्रवृत्ति के रूप में स्वीकार किया गया है। ओमप्रकाश वात्मीकी की कहानियाँ 'बिरम की बहू', 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ' पुष्पा सक्सेना की कहानी 'एक चनगारी छोटी-सी', रमेश चंद्र शाह की 'अयोध्याकाण्ड' नरेंद्र मौर्य की कहानी 'कमीज़', शशिप्रभा शास्त्री की रचना 'खाली झेली भरे हाथ' आत्मशाह की कहानी 'एक और सीता' अब्दुल बिस्मिल्लाह की कहानी 'अलिया धोबी और पात्र-भर गोश्त' मैत्रेयी पुष्पा की कहानियाँ 'मन नाहिं दस बीस' 'फैसला' आदि बहुत सारी कहानियों ने दलित-शोषण, शोषण के प्रति विद्रोह को अपना विषय बना दिया।

दलित जीवन पर लिखी गयी अधिकांश रचनओं की पृष्ठभूमि गाँव है क्योंकि जाति-पाँति, ज़मींदारी-व्यवस्था आदि गाँवों में अधिक कठोर है। ऊँच नीच की भावना सिर्फ हिंदुओं में नहीं मुस्लिम तथा अन्य जातियों में ही गहरी जड़ें जमाई हुई है। देश के परिवर्तित होते परिवेश में निम्न जातियों में अपने अधिकारों के प्रति और शोषण के विरोध में सजग रहने केलिए साहित्य विशेषकर कथासाहित्य अपना दायित्व निभाता आ रहा है।

फेमिनिसम

'फेमिनिसम' हिन्दी के 'नारीवाद' का अंग्रेज़ी रूपांतरण है, जिसका आगमन पश्चमी देश से हुआ है। वहाँ नारीवाद का बहुत पहले ही प्रारंभ हुआ था। सन् 1960 के आसपास नया नारीमुक्ति आंदोलन शुरु हुआ और यह आंदोलन भारतीय नारी समाज पर परिवर्तन का तूफ़ान लाया, क्योंकि भारतीय नारियों में कुछ शिक्षित बन गयी और शोषण के प्रति नारा लगाने लगी।

नारीवाद के कई रूप हैं जिनमें उदार नारीवाद, वामपंथी नारीवाद, उग्रनारीवाद, उत्तराधुनिक नारीवाद आदि प्रमुख है। उदार नारीवाद बेला अबलेक्स, बेट्टी फ्राइडन आदि उदारवादी विचारधारा के समर्थकों को यह विश्वास था कि शासन व्यवस्था द्वारा कानून बनने पर स्त्रियों को पुरुषों के समान स्तर मिल जाता है। शिक्षा, रोजगार, समान वेतन, मताधिकार आदि के साथ गृहणी और कामकाजी महिलाओं के जीवन में सामंजस्य लाने का अवसर उपलब्ध करना उदार नारीवाद का लक्ष्य है। भारत के अधकांश नारीवाद लोग इसीके पक्ष में है।

उग्र नारीवाद

केट मिलेट, फायरस्टान आद उग्र नारीवादियों के समर्थक ने परिवार और विवाह को महिलाओं के उत्थान का बाधक माना। प्रजनन व बच्चों का पालन पोषण इनके मुख्य धारा से हटाते हैं और विभिन्न प्रकार के शोषण करके पुरुष पगी नारियों के ऊपर अपना वर्चस्व स्थापित करते हैं। उग्र नारीवादी पूर्णतः पुरुष विरोधी हैं और वे मानते हैं बच्चों की ज़िम्मेदारी पुरुष और स्त्री दोनों के समान रूप से करना चाहिए। बच्चों के संरक्षण केलिए संभाल-ग्राह का प्रबंध करना और तकनीकी की सहायता से कृत्रिम ढंग से बच्चा पैदा करना आदि का समर्थन इन्होंने किया।

वामपंथी नारीवाद

मार्क्स और एंगल्स के अनुसार पूँजीवाद की समाप्ति और वर्गहीन समाज की स्थापना होने पर नारी शोषण अंत हो जाएगा। व्यक्तिगत संपत्ति पर वे विश्वास नहीं करते। उनके अनुसार अमीर-गरीब के भेद-भाव मिटाकर मज़दूरों, दलितों पीडितों के साथ महिलाओं को भी एकत्रित कर समाजवाद की स्थापना करना नारी-मुक्ति का एकमात्र रास्ता है।

उत्तर-आधुनिक नारीवाद

उत्तर आधुनिकतावाद की प्रवृत्तियों में सर्वप्रमुख है। नारीवाद। इनके अनुसार जैव वैज्ञानिक शारीरिक भिन्नता के कारण ही यहाँ पुरुष वर्चस्व चलते हैं। नारी-शरीर और नारी-चिंतन दोनों में मुक्ति लाकर यह भिन्नता समाज करनी चाहिए।

भारत की स्थिति पाश्चात्य से पूर्णतः भिन्न रहती है। भारत की आम जनता की तरह अपने घर की पूरी ज़िम्मेदारी लेनेवाली यहाँ की महिलाएँ सुख-भोगेच्छा, दिशाहीनता, हिंसा, आतंक, चाटुकारिता, निराशा, अकेलापन, विवशता, अस्थिरता आदि विसंगतियों के शिकर बन गए हैं। "लैगिक भेद-भाव, यौन-उत्पीडन, बलात्कार, दहेज-उत्पीडन, वैधव्य, राजनीति में प्रतिनिधित्व का अभाव, उत्तराधिकार की समस्या, अशिक्षा।[1] प्रतिनिधित्व का अभाव, उत्तराधिकार की समस्या, अशिक्षा, निरक्षरता, विस्थापन की पीड़ा, मृत्यु-दर की अधिकता, पर्सनल लॉ की मौजूदगी आदि अनेक परंपरागत और आधुनिक जीवन की समस्याएँ हैं, जिनका शिकार होकर स्त्री-जाति घुटती रही है। पुरुष सत्तात्मक मूल्यों के आधिपत्य के कारण स्त्री के स्त्रीत्व-संपन्न व्यक्तित्व के विकास का मार्ग अवरुद्ध रहा है।"[2]

किसी प्रकार के नारीवाद के पक्षपति होने मात्र पर हमारे भारत में स्त्री-मुक्ति संभव नहीं हो सकते। सच है, यह वेदों, पुराणों का देश है, यहाँ स्त्रियों को देवी मानकर पूजा करते हैं, माँ का स्थान दूसरे किसी भी स्त्री माना है। लेकिन इतिहासकाल से ही स्त्री अस्वतंत्रता, अपमान, सहपत्नीत्व अनुभव करती आयी है। अनादिकाल से उस पर पुरुष-वर्चस्विता का बोझ डाला गया है।

इस सैबर युग में भी भारतीय नारियां पुरुषवादी सोच और धार्मिक अंधविश्वासों से मुक्त नहीं, मुक्त नहीं देता यहाँ का पुरुष समाज। स्त्री-मुक्ति

---

1. डॉ. ओमप्रकाश शर्मा समकालीन महिला लेखन पृ. 17
2. डॉ. ओमप्रकाश शर्मा - समकालीन महिला लेखन - पृ. 17

का पहला शर्त यह है कि स्वावलंबन और स्वाभिमान। शिक्षा के द्वारा ही यह संभव हो जाएगा। भारत में मध्यवर्ग की असंख्य नारियाँ काम करती है लेकिन वे अशिक्षित रही हैं। वे स्वावलंब है, फिर भी स्वाभिमान नहीं। इसलिए स्त्रियों केलिए शिक्षा के साथ प्रशिक्षण भी अनिवार्य है।

शोषण के विरुद्ध कभी कभी प्रतिक्रियाएँ भी होती हैं। फूलनदेवी इसका मिसाल है। मायात्यागी, सैराबानु जैसे जीवंत मिसाल हमारे सामने हैं जो क्रूर अपमान भोगती थी। दलित या अशिक्षित नारियों को ही नहीं तस्लीमा नसरीन जैसी शिक्षित नारियों को ही पड़ियएँ भोगनी पड़ी। पुरुष प्रधान सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियाँ लंबे अर्से से बहुआयामी शोषण का शिकार होती रही है, चाहे वे अगड़ी है या पिछड़ी।

समकालीन कथा-साहित्य में नारीवाद

पिछले पच्चीस-तीस वर्षों से जीवन को जटिल अनुभूतियों और विविधतापूर्ण अनुभवों को व्यक्त करने में हिंदी साहित्य के क्षेत्र में कहानी ओर उपन्यास सक्षम सिद्ध हुए है। समकालीन महिला-लेखन की पहचान कथा-साहित्य के माध्यम से ही मिली है, क्योंकि वर्तमान स्त्री-समस्याओं की जटिलताएँ प्रकट करने में कथा-साहित्य ही ज़्यादा समर्थ है।

समकालीन महिला लेखिका श्रीमती सूर्यबाला अपने उपन्यास 'अग्निपंखी' 'दीक्षांत' आदि द्वारा नारीवाद का स्पष्टीकरण करती है। स्त्री को अपनी ज़िंदगी बिताने केलिए ह पल हर क्षण जागरूक रहना अनिवार्य है, न तो काँच की बर्तन की तरह टूट जाएगी। हमेशा सजग रहकर,

स्वावलंबित होकर सशक्त जीवन जीने की प्रेरणा सूर्यबालाजी की रचनाओं से मिलती है।

उनकी कहानियाँ 'मेरा विद्रोह' 'घटनाहीन' 'सिन्ड्रेला का स्वप्न' आदि नारी समस्याओं पर व्यंग्य करनेवाली रचनाएँ हैं।

विदेश को अपनी रचनाओं की पृष्ठभूमि बनाकर लिखनेवाली लेखिकाओं में उषाप्रियंवदा की उसी श्रेणी में श्रीमती मीनाक्षी पुरी का नाम भी आता है। 'पहचान-बे-चेहरा' (1989), 'तश्तरी में तूफ़ान' (1999) उनके बहुचर्चित उपन्यास हैं। जर्मनी के धरातल पर लिखे उपन्यास 'पहचान-बे-चेहरे' का मूलस्वरर भारतीय नारी की गुलामी और पाश्चात्य नारी की आज़ादी है। यहाँ नारी-जीवन इतना अभद्र और अश्लील हो सकता है कि विश्वास करने का मन नहीं होता। यह विद्रूपता उनके सारेर उपन्यासों में कटुवर्णों में, भाषा की नग्नता के साथ प्रस्तुत किया है।

नासिरा शर्मा जी अपनी उपन्यासों और कहानियों द्वारा मुस्लीम-नारी शोषण का सच्चा चित्रण करती हैं। मुस्लिम समाज की नारियाँ नारी-मुक्ति का सवाल कभी भी नहीं उठाती। दलितों के समान इस समाज में सबसे ज़्यादा नारीशोषण होती रहती है। अफ़सोस की बात है कि अधिकांश मुस्लिम नारियाँ यह शोषण पहचान ही नहीं सकतीं। तस्लीमा नस्रीन जैसी लेखिकाएँ इसके विरुद्ध आवाज़ उठाने पर उसको अपनी मातृभूमि भी छोड़नी पड़ी।

ऋता शुक्ल के 'अग्निपर्व' नारीशोषण का दस्तावेज है। श्रीमती पद्मा सचदेव 'अब न बनेगी देहरी' में भारतवर्ष की विधवाओं की दारुण

ज़िन्दगी खुले रूप से लिखती हैं। इस उपन्यास में पद्माजी ने कहा 'जहाँ स्त्री ज़िंदा रहने' पर विधवा और मरने पर सुहागिन हो जाती है नारी स्वातंत्र्य, आत्मनिर्भरता की माँग और संघर्ष केलिए नारी-आह्वान आदि की स्थापना इस उपन्यास का लक्ष्य है।

मैत्रेयी पुष्पा के अधिकांश उपन्यास और कहानियाँ नारी-शोषण के विरोधी पक्ष-में है। 'इदन्नमम' की नायिका मंदा, 'अल्मा कबूतरी के कदमबाई' 'चाक' की नायिका सारंग, 'झूलानट' की नायिका शीलो, 'विज़न' की नायिकाएँ, कस्तूरी कुंडलै बसै की कस्तूरी और उसकी बेटी, 'कही ईसुरी फाग' 'अगनपाखी' की नायिकाएँ सब शोषण के विरुद्ध किसी न किसी रूप में अपना विद्रोह प्रकट करती हैं।

प्रभा खेतान के उपन्यास 'छिन्नमस्ता' 'तालाबंदी' और 'पीली आंधी' मृदुला गर्ग के 'कठगुलाब' राजी सेठ के 'निष्कवच' सुषमा बेदी के 'लौटना' गीतांजली श्री के 'हमारा शहर उस बरस', अल्का सरावगी के उपन्यास 'कलि कथा-वाया बाईपास' उषा प्रियंवदा के 'अन्तर्वंशी' चत्रा मुद्गल के 'आवां' कृष्णा सोबती के उपन्यास आदि में मुखरित स्वर नारीवाद का है। इन लेखिकाओं की कहानियों भी इसी कोटि की है।

समकालीन महिला लेखिकाओं के साथ लेखकों भी स्त्री-मुक्ति केलिए प्रयत्नरत है। विष्णु प्रभाकर के उपन्यास 'अर्धनारीश्वर' (1993) (बलात्कार ग्रस्त स्त्री की सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और नैतिक समस्याओं तथा स्त्री-पुरुष संबंधों की जटिलता का अंकन), भीष्म सानी के 'कुंतो' (1993) (स्त्री की आत्मसजगता और आत्म निर्भरता), कृष्ण बलदेव वैद

के 'नर-नारी' (1996) (इस उपन्यास के सभी स्त्री-पुरुष पात्र कसी न किसी रूप से मुक्त काम-संबंधों से जुड़े हैं) आदि उदाहरण है। फिर भी नारियों की समस्याओं और उसके समाधान केलिए ज़्यादा सक्षम महिला लेखिकाओं की रचनाएँ हैं। नारीवाद के स्तर पर हिंदी साहित्य जगत में कथा-साहित्य अपनी भूमिका निभाता रहता है।

समकालीन हिंदी साहित्य के महिला कथाकार

महिला लेखन एक नारीवाद लेखन के रूप में पिछले बीस-पच्चीस वर्षों से स्वतंत्र अस्तित्व की तलाश में है। मीरा और महादेवी की परंपरा से जुड़कर भारतीय नारी-लेखन का अपना साहित्य गौरवान्वित होकर पूरी गरिमा से आज भी चल रहा है। पुरुष-वर्चस्ववाली साहित्यिक दुनिया में स्त्री-लेखन को अस्तित्व की स्वीकृति उतना आसान नहीं थी। भारतीय नारी की बदलती स्थिति और नारीवाद के हर पहलुओं के अलावा तत्कालीन समाज की सभी साहित्यिक प्रवृत्तियाँ महिला-लेखन की विशेषता हैं।

सामान्य अर्थ में 'महिला लेखन' शब्द से तीन तरह के भाव प्रकट होते हैं पहला महिलाओं द्वारा लेखन अर्थात् महिला साहित्यकारों द्वारा लिखित किसी भी साहित्यिक कृति को महिला लेखन मानते हैं, दूसरा महिलाओं के बारे में लेखन-महिला साहित्यकार अपने लेखन के द्वारा सशक्त नारी पात्रों के माध्यम से प्रखर नारी-चेतना के अभिव्यक्त करती हैं, तीसरा महिलाओं केलिए लेखन माने महिला साहित्यकारों द्वारा महिला विषयों पर केंद्रित महिलाओं के सबलीकरण और समाजीकरण केलिए लिखित कृतियाँ।

हिंदी साहित्य जगत में इन तीन अर्थों में लेकर भी पर्याप्त मात्रा में सजग सजीव महिला लेखन पूर्ण जागरण की अवस्था में हैं। समकालीन कथा-साहित्य एक अर्थ में महिला लेखन का सशक्त माध्यम है।

'आधुनिक नारी बोध को प्रकट करनेवाला हिंदी महिला लेखन समसामयिक जीवन स्थितियों की जटिल अनुभूतियों साहित्यिक कृतियों का प्रतिबिंब है। समकालीन हिंदी साहित्य समसामयिक भारतीय समाज की ही उपज है जिसकी प्रेरक पृष्ठभूमि के रूप में जनमानस में पश्चिमी जीवनमूल्यों के प्रति आकर्षण, युवा पीढ़ी की दिशाहीनता, स्वार्थपूर्ण राजनीति, भ्रष्ट सरकारी व्यवस्था, जीवन में अर्थ की प्रधानता, उपभोक्तावाद की बढ़ती दुष्टवृत्ति, बेरोजगारी की बढ़ती मार, शहरीकरण का दबाव, विदेशों की ओर प्रतिभाओं का पालायन, पारिवारिक विघटन, मानवीय मूल्यों का क्षरण, औद्योगीकरण के कारण कृषि कार्यों से विलगाव निराशा, कुंठा, विषमता, विद्रूपता आदि से त्रस्त जनता, हिंसा-आतंक का वातावरण आदि बहुआयामी यथार्थ की विद्यमानता रही है।"[1]

नारी समाज के सामने समकालीन परिवेश में बहुत सारी समस्याएँ हैं, जिसके प्रति हमेशा जागरूक बनना अनिवार्य है। महिला साहित्यकारों का प्रमुख लक्ष्य यह है कि आज के नारी-समाज में कायम रहनेवाली चुनैतियों के प्रति विद्रोह करने केलिए उन्हें सक्षम बनाना। एक हद तक उन्होंने इसमें सफ़लता पाई।

---

1. डॉ. ओमप्रकाश शर्मा समकालीन महिला लेखन पृ. 177

"महिलावादी चेतना का उभार आधुनिक बौद्धिक विमर्श से ही संभव हुआ है। यह स्वाभाविक है कि इस बौद्धिक चेतन का पोषण कथा-साहित्य के माध्यम से हो। इसी कारण हिन्दी महिला-लेखन का प्रबल आधार कथा-साहित्य बना है। कथा-साहित्य की परिवर्तनशीलता और महिला चिंतन का बदलता परिप्रेक्ष्य परस्पर गूँथकर गतिमान है।"[1]

हिंदी की आधुनिक लेखिकाओं में श्रीमती मन्नू भण्डारी का अग्रगण्य स्थान है। अपनी औपन्यासिक कृतियाँ 'एक इंच मुस्कान' (राजेन्द्रयादव सह लेखक), 'आपका बंटी' 'महाभोज' द्वारा उन्होंने नारी के मानसिक व्यापारों का विविध आयाम, बालमनोविज्ञान तथा आधुनिक नारीत्व, गाँववालों के यथार्थ जीवन आदि विषयों पर परिमार्जित भाषा-शैली द्वारा खूब विचार किया है।

'एल प्लेट सैंलाब' 'नशा' 'श्रेष्ठ कहानियाँ' 'यही सच है' 'मेरी प्रिय कहानियाँ' 'मैं हार गयी' आदि उनकी श्रेष्ठ कहानियाँ हैं।

उषा प्रियंवदा का पहला उपन्यास 'पचपन खंभे लाल दीवारें' में उन्होंने सीमित आयवाले मध्यवर्गीय परिवार में एक पढ़ी-लिखी, नौकरी-पेशा, अधिक उम्र तक अविवाहित रह जानेवाली लड़की की क्या स्थिति होती है, उसे किसप्रकार के मानसिक तनावों और संघर्षों से गुज़रना पड़ता है, इसका अंकन बहुत प्रभावशाली ढंग से किया गया है।

आधुनिक नारी की जटिल मानसिकता, भटकाव, पीड़ा, विद्रोह, आदि अंकित करनेवाला उनका उपन्यास है 'रुकोगी नहीं राधिका' (1967)

---

1. डॉ. ओमप्रकाश शर्मा समकालीन महिला लेखन पृ. 178

अपने दीर्घ अमरीका प्रवास के दौरान लेखिका अमरीकी समाज में स्त्री की, चाहे वह अमरीकी हो या भारतीय, विडम्बनापूर्ण नियति का साक्षात्कार सत्रह वर्ष के बाद 1984 में प्रकाशित 'शेष यात्रा' में देख सकते हैं।

प्रवासी भारतीयों के जीवनसंघर्ष का उपन्यास है 2000 में प्रकाशित 'अन्तर्वंशी'। अपने उपन्यासों द्वारा नारी-जीवन की त्रासद स्थितियों के बयान में उषाजी पूर्णतः सफल दिखाई देती है। 'एक कोई दूसरा' 'कितना बड़ा झूठ' 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' 'मेरी प्रिय कहानियाँ' 'फि बसंत आया' आदि इनके कहानी संग्रह है।

लोकप्रियता की दृष्टि से शिवानी हिंदी की महिला उपन्यास लेखिकाओं में शीर्षस्थानीय हैं। 'पहाडी नारियों की जीवन संघर्ष प्रकट करने वाला उपन्यास 'मायुपुरी' 'चौदह फरे' एक कुष्ठ रोगिणी की दारुण कहानी व्यक्त करनेवाला उपन्यास 'कृष्णकली', 'श्मशान चंपा', 'भैरवी' 'विषकन्या', 'कैंजा' 'रथ्या' 'मणिका' 'किशुनली' आदि उनकी कीर्ति का आधार है। 'रति विलाज़' 'करिए छिमा' 'स्वयंसिद्या' 'पुष्पहार' 'अपराधिनी' 'मेरी प्रिय कहानियाँ' आदि इनके कहानी संग्रह है।

श्रीमती कृष्णा सोबती के पूर्व हिंदी में किसी महिला कथाकार द्वारा स्त्री के स्वैराचार का इतने साफ़ और मुँहफट चित्रण नहीं किया गया। 'मित्रो मरजानी' और 'सूरज मुखी अँधेरे' इसप्रकार के बहुचर्चित उपन्यास है। 'ज़िन्दगीनामा' (1979) बीसवीं शताब्दी के प्रथम पंद्रह वर्षों के किसानों-ग्रामीणों के जीवन का चित्रण है। 'यारों के यार' 'तिन का पहाड़', 'बादलों के घेरे' आदि इनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं। नारी जीवन में यौन-समस्याओं

को लेकर कृष्णा सोबती ने आधुनिक भारतीय पितृसत्तात्मक पारिवारिक - सामाजिक संरचना पर करार प्रहार किया है।

श्रीमती शशिप्रभाशास्त्री का पहला उपन्यास 'अमलतास' में अभिजात वर्ग की उपेक्षित-अवमानित स्त्री की कथा है। उनके अन्य उपन्यास हैं 'नावें' (1974), 'सीढ़ियाँ' (1976), 'परछाइयों के पीछे' (1979), 'ककर्रखा' (1983), 'परसों के बाद' (1985), 'ये छोटे महायुद्ध' (1988), 'उम्र एक गलियारे की' (1989), 'मीनारे' (1992), 'हर दिन इतिहास' (1995) आदि 'परछाइयों के पीछे' एक स्त्री के विविश ज़िन्दगी का चित्रण है तो 'मीनारे' में शिक्षित जगत में व्याप्त भ्रष्टाचार, गूंडागर्दी, राजनीतिक हस्तक्षेप का चित्रण किया है। शशिप्रभाशास्त्रीजी ने उपन्यासों के साथ कहानियाँ और बालसाहित्य भी लिखती हैं। 'धुली हुई शाम' (1969), 'दो कहानियाँ के बीच' (1978), 'अनुत्तरित' (1975), 'जोड़ बाकी' (1981) आदि इनके कहानी संग्रह है। उन्होंने अपना कहानियों द्वारा मुख्य रूप से शिक्षित मध्यवर्गीय परिवारों के दाम्पत्य जीवन की विसंगतियों का बड़ा ही सूक्ष्म विश्लेषण किया है।

मध्यप्रदेश का बस्तर को पृष्ठभूमि बनाकर उपन्यास लिखने वाली श्रीमती मेहरुन्निसा परवेज़ के उपन्यास हैं 'आँखों की दहलीज' और तत्पश्चात् 'उसका घर' (1972), 'कोरजा' (1977 और 'अकेला पलाश' (1981) आदि। 'आँखों की दहलीज' और 'कोरजा' में मुस्लिम समाज की तथा 'उसका घर' में ईसाई परिवार की कहानी कही गयी है। लेखिका ने अपने उपन्यासों में नारी-शोषण के विभिन्न रूपों को गहरी संवेदना के साथ

प्रस्तुत किया है। 'आदम और हव्वा' 'गलत पुरुष' 'आकाश नील' 'अंतिम सच्चाई' 'धुप के एहसास' 'फालगुनी' 'टहनियों की धूप' 'बूँद का हक' आदि इनके कहानी-संग्रह हैं। इन्होंने कलात्मक सहजता के साथ आम नारी की त्रासद स्थिति का चित्रण अपनी रचनाओं में किया हैं।

मृदुला गर्ग (ज. 1938) का पहला उपन्यास 'उसके हिस्से की धूप' में परम्परागत मूल्यों से भिन्न 'आधुनिक' नारी के प्रेम का त्रिकोणात्मक संघर्ष देखा जा सकता है। 'मैं और मैं' (1984) में महानगरीय परिवेश में लेखक-समाज की चारित्रिक विकृतियों के उद्‌घाटन का प्रयास किया है लेखिका ने। 'चित्तकोबरा' (1979), 'अनित्य' (1980), 'कठगुलाब' (1996) आदि उपन्यास भी बहुचर्चित हैं। 'अनित्य' में उन्होंने भारतीय राजनीति को अपना विषय बनाया। 'कठगुलाब' में आधुनिक नारी-जीवन के विभिन्न पहलुओं का चित्रण है। उनके कहनी संग्रह हैं 'कितनी कैदें' (1974), 'टुकड़ा-टुकड़ा आदमी' (1977), 'डैफोडिल जल रहे हैं' (1978), 'ग्लेशियर से' (1980) तथा 'उर्फ सैम' (1986)। नारी-मनोविज्ञान का विश्लेषणात्मक प्रस्तुतीकरण हैं उनकी कहानियाँ।

मंजुल भगत दो उपन्यास हैं 'टूटा हुआ इन्द्र धनुष' और 'लेड़ीज़ क्लब'। उपन्यासों के साथ साथ कहानियों की रचना भी वे करती हैं। 'गुलमोहर के गुच्छे' 'क्या छूट गया' 'आत्महत्या के पहले' (1979), 'कितना छोटा सफ़र' 'बावन पले और एक जोकर' (1982), 'सफ़ेद कौए' (1986) तथा। 'कितना छोटा सफर' (1987) आदि उनके कहानी संग्रह है। कहानियों में नारी-जीवन की विविधमुखी समस्याओं तथा संबंधों का चित्रण लेखिका ने संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत की है।

सूर्यबालाजी अपने 'सुबह के इंतज़ार तक' उपन्यास में निम्नमध्य वर्ग की विद्रूपभरी नियति का सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। इसके ग्यारह वर्ष बाद उनकी 'यामिनी की कथा' (1991) प्रकाशित हुई। 1992 में उनके बहुचर्चित उपन्यास 'जूझ' का प्रकाशन हुआ जिसमें परिसर जीवन की बीभत्स सच्चाई का चित्रण मिलता है। इनके चार कहानी-संग्रह - 'एक इंद्रधनुष जुबेदा के नाम' (1980), 'थाली-भर चाँद' (1988), 'दिशाहीन' (1989), 'मुण्डेय पर' (1990) तथा 'साँझबाती' (1995) द्वारा इन्होंने समकालीन परिवेश का चित्रण किया है।

समकालीन महिला लेखिकाओं में चन्द्रकान्ता का विशिष्ट स्थान है। 1981 में उनके दो लघु उपन्यास 'अर्थान्तर' और 'अन्तिम साक्ष्य' प्रकाशित हुए। 1983 में 'बाकी सब खैसियत है' 1984 में 'ऐलान गली जिन्दा है। आदि का प्रकाशन भी हुआ है। 'यहाँ वितस्ता बहती है' (1992), 'अपने-अपने कोणार्क' (1995) आदि बाद में छपे हैं। 'बाकी सब खैसियत' में लेखिका ने पारिवारिक विघटन, कुंठाग्रस्त मध्यवर्गीय और विदेशी मानसिकता ग्रस्त आधुनिक दृष्टियों के द्वन्द्व की अभिव्यक्ति की है। 'अपने-अपने कोणार्क' द्वारा लेखिका ने एक अविवाहित, अधिक उम्रवाली युवति की कहानी कही गयी है।

श्रीमती राजी सेठ नवें दशक की एक उल्लेखनीय लेखिका है, जिनके उपन्यास 'तत्सम' (1983) में आधुनिक नारी के पुनर्विवाह की समस्या के गहरे संवेदनात्मक स्तर पर प्रस्तुत किया है। इनके तीन कहानी संग्रह हैं 'अंधे मोड़ से आगे' (1979), 'तीसरी हथेली' (1981) तथा 'यात्रा मुक्त' (1987) आदि।

'नासिरा शर्मा' समकालीन कथा-साहित्य में इस्लामिक परिवेश को पृष्ठभूमि बनाकर रचनाएँ करनेवाली लेखिका है। उनके पहला उपन्यास 'सात नदियाँ एक समुन्दर' (1984) में आधुनिक ईरान की पृष्ठभूमि में आयत्तुल्ला खुमैनी की रक्तरंजित इस्लामी क्रांति पर आधारित उपन्यास है। 'श्यामली' 91987), 'ठीकरे की मँगनी' (1986), 'जिन्दा मुहावरे' (1993) आदि इनके अन्य उपन्यास हैं। उनके उपन्यासों का मुख्य स्वर सांप्रदायिकता है। 'पत्थर गली' 'सबीना के चालिस चोर' इनके कहानी संग्रह है।

श्रीमती प्रभाखेतान का पहला उपन्यास 'आओ पेपे घर चलें' (1990) में प्रकाशित किया, जो मुख्यतः स्त्री केंद्रित है। 'तालाबन्दी' (1991), 'छिन्नमस्ता' (1993), 'अपने अपने चेहरे' (1994), 'पीली आँधी' (1996) आदि बाद में प्रकाशित उपन्यास है।

महिला साहित्यकारों एक अलग व्यक्तित्व का पहचान 'मैत्रेयी पुष्पा' का है। उनके उपन्यास लेखन की शुरुआत 1990 में प्रकाशित 'स्मृति दंश' से हुई। 1993 में दूसरा लघु उपन्यास 'बेतवा बहती रही' का प्रकाशन हुआ। दोनों में पम्परागत पुरुष समाज द्वारा स्त्री पर होनेवाले अत्याचार का अंकन है। उपन्यासकार के रूप में मैत्रेयी का पहली पहचान 'इदन्नमम' (1994) द्वार हुई। बुंदेलखंड और बीहार के आंचलिक जीवन, नारी समस्याओं द्वारा प्रस्तुत की है इदन्नमम के बाद 'चाक' (1997), 'झूलानट' (1999), 'अल्मा कबूतरी' (2000), 'विज़न' (2002), 'कही ईसुरी फाग' (2003), 'कस्तूरी कुंडली बसै' (2002) आदि उपन्यासों द्वारा मैत्रेयी जी ने स्त्रियों के पारिवारिक जीवन की समस्याएँ, पारिस्थितिक

कटाव, भूमण्डलीकरण, दलित-जीवन, किसानों के जीवन संघर्ष, जनजाती की समस्याएँ आदि का मार्मिक चित्रण करने का प्रयास की है। 'चिह्नार' 'ललमनियाँ' 'गोमा हँसती है' इनके तीन कहानी संग्रह है।

चित्रा मुद्गल के उपन्यास 'एक ज़मीन अपनी' (1990) में बम्बई के महानगरीय परिवेश के विज्ञापन-जगत् के ग्लैमर, मूल्यहीन प्रतियोगिता, तिकड़म, देश-व्यापार आदि के बीच प्रस्तुत 'नारी विमर्श' का चित्रण है। उनके दूसरे उपन्यास 'आवां' (2000) एक घुटन भरे मध्यवर्गीय परिवार में जन्मी एक नौजवान लड़की की कहानी है। 'जहर ठहरा हुआ' (1980), 'लक्षागृह' (1982), 'अपनी वापसी' (1983), 'इस हमाम में' (1987) तथा 'ग्यारह लंबी कहानियाँ' (1987) इनके कहानी संग्रह है।

विवेच्य लेखिकाओं के साथ कृष्णा अग्निहोत्री, दीप्ति खण्डेलवाल, नमितासिंह, मणिका मोहिनी, ममता कालिया महीप सिंह, मालती जोशी, मृणाल पाण्डेय, अलगा सगावरी, नासिरा शर्मा आदि बहुसंख्य लेखिकाओं की संभावनाओं हम भूल नहीं सकते।

समकालीन महिला लेखिकाओं की संख्या दिन व दिन बढ़ती जा रही है। नारी-जागृति के इस युग में समाज में होने वाली सारी घटनाओं के प्रति सजग रहना अनिवार्य है। इसकेलिए नारियों को सक्षम बनाना महिला साहित्यकारों का लक्ष्य है। परिवार में, समाज में, जीवन के हर क्षेत्र में समीकरण केलिए प्रयत्न करती हैं वे। इन्होंने स्त्री की व्यथा-पीड़ा को स्त्री की दृष्टि से उकेर कर एक सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि विकसित करने का प्रयास किया है।

मैत्रेयी पुष्पा के व्यक्तित्व एवं कृतित्व

श्रीमती मैत्रेयीपुष्पा अपनी अलग साहित्यिक प्रतिभा के कारण हिन्दी साहित्य जगत में आज यशस्वी बन गयी है। उनका जन्म 1944 नवंबर 30 को अलीगढ़ जिले के सिकुर्री गांव में हुआ था। माँ श्रीमती कस्तूरी देवी और पिता श्री हीरालाल थे। उनकी आरंभिक शिक्षा जिला झांसी के खिली गांव में हुआ था। फिर मोठ के डी.वी. इंटर कॉलेज से वे बारहवीं कक्षा पास की। झांसी के बुंदेलखंड कालेज से हिन्दी साहित्य में बि.ए. और एम.ए की उपाधि प्राप्त की।

मैत्रेयीजी ने कालेज के दिनों से ही लिखना प्रारंभ कर दिया था। उनकी पहली कविता बाड़े में काम करनेवाली महिलाओं के बारे में थी, जो अखबार में छपी थी, जिसे पढ़कर बाड़े के लोग उत्तेजित हो गए और मैत्रेयी को वहाँ से कमरा खाली करना पड़ा। बीस-इक्कीस वर्ष की अवस्था में उनका विवाह अलीगढ़ के डॉ. रमेश चंद्र शर्मा के साथ था जो दिल्ली में 'अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान' में चिकित्सक थे। उनकी तीन बेटियाँ थीं। कस्तूरी देवी बेटी के विवाह के विरोध में थी। वे चाहती थी कि अपनी बेटी शादी के झंझट में न पड़कर नौकरी करें और अपनी पैरों पर खड़ी हों।

मैत्रेयी का बचपन बुंदेलखंड के ग्रामीण परिवेश में था और य वातावरण उनके मन को हमेशा मोहित करती थी। युवावस्था में वे झांसी शहर में आयी थी। यहाँ आकर कालेज के शहरी वातावरण में उनको कई परेशानियों का सामना करना पड़ा। माँ का मज़बूत स्वभाव का प्रभाव

मैत्रेयी पर गहरा असर डाला। बुदेलखंड का ग्रामीण परिवेश और माँ से प्रेरणा पाकर मैत्रेयीजी ने साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी लेखनी चलाई।

'लकीरें' मैत्रेयीजी का कविता-संग्रह है। साहित्य के क्षेत्र में एक नया आयाम लाने का उनकी कोशिश है 'खुली खिड़कियाँ' (स्त्री-विमर्श)। उनकी आत्मकथा 'गुड़िया भीतर गुड़िया' (2008) अभी अभी प्रकाशित हो चुकी है।

मैत्रेयीजी के कहानी संग्रह हैं 'चिह्नार' (1991), 'ललमनियाँ' (1996) और 'गोमा हँसती है' (1998)

'स्मृति दंश' (1991) उनका पहला उपन्यास है। उनके अन्य उपन्यास हैं 'बेतवा बेहती रहीं (1994), 'इदन्नमम' (1994), 'चाक' (1997) 'झूलानट' (1998), 'अलमाकबूतरी' (2000), 'अगनपाखी' (2001), 'विजन' (2002), 'कस्तूरी कुंडल बसै' (2002) और 'कही ईसुरी फाग' (2004)

नारी संबंधी अपने विचारों की अभिव्यक्ति केलिए मैत्रेयीजी ने 'खुली खिडकियाँ' की रचना की है।

ज़िंदगी के सभी क्षेत्रों में नारी शोषित है; पढ़ी-लिखी होने पर भी नौकरी के क्षेत्र में भी वहशोषित है। वैवाहिक-जीवन में शारीरिक, मानसिक और आर्थिक शोषम आज भी चल रहे हैं। शादीशुदा नारी को अपने नाम और व्यक्तित्व भी नष्ट होते हैं। पति के नाम उसको अपने नाम के साथ जुड़ना है। मैत्रेयीजी ने 'खुली खिड़कियाँ' नामक अपने 'स्त्री-विमर्श' कृति

द्वारा अपने प्रति हो रहे शोषण के प्रति नारियों में सजगत लाने की कोशिश की है। शोषण के प्रति सशक्त विद्रोह प्रकट करने की आवश्यकता समझाने केलिए लेखिका ने अपने प्रस्तुत किया है। 'खुली खिड़कियाँ' इस कोटि के बहुचर्चित रचना है।

बुंदेलखंड की आंचलिक स्मृतियों के आधार अपने विवाहपूर्ण जीवन का चित्रण 'कस्तूरी कुंडल बसै' में है तो 'गुड़िया भीतर गुड़िया' में मैत्रेयी जी ने अपनी विवाहोत्तरी 'व्यथा कथा' कहने की कोशिश की है, अपने वैवाहिक जीवन की विडंबनाओं के साथ अपनी रचना-प्रक्रिया एवं साहित्यिक संघर्ष को भी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है।

सन् 1967 में डॉ. रमेशचंद्र शमी को 'अखिल-भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान' में नौकरी मिलने पर वे अलीगढ़ से दिल्ली आ गए थे। बाद में पति और तीन बेटियाँ के साथ नोएड़ा में 'सेटिल' हो गए।

विवाह के पहले मैत्रेयीजी माँ के कठोर नियंत्रण और निर्देशन के कारण परेशान रहती थी लेकिन विवाह के बाद पति के नियंत्रण और संकुचित चिंतन के कारण ज़्यादा परेशान एवं व्यथित रहने लगी। डॉ. शर्मा, चिकित्सक होने हुए भी एक सामान्य भारतीय पति जैसे ही हैं, इसलिए मैत्रेयीजी को घरेलू सीमा के भीतर रहना चाहते हैं। लेकिन मैत्रेयी के अंतर के साहित्यकार बंधनों तोड़कर बाहर आने की कोशिश करती है। इसलिए उसको डॉ. सिद्धार्थ और डॉ. राजेंद्र यादव के नाम पर बदनामी भी सुननी पड़ी। इसप्रकार मैत्रेयीजी के विवाहोपरांत जीवन और साहित्यिक सृष्टि की प्रेरणास्रोत घटनाओं का वर्णन ही 'गुड़िया भीतर गुड़िया' का विषय।

मानव-जीवन के यथार्थ के चित्रण में कहानी और उपन्यासों की क्षमता अन्य कोई साहित्यिक विधा को नहीं है। इसलिए मैत्रेयीजी ने कथा-साहित्य को अपनी विचाराभिक्ति का माध्यम बनाया। लेखिका ने अपने जिए हुए परिवेश को जिस सहजता और स्वाभाविकता से अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया है, लगता है यह केवल रचनाएँ नहीं, समाज का दस्तावेज है, भारत के ग्रामीण समाज का आईना है।

मैत्रेयीजी की कहानियाँ

आज की चर्चित महिला लेखिका श्रीमती मैत्रेयी पुष्पा के तीन कहानी-संग्रह अब तक प्रकाशित हो चुके हैं 'चिह्नार' 'ललमनियाँ' 'गोमा हँसती हैं'। तीनों में उनकी अस्मिता की झलक स्पष्ट दिखाई पड़ती है। नारीशोषण के प्रति सशक्त विद्रोह, वृद्धों, अशिक्षित, विधवा नारियों का चित्रण आंचलिकता की पृष्ठभूमि में लेखिका ने अपने विचार, विद्रोह व अनुभव के साथ चित्रित किये हैं। मैत्रेयीजी का पहला कहानी संग्रह 'चिह्नार' का प्रकाशन आर्यप्रकाश मंडल द्वारा 1991 में हुआ है। 'चिह्नार' में कुल-मिलाकर बारह कहानियाँ निहित है।

पहली कथा 'अपना अपना आकाश' द्वारा लेखिका ने एक वृद्ध ग्रामीण निरक्षर विधवा की निरालंबन की कथा मार्मिक ढ़ंग से चित्रित किया है। 'बेटी' 'सहचर' 'बहलिये' नामक तीन कहानियों में शिक्षा से वंचित होने के कारण शोषण के शिकार बननेवाली नारियों की हैं। 'मन नाहिं दस बीस' में ग्रामीण किसान, नारी शोषण के प्रति विद्रोह आदि का अनुभूतिजन्य चित्रण चंदना, आनंदहिंस, स्वराजवर्मा आदि पात्रों द्वारा लेखिका ने किया है।

'हवा बदल चुकी है' गाँधीवादी सुजानठाकुर की कहानी है जो समकालीन राजनीतिक पृष्ठभूमि में चित्रित है। 'आक्षेप' में लेखिका ने एक सशक्त नारी पात्र का चित्रण किया है जो बदनामी की परवाह किये बिना समाज के दुखितों-पीड़ितों की मदद केलिए हाज़िर हो। 'कृतज्ञ' भी नारी शोषण की कहानी है। 'सफर के बीच' गिरिराज की आई.ए.एस. पद के नाम दुरुपयोग करनेवालों की कहानी है। 'केतकी' 'चिह्नार' कथा संग्रह की नारी विद्रोह प्रकट करनेवाली सशक्त कहानी है जिसमें अपने बाप के उम्रवाले गँधर्वसिंह के बलात्कार के शिकार वाली केतकी का विद्रोह लेखिका ने अत्यंत मार्मिक ढंग से किया है। 'चिह्नार' सरजू की दुःख भरी कहानी है, दिशाहीन पति को स्नेह करनेवाली, बच्ची अपने होने पर भी उसकी नौकरी बनकर जीनेवाली सरजू एक शोषित नारी का प्रतीक है। मैत्रेयीजी के दूसरा कहानी संग्रह - 'ललमनियां' का प्रकाशन किताबघर द्वारा 1996 में हुआ। 'ललमनियां' दस कहानियों का संग्रह है। "फैसला" इस कहानी संग्रह की पहली कहानी है और यह 'वसुमति की चिट्टी' नाम से टेलिफिल्म के रूप में संप्रेषित किया गया। कुलीन और शिक्षित होने पर भी राजनीतिक क्षेत्र में किसी पद विराजित है तो भी नारी को आदमी का, कभी पति का, कभी पिता का गुलाम बनना पड़ता है। पति के बंधन छोड़कर स्त्रियों केलिए कुछ करने का निश्चय ईसुरिया (दलित नारी) की प्रेरणा से वसुमति ने लिया, लेकिन असफल हो पाई। 'सिस्टर' नामक दूसरी कहानी में डोरोथी डिसूसा नामक नर्स के द्वारा स्त्रियों की आत्मनिर्भरता, निराशा, कुंठा, अकेलापन और वात्सल्य का चित्रण लेखिका ने किया है। 'सेंध' में मैत्रेयीजी ने ग्रामीण किसान की दयनीय स्थिति और 'चंकबंदी' जैसे पूँजीवादी भ्रष्टाचार व्यक्त

किया है। 'आज फूल नहीं खिलते' में झरना की कहानी है। गाँव से शहर आकर पढ़नेवाली झरना को अध्यापक से बुरा अनुभव हुआ और प्रिन्सिपल से यौन-शोषण भी भोगना पड़ा। शोषण के विरद्ध-झरता अपनी सारी ताकत लेकर प्रतिक्रिया भी करती है। एक तीन वर्षीय बालक की दृष्टि से ग्रामीण और शहरीय संस्कृति का अंतर 'बोझ' का कथानक है।

एक ग्रामीण अशिक्षित विधवा भागवती के विद्रोह की कहानी है 'पागल हो गयी भागवती'। हमारे समाज में आदमी की गलती बडी है तो भी समाज उसको माफ़ी देगा लेकिन गलती छोटी होने पर भी समाज स्त्री को माफ़ी नहीं देगा। 'छाँह' दूसरी कहानियों से भिन्न बत्तासो सक्कीन नामक एक मुस्लिम औरत की ज़िन्दगी की विडंबनाओं की कहानी है। बत्ताओ सक्कीन का पति एक सांप्रदायिक दंगे में मारा गया था। ददुआ और उसके पोता को जो हिंदू होते हुए भी वे छाँह देती है। 'तुम किसकी हो बिन्नी' में लेखिका ने आज भी समाज में चलती रहती एक कुरीति पर प्रकाश डाला है। बच्चा, लड़की होने पर गर्भ से उसे मार डालने को तैयार होनेवाली बिन्नी की माँ और माँ-बाप के वात्सल्य से वंचित छोटी बिन्नी की कहानी इसमें है। नन्ही पिंडकुल और उसकी माँ की कहानी है 'ललमनियां'। अपना दुःख और गरीबी हटाने के लिए पिंडकुल की माँ एक शादी में ललमनियाँ नाचने गयी और अंत में समझ गया विवाह का वर पिंडकुल का बाप था। प्रस्तुत कहानी-संग्रह की अधिकांश कहानियाँ नारी शोषण के विविध आयाम को लेकर आँचलिक धरातल पर लिखी गई हैं।

'गोमा हँसती है' मैत्रेयीजी का अंतिम कहानी-संग्रह है, जिसका प्रकाशन किताबघर द्वारा सन् 1998 में हुआ। इसमें दस कहानियाँ है।

राजेंद्रयादव के अनुसार मैत्रेयी जी की कहानियों की भाषा और मुहावरे में भी 'मिट्टी की गंध' समेटी है। नारी-शोषण के विरुद्ध अपने विद्रोह प्रकट करने केलिए लेखिका अपने पात्रों से स्थानीय भाषा का प्रयोग कराती हैं।

इस कहानी-संग्रह की पहली कहानी 'शतरंज के खिलाड़ी' (प्रेमचंद की कहानी का शीर्षक लेखिका ने प्रयोग किया है) आज की भारतीय राजनीति का दस्तावेज है। आज की राजनीति में जो छल-कपट, मारकाट, चुनाव में हो रहे भ्रष्टाचार आदि का खुला चित्रण इसमें देख सकते हैं।

अपनी दूसरी कहानियों से बिन्न एक अलग ढ़ंग से लिखी गयी कहानी है 'राय प्रवीण'। इसमें नायक की भावना से उत्पन्न कथा और यथार्थ ज़िन्दगी में घटित कथा का मिश्रण किया गया है। राय-प्रवीण अकबर बादशाह को मोहित की जानेवाली एक वेश्या थी (जिसकी कथा नायक गाइड़ गोविन्द की भावना से उत्पन्न हुई है)। सावित्री नामक एक कुलीन महिला राय-प्रवीण जैसी वेश्या बन गयी। उसको अपना शरीर बेचकर राहत कैंप के निवासियों को अफ़सरों से भोजन लाना पड़ा। इससे स्पष्ट है कि आज की राजनीति में अन्य भ्रष्टाचारों के साथ नारी-बलात्कार भी होता रहता है। 'बिछुडे हुए' पति द्वारा उपेक्षित, एक जवान बेटी वाली, ग्रामीण महिला चंदा की करुण कहानी है। 'प्रेम भाई एण्ड पार्टी' में राजनीतिक भ्रष्टाचार का सजीव चित्रण है। ताला खुला है पापा', 'बारहवीं रात' आदि नारीशोषण की कहानी है। 'साँप-सीढ़ी' में रिश्वत देकर नौकरी कमाने की युवा-पीढ़ी का प्रतीक राजन की कथा है, उसने ससुर से पैसा माँगने केलिए पत्नी को मायके भेज दिया। 'रास' लोकगीत-नृत्य युक्त आंचलिक संस्कार

का चित्रण है। 'गोमा हँसती है' गोमा के सशक्त विद्रोह की कहानी है। इसप्रकार मैत्रेयीजी के तीनों कहानी संग्रहों की कहानियों द्वारा आज के समाज का यथार्थ चित्र हमको मिलता है। उनकी भाषा और शिल्प वातावरण के अनुकूल है।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास

मैत्रेयीजी का सबसे पहला उपन्यास है 'स्मृतिदंश'। इसमें लेखिका शीतलग़ी और चांदपुर को पृष्ठभूमि में रखकर ग्रामीण लड़कियों की वैवाहिक समस्याओं का चित्रण खुरदरे यथार्थ के साथ प्रस्तुत करती हैं। यहाँ चंदर की स्मृति के रूप में पूरी कथा हमारे सामने उभरती है। चंदर के मन की विक्षुब्धता, विचार-विकार हम आत्मसात करते हैं। अशिक्षित अनाथ भुवन मोहिनी नाना के संरक्षण में थी, जो रिश्ते में चंदर की मौसी थी। भुवन की शादी चांदपुर के कुंवर विजयसिंह के साथ हुआ था, जो पागल था। एक बड़े घराने से रिश्ता आने का कारण यही था। सच्चाई जानते ही भुवन की ज़िन्दगी के सारा स्वप्न, प्रतीक्षा, आकांक्षा सब चकनाचूर हो गए। घर की ज़िम्मेदारी लेकर पति-देव की शुश्रूषा करके हवेली के अंधेरे में ज़िन्दगी बिताना उसकी नियति थी। जेष्ठ पत्नी के हाथों से उसकी मृत्यु भी हुई।

मैत्रेयीजी का दूसरा उपन्यास 'बेतवा बहती रही' का प्रकाशन सन् 1994 में किताबघर प्रकाशन द्वारा हुआ था। बेतवा नदी के किनारे सिरसा गाँव के निवासी अपनी ज़िन्दगी बिता रहे हैं। बेतवा में जल नहीं, वहाँ की नारियों के आँसू ही बहते हैं। इसकी नायिका उर्वशी का चित्रण मैत्रेयीजी ने

स्वाभाविकता से किया है, हमें लगता है वह एक भारतीय ग्रामीण नारी का प्रतीक है। उर्वशी अदम्य सुंदरी थी। बेटी, पत्नी, माँ, सहेली, बहु, बहन आदि भूमिकाओं में उर्वशी हमारे सामने उभरती है।

उर्वशी की अंतरंग सखी मीरा की स्मृतियों द्वारा उसकी संघर्षमय जिन्दगी आगे बढ़ रही है। उर्वशी को स्कूली शिक्षा नहीं मिली, फिर भी वह पढ़-लिख सकती है। मीरा शिक्षित लड़की है। उर्वशी की शादी सिरसा के वकील सर्वदमन के साथ हुआ। बेटे देवेश के जनम होते ही एक दुर्घटना में सर्वदमन की मृत्यु हुई। विधवा उर्वशी को मीरा के पिता की दूसरी पत्नी बननी पड़ी। अंत में 'किड्नी फेयिलुर' के कारण उसकी मृत्यु हुई। ज़िन्दगी की सभी पहलुओं में, जो नारी-शोषण है, उसका का यथार्थ चित्रण 'बेतवा बहती रही' में दिखाई पड़ता है।

'झूलानट' मैत्रेयीजी का एक अलग उपन्यास है। यह उनकी औपन्यासिक कुशलता का एक अजीब दस्तावेज है जिसमें समांतर कहानियाँ पर्याप्तमात्रा में नहीं है। मैत्रेयीजी की दूसरी नायिकाओं से भिन्न 'झूलानट' की शीलो ने गाँव की संस्कृति और आचार-विचार के प्रति चुनौती देती है। शीलो चिरगाँव के एक गरीब परिवार से सुमेर की वधु बनकर आयी थी। सुमेर ने उसे छोड़कर शहर जाकर दूसरी शादी की। सात बरसों तक ससुराल में शीलो को अनब्याही ही रहनी पड़ी। सुमेर की माँ की प्रेरणा से वह सुमेर के छोटे भाई बालकिशन की वधु बन गयी, बिना ब्याह के। बालकिशन की पत्नी के रूप में शीलो को मानने केलिए गांव में 'बछिया' अनिवार्य है, लेकिन शीलो तैयार नहीं। शीलो के मादक रूप ने बालकिशन

को कामांधता की गहराई में डुबोया। अपनी बीमारी, शीलो और माँ की लड़ाई, शीलो के प्रति शारीरिक आकर्षण, सुमेर से भय आदि के कारण बालु का मन-संतुलन छूट गया। एक बार वह शीलो समझकर माँ के साथ सेक्स करने लगा। अंत में घर से भागकर उसको सन्यासी बनना पड़ा, फिर भी उसको सफ़लता नहीं मिली। मैत्रेयीजी ने यहाँ शीलो का प्रस्तुतीकरण एक विद्रोहिणी नारी जैसे किया है।

'इदन्नमम' मैत्रेयीजी के औपन्यासिक व्यक्तित्व की पहचान है। इसमें श्यामली और सोनपुरा नामक दो गाँवों में होनेवाली तीन पीढ़ियों की बेहद सहज और संवेदनशील कथा है। अनुभव और विचार से भरे इस उपन्यास में बऊ, प्रेम और मंदा की कहानियाँ समांतर रूप से अंत तक पहुँचती है। बऊ युवावस्था में विधवा हो गयी, राजनीतिक दंगे में पड़कर बेटा मर गया, बहु रत्नसिंह यादव के साथ भाग गयी। पोती मंदा का भार उस पर पड़ा। मंदा की देख-रेख केलिए वे श्यामली में पंचमसिंह के हवेली गए। वहाँ से उनको ओरछा और बिरगाँव जाना पड़ा। बिरगाँव में कैलास-मास्टर ने मंदा का बलात्कार किया।

दूसरे चरण में बऊ और मंदा सोनपुरा लौट गयी और समझ गयी उनकी सारी संपत्ति दादा के भाई द्वारा हड़प गयी। मंदा गाँव के मज़दूरों के शोषण के प्रति टीकमसिंह के साथ विद्रोह करने लगी। गाँव के अस्पताल में डाक्टर और कंपाउण्डर का प्रबंध किया गया। अंत में मंदा की संघर्षमय जीवन-यात्रा सफलता की ट्योड़ी पर पहुँच गयी। मंदाकिनी की मूलकथा के साथ हुई उपकथाएँ चलती रहती हैं, जो तत्कालीन आंचलिकता, राजनीति,

भूमण्डलीकरण का दुष्प्रभाव, पारिस्थितिक सजगता, नारी-शोषण, दलित-शोषण, शोषण के प्रति विद्रोह आदि सभी परिस्थितियों का द्योतक है।

'अगनपाखी' उपन्यास का नयापन इस बात में निहित है कि यह समाज को एक नए अंदाज़ में देखने की दृष्टि प्रदान करता है। भारतीय अपनी सभ्यता और संस्कार के अनुसार जिन आचार-विचार, व्यवहार, कानून आदि को सहज मानते हैं, उसी पर मैत्रेयीजी ने इस उपन्यास द्वारा प्रश्न-चिह्न लगा दिया है। भारत की मिट्टी की सुगंध से भरापूरा यह उपन्यास हमारी सामाजिक व्यवस्था का प्रमाण है। इस उपन्यास का निकट संबंध लेखिका के पहला उपन्यास 'स्मृतिदंश' से है।

चंदप्रकाश की स्मृतियों के पृष्ठों से हम भुवनमोहिनी की कथा पढ़ सकते हैं। ग्रामीण परिवेश में रची इस कहानी का परिवेश शीतलगढ़ी, विराट, झाँसी आदि गाँव है। भुवन चंदर की मौसी थी, बराबर उम्रवाले। बचपन में वे साथ-साथ खेलते और जीते थे। जवान होने पर केवल एक बार दोनों के बीच शारीरिक संबंध हुआ। जिस परिवेश और परिस्थिति में चंदर और भुवन पल बढ़कर उम्र के ऐसे दौर में पहुँचे थे, उसमें यह सब होना स्वाभाविक नहीं तो असंभव भी नहीं है। बाद में भुवन की शादी कुंवर विजय सिंह के साथ हुई जो पागल था। विजय मरने पर भुवन मंदिर के पुजारी की मदद से 'सति' बनने से बच गयी और कई वर्षों के अज्ञातवास के बाद विजयसिंह के जेठ अजयसिंह के नाम पर बंटवारे केलिए अर्जी दिया। अपनी पीड़ादायक ज़िंदगी से ताकत पाकर भुवन चंडिका का अवतार बन गयी, नारी-विद्रोह का प्रतीक बन गई।

'चाक' मैत्रेयीजी का एक सशक्त उपन्यास है जिसमें विभिन्न राजनैतिक परिस्थितियों में कथा का उतार-चढ़ाव देखा जा सकता है। सामाजिक व्यवस्था का खंडन करनेवाली नारी को माँफी देने केलिए कोई भी तैयार नहीं हो जाएगा। पतिव्रता धर्म तोड़नेवाली रेशम को सामंती व्यवस्था चलानेवाले समाज ने मृत्यु का दण्ड दिया। सारंग, रेशम के हत्यारे को कानून के आगे लाने केलिए विद्रोह करने लगी। पति से और गाँव के सत्ताधारियों से अवगणना पाने पर उसने स्कूल के मास्टर श्रीधर प्रजापति पर अपना आश्रय पाया और उनसे शारीरिक संबंध भी हुआ। यहाँ सारंग ने एक ग्रामीण कुलवधु होने पर भी अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाने की हिम्मत दिखायी। सारंग और रेशम की कहानी के साथ साथ कई समांतर कहानियों भी उपन्यास में है। ज़िन्दगी के 'चाक' आगे चलने के साथ, परिवेश और परिस्थितियाँ बदलने के साथ नारियों के अधिकारों केलिए चुनौती देने का साहस आज की नारियों में होना चाहिए, इसकेलिए प्रेरणादायक होगा 'सारंग' की यह कहानी।

'अल्मा कबूतरी' में मैत्रेयीजी ने 'कबूतरा' नामक एक अपराध जन-जाति के जीवन-संघर्ष की कहानी बतायी। कज्जा और कबूतरा के परस्पर द्वन्द्व और कबूतरा-वर्ग के शोषण, उनकी संस्कृति, शोषण के प्रति उनका विद्रोह, दलित नारी शोषण आदि का चित्रण लेखिका ने प्रस्तुत किया है। कबूतरा समाज में कदमबाई, भूरी, अल्मा, राणा, रामसिंह, सरमन, दूलन आदि पात्र हैं और कज्जे में मंसाराम, जोधा, केहर सिंह, धीरज, सूरजमान, श्रीराम शास्त्री आदि हैं। इन लोगों के बीच के संघर्ष की कहानी है 'अल्मा कबूतरी'।

मैत्रेयीजी के दूसरे उपन्यासों से अलग 'विज़न' का माहौल शहरीय है और इसकी दो नायिकाएँ पढ़ी-लिखी है नेत्र चिकित्सक हैं। नारी-जीवन का संघर्ष केवल गँवई अशिक्षित महिलाओं को नहीं शहरीय पढ़ी-लिखी कामकाजी महिलाओं को भी झेलना पड़ा। पुरुषवर्चस्ववाले इस दुनिया में स्त्री द्वारा अपनी अस्मिता का तलाश और समाज में अपनी उपस्थिति की पहचान केलिए लड़ना कठिन कार्य है। मैत्रेयीजी ने अपने इस उपन्यास में जुझारू नारी पात्रों द्वारा अपने अधिकारों केलिए लडनेवाली नारियों की ज़िन्दगी का चित्रण किया है। डाक्टरों के पेशे, नैतिकता, जीवन-मूल्यों को लेकर लिखा संभवतः यह हिंदी का पहला उपन्यास है। डॉ. नेहा और डॉ. आभा की ज़िन्दगी के शोषण और विद्रोह, पारिवारिक और नौकरी के क्षेत्र में की कथा है 'विज़न'।

'कस्तूरी कुंडल बसै' मैत्रेयीजी की उपन्यास जोड़-आत्मकथा है। इसमें उपन्यास और आत्मकथा के तत्व समान रूप से बेजोड़ है। मैत्रेयी और अपनी माँ कस्तूरी की कहानी पढ़कर पाठकों को समझ लिया जाएगा कि मैत्रेयीजी की रचनाओं की प्रेरणाश्रोत ऊर्जा, ताकत और अनुभव अपने ही ज़िंदगी से मिल गई है। भुवन, उर्वशी, मंदा, अल्मा, सारंग, रज्जो आदि मैत्रेयी की नायिकाओं में उनकी अपनी झलक कभी कभी देख सकते हैं। इस उपन्यास की आत्मा मैत्रेयी से ज़्यादा कस्तूरी के जीवन-संघर्ष की गाथा है।

'कही ईसुरी फाग' की रचना के पीछे मैत्रेयीजी का वह लोकानुराग है जो बचपन से उनकी सामाजिक पारिवारिक संस्कृति से संबंधित है। पृष्ठभूमि बुंदेलखडी परिवेश है। यह केवल फागवी ईसरी और उसकी

बदनाम प्रेमिका रजऊ की कहानी नहीं, स्त्री-पुरुष के दुःखद संबंधों, स्त्री-जीवन की पीड़ा और विद्रोह की कहानी है। ईसुरी लोक साहित्य एक महान कवि माना जाता था - उनकी ज़िन्दगी के बारे में ऋतु ने शोध किया, लेकिन प्रामाणिकता पर शक होने के कारण उसका गाइड डॉ. प्रमोदकुमार पाण्डेय ने इस शोध प्रबंध अस्वीकार किया। लेखिका ने यहाँ शास्त्रानुगामी अभिजनों और वर्चस्वी पुरुष मानस की सनातन सत्ताकांक्षा और लोकविमुखता का रहस्य खोला है।

मैत्रेयी को उनकी विभिन्न कृतियों केलिए कई पुरस्कार मिला है। 'इदन्नमम' को नंजनगुड्ड तिरुमलांबा पुरस्कार (शाश्वती संस्था बंगलौर), वीरसिंह देव पुरस्कार, 'फैसला' कहानी पर कथा पुरस्कार, हिन्दी अकादमी द्वारा सम्मानित 'साहित्यिक सम्मान' (1996-97) 'अल्मा कबूती' केलिए सार्क साहित्य पुरस्कार, साहित्यिक सम्मान, प्रेमचंद सम्मान, सन् 2003 के सरोजिनी नायिडु पुरस्कार आदि साहित्य जगत के प्रतिष्ठित पुरस्कार से वे सम्मानित थे।

असल में मैत्रेयी पुष्पा समकालीन हिंदी कथा-साहित्य की सशक्त हस्ताक्षर हैं। उनके कथासाहित्य गाँव के परिवेश में निर्मित है। आज गाँव से दूर-दूर जानेवाले कथा जगत केलिए यह महत्व की बात है। उपेक्षित, पीड़ित हाशियाकृत लोगों को केंद्र में रखकर उन्होंने अपनी रचनाओं का प्रणयन किया। इन सबके साथ समकालीन स्पंदनों को आत्मसात करने में उनकी रचनाएँ समर्थ हुई है। इसलिए उनका कथा साहित्य विशेष अध्ययन का योग्य है।

अध्याय-2

मैत्रेयीपुष्पा के कथा-साहित्य में नारी-शोषण और शोषण के विरुद्ध विद्रोह

मैत्रेयीपुष्पा के कथा-साहित्य में नारी-शोषण और शोषण के विरुद्ध विद्रोह

नारीशोषण परिवार में

नारी और परिवार में शरीर और प्राण जैसा संबंध है। विशेषतः भारतीय संदर्भ में परिवार हमारे जीवन का आधार है। पश्चिमी संस्कृति के नकल की होड़ में हमारे संयुक्त परिवार के स्थान पर आज अणु-परिवार का बोलबाला है। बदलते परिप्रेक्ष्य में पारिवारिक स्तर पर नारियों की सुरक्षा भी नष्ट होती जा रही है, अपने घरों में भी वे चैन से रह नहीं सकती।

जिंदगी में नारी को भिन्न-भिन्न दायित्व निभाना पड़ता है जैसे माँ, पत्नी, बेटी, बहन, बहु, नानी, बुआ आदि। कितने करुणामय होने पर भी वह बदनामी से मुक्त नहीं है, अनपढ़ हो तो परिवार और समाज में उसका शोषण ज़रूर होगा। नारी के सबसे आदरणीय रूप माँ का है, लेकिन आज माँ के रूप में भी उसको शोषण अनुभव करना पड़ा, मानसिक, शारीरिक और आर्थिक रूप से। आज की पीढी को वृद्ध माता-पिता बेकार चीज़ जैसे हैं, किसी प्रकार उनका बोझ कहीं उतरा ही उनका लक्ष्य है, इसलिए वृद्ध सदनों की भरमार दिन व दिन बढ़ती जा रही है।

'अपना अपना आकाश' कहानी में कैलाशोदेवी नामक वृद्ध माँ की कहानी लेखिका ने अत्यंत मार्मिक ढंग से लिखी है। तीन बेटे और बहुएँ

होने पर भी उनके साथ गाँव के घर में रहने केलिए कोई तैयार नहीं, इसलिए बेटों के इच्छानुसार उनको दिल्ली जाना पड़ा। बेटों और बहुएँ उनकी ज़िंदगी के सबकुछ हड़पकर उनको एक 'फूटबाल' की तरह एक घर से दूसरे घर की ओर फेंकते रहते थे। "हर चार महीने पर उनका बिस्तर एक घर से उठाकर दूसरे में पटका जाने लगा। कुछ दिन बाद ही वे समझ पायी थी कि बेटों ने उनके जीवन शेष रहते दिनों को भी आपस मे बाँट लिया है, ज़मीन की तरह, शांति से।"[1] इस प्रकार आजकल कैलाशोदेवी जैसी शोषित माँ के उदास चेहरे हमारे परिवारों में ज़रूरी मिलेंगे।

भारत के गाँवों में शिक्षित नारियों की संख्या आज भी कम है। पराये घर की अमानत समझकर लड़कियों को पढ़ाना बेकार माना जाता है। 'बेटी' कहानी में वसुधा की सहेली मुन्नी स्कूल नहीं जाती, लेकिन उसके दोनों भाई स्कूल जाते हैं। कारण माँ ने समझाया कि "तू लड़कों की बराबरी करती है! बेटे तो बुढ़ापे की लाठी है हमारी, हमें सहारा देंगे। तू पराए घर का दलिद्दर। तेरी कमाई नहीं खानी हमें.....।"[2]

'फैसला' कहानी में हरदेयी के दुःख का कारण पिता का शोषण है। हमारे समाज में ऐसे पिता भी हैं जो अपनी बेटी को उसके पति के साथ नहीं भेजते। वे सोचते हैं कि बेटी को भेज दिया जाए तो दामाद का मनीआर्डर छूट जाएगा। हरदेयी के पिता ने पैसे के मोह में बेटी को कमरे में बंद कर दिया और तीन बार उसके पेट के बच्चे को खत्म कराया। पीड़ा न सहकर हरदेयी ने कुआँ में कूदकर अपना प्राण त्याग दिया।

---

1. अपना अपना आकाश (चिह्नार) पृ. 17
2. बेटी (चिंह्नार) पृ. 21

परिवार में लड़की को कोई स्थान नहीं है। उसका दायरा रसोई तक सीमित है। हमेशा तानेबाजी का शिकार बनकर उसको घूँघट में अपना व्यक्तित्व छिपा रखना चाहिए। 'पगला गयी है भगवती' कहानी में भागो की जिज्जी की पाँचवीं संतान एक लड़की थी अनसूया। पहले चार लड़के थे। बच्ची की मां ने कहा, "मोंडी जनमी है, मरी भई। द्वारे खबर कर दो।"[1] चार लड़के होने पर भी एक लड़की का जन्म परिवारवाले स्वीकार नहीं करते। लड़की को अपनी माँ की कोख से ही शोषण होता है।

'पगला गयी है भगवती' की अनसूया जैसी अपनी माँ द्वारा शोषित लड़की है 'तुम किसकी हो बिन्नी?' कहानी की बिन्नी। शोषण का कारण वही था, वह लड़की है। दूसरी बार भी कोख में बच्ची जानकर माँ ने उसे पेट में ही मार डाला। बिना पुत्र की जननी बने वह माँ के गौरान्वित पद को स्वीकार नहीं कर पा रही थी। इसलिए तीसरी बार बेटे की प्रतीक्षा में फिर गर्भवती बन गयी - वह थी 'बिन्नी'। बिन्नी को दूध देने को माँ तैयार नहीं थी। इसलिए बिन्नी का पालन पोषण दादी ने किया। भारत के गाँवों में आज भी बच्चियों को साँस लेने से पहले हत्या करने की रीति ज़ारी रही है। लड़की परिवार और समाज केलिए एक बोझ जैसी है।

मैत्रेयीजी का पहला उपन्यास 'स्मृतिदंश' की भुवन मोहिनी होशियार होने पर भी उसको पढ़ने का अवसर नहीं मिला। वह घूँघट में घर नहीं रहना चाहती थी। लेकिन पारिवारिक दबाव के कारण भुवन का पारदर्शिता बेकार हो गया, केवल एक साधारण-सी ग्रामीण नारी की नियति अपनाई गई

---

1. पगला गयी है भगवती (ललमनियाँ) पृ. 98

प्रतिक्रियाबद्ध आदत उससे कहीं छूट गयी। भुवन और चंदर आपस में पसंद करते थे। लेकिन भुवन की शादी का प्रस्ताव 'मौसी लगती है' कहकर चंदर के पिता ने वापस भेज दिया। वे अपने इंजिनीयर पुत्र को साधारण-सी गरीब गांववाली लड़की को पसंद नहीं कर सकते। भुवन जैसी नारियों का शोषण सबसे पहले परिवार में शुरू होता है, फिर वैवाहिक जीवन में, समाज में यह शोषण व्याप्त रहता है।

हमारे किसी पुराण में उर्वशी (अप्सरा) और पुरुरवा की एक कहानी है। इस कहानी की नायिका उर्वशी को बहुत सारी कठिनाइयाँ झेलने के बाद ही शाप-मोक्ष मिल गया और वह स्वर्गवासी बन गयी। इसप्रकार मैत्रेयीजी के दूसरे उपन्यास 'बेतवा बहती रही' की नायिका उर्वशी भी शाप-मोक्ष पाकर स्वर्गवासी बन गयी। मीरा की प्रिय सहेली उर्वशी को औपचारिक शिक्षा न मिलने पर भी पढ़ना, लिखना आता था। जब वह युवति बन गयी, तब घरवालों का इरादा है कि पराये घर के अमानत को आगे घर में रखना खतरा होगा। उर्वशी के ब्याह का वजन पिता के सीने पर भारी पत्थर सा लदा था। भाई अजीत ने अपने कर्तव्य से पहले ही हाथ धोया। सर्वदमन की मृत्यु के बाद अजीत ने उर्वशी को सिरसा से राजगिरि लायी। लेकिन भाभी गाँव भर उसका अपयश फैलाने लगी। वहाँ देवेश की अवस्था बिलकुल संरक्षक-विहीन अनाथ बालक लगने लगा। पीड़ा न सहने के कारण उर्वशी फिर सिरसा गयी। सात-आठ महीने के बाद अजीत फिर उसे वापस लाया और मीरा के पिता की दूसरी पत्नी बना लिया। उसके अपने बेटे देवेश को सिरसा छोड़ना पड़ा। अपने नाम पर ज़मीन लिखवाकर मीरा के पिता को अजीत ने उर्वशी को बेच दिया। इसलिए अपने बेटे को सिरसा छोड़कर

उर्वशी को आना पड़ा। अजीत ने सिरसावाले दाऊ के नाम पर अपयश भी किया। इसप्रकार भाई द्वारा शोषित उर्वशी जैसी लड़की हमारे समाज में ज़्यादा नहीं होती।

'चाक' नारीशोषण और विद्रोह का सबसे बड़ा दस्तावेज है। लैंगसिरी बीबी ने सारंग से एक जवान विधवा पांचन्ना बीबी की दारुण कथा बतायी। विधवा पांचन्ना बीबी अपने शारीरिक प्यास बुझाने केलिए मेहताबसिंह से संबंध रखी। इसका आँखों देखा वर्णन सन्नू फ़कीर ने पांचन्ना के बाप से बताया। बाप ने नथिया भंगिन को बुलाकर ऐसा निर्मम व्यवहार किया कि कभी किसी बाप ने अपने बेटी से न किया होगा। "चिमटा आग में दहकाया और उन लाल जलती हुई लोहे की पत्तियों को बडे सहारे से नथिया भंगिन ने पांचन्ना बीबी की छातियों की काली जगह पर रख दिया। सब निश्चिंत हुए, अब न फूटेंगी जवानी की गुद्दियाँ। चिंघाड़ ऐसी उठी थी कि महीनों तक घर काँपता रहा।"[1]

'चाक' में पारिवारिक नारीशोषण बहुत कम ही दिखाई पड़ते हैं। 'इदन्नमम' की नायिका मंदा शोषित होने के साथ साथ विद्रोहिणी भी है। माँ ज़िदा रहने पर भी नियति ने मंदा को अनाथ बनाया। सोनपुरा में अस्पताल के उद्घाटन के बीच हुए दंगे में पिता महेंदर की हत्या हुई। उसकी माँ प्रेम महेंदर के हत्यारों की साजिश में फँसकर छोटी मंदा को छोड़कर घर से भाग गयी। इसप्रकार तेरह वर्ष की उम्र में अनाथ मंदा बऊ के सुपुर्द में आ गयी। मंदा की देख-रेख करने केलिए बऊ उसे लेकर श्यामली में पंचमसिंह

---

1. चाक पृ. 70

दादा जो दूर के रिश्तेदार है उसके यहाँ पहुँची। मंदा का संरक्षण मिलने केलिए प्रेम ने मुकदमा फाइल किया। बेचारी मंदा माँ के रहते ही अनाथ बन गयी। माँ की केस के भय से उसको अपना घर-जायदाद छोड़कर गाँव से फ़रार करना पड़ा और बाद में सारी संपत्ति छूट गयी। जगेसर कक्का के लम्पट, शराबी स्वभाव के कारण बेटी सुगुना को अभिलाख सिंह के बलात्कार का शिकार बनना पड़ा। प्रेम और जगेसर जैसे विवेकहीन माता-पिता वाली बच्चियों को पुरुष वर्ग के शोषण के शिकार अवश्य बनना पड़ेगा।

आजकल की दुनिया में कोई भी रिश्ता महत्वपूर्ण नहीं है। औरत माँ हो या बेटी, पत्नी, बहु, बहन कोई भी हो, सिर्फ शरीर है। 'झूलानट' में बालकिशन शीलो के शारीरिक आकर्ष के जाल में फँसकर एक कल्पना जगत में विचरण करता था। उसके आँखों के सामने सुषुप्त और जागृत अवस्था में शीलो का मादक रूप ही दिखाई पड़ता है। बालकिशन अपना अस्तित्व और अस्मिता भूल कर सपने की जागृतावस्था में शीलो समझकर माँ के देह पर हाथ रखा।

'अगनपाखी' की भुवनमोहिनी और कोई नहीं 'स्मृतिदंश' से पुनर्जन्म लेकर आनेवाली है। 'स्मृतिदंश' की भुवन कुसुम के हाथ से मर गयी क्योंकि उसने शोषण को अपनी नियति मानकर स्वीकारा। लेकिन यहाँ भुवन अपने हक केलिए कचहरी भी जाती है। अनाथ होने के कारण बचपन में नाना-नानी के सुर्पुद में आयी। उसकी पढ़ाई पाँचवीं कक्षा में समाप्त हो गयी। क्योंकि घर में और खेत में ज़्यादा काम है। लड़की को पढ़ाने पर क्या

फायदा? वह पराए घर की अमानत है। बड़े होने पर संदर्भवश भुवन का शारीरिक संबंध चंदर के साथ हुआ। यहाँ गलती की ज़िम्मेदारी अकेली भुवन पर पड़ी। सज़ा सिर्फ भुवन को मिला। चंदर के पिता ने कुंवर अजयसिंह से भारी रकम माँगकर उसके भाई विजयसिंह के साथ भुवन की शादी करायी। भुवन के पति विजयसिंह पहले से पागल था। किसीने अजयसिंह से कहा कि शादी कराने पर भैया का पागलपन कम होता जाएगा। इससे ज़्यादा शोषण एक लड़की की ज़िंदगी में और क्या होगा? चंदर के पिता ने भुवन के ससुराल से मिले पैसे रिश्वत देकर चंदर को असिस्टेंड़ डेवेलपमेंट अफ़सर की नौकरी मिला दी। चंदर की माँ ने भुवन को सलाह दिया कि "विजयसिंह ठीक हो जाएगा, इतने बड़े जायदाद के तीन हिस्से है एक जेठ का, एक सास का, एक तेरा।"[1] सच में परिवारवाले एक सौदा मानकर भुवन को बेच लिया था। परिवार से नारी शोषण का इतना सशक्त चित्रण मैत्रेयीजी की दूसरी रचनाओं में नहीं देखा जा सकता।

'कस्तूरी कुडल बसै' की कस्तूरी, मैत्रेयी की माँ एक जुझारू नारी थी। वह शादी करना नहीं चाहती थी। किसी तरह बेटी का बोझ किसी पुरुष के कंधे पर डालना परिवारवालों का लक्ष्य है। लड़की ज़रूर परिवार का शाप समझा जा रहा है। "माँ का मानना है कि संसार में औरत के मुकाबले कोई सख्तजान नहीं। बेटों को रोग-धोग व्यापे, इसे कभी छीक तक न आई। अरे... गाय मरे अभागे की, बेटी मरे सुभागे की। मगर बेटी मरे तो सही।"[2]

---

1. अगनपाखी पृ. 75
2. कस्तूरी कुंडल बसै पृ. 13

पारिवारिक शोषण शिक्षित समाज में आजकल कम होता जा रहा है। लेकिन भारत के आधी आबादी अब भी अशिक्षित है। औरत की स्थिति को बदलने केलिए स्वयं औरत ही सहयोगी भूमिका अदा करनी है। जब स्वयं औरतें अपनी दयनीय स्थिति को सुधारने की कोशिश करें तभी परिदृश्य ज़रूर बदलेगा।

मैत्रेयीजी अपने कथा-साहित्य द्वारा परिवार में नारी-शोषण के यथार्थ चित्रण खींचकर यह साबित करना चाहती है कि कानून, परंपरा, रीति-रिवाज़ों से स्वयं औरत को अपना पक्ष उठाना चाहिए ताकि अपने को स्वयं देखने का उसका नज़रिया बदले और फिर वह कामयाबी के साथ अपने साथ होनेवाले गैरइनसानी व्यवहार को नकारने का धर्म निभाएगी।

नारी-शोषण वैवाहिक जीवन में

अपने परिवार में नहीं, ज़्यादातर रूप से वैवाहिक जीवन में नारी शोषित है। 'बहेलिए' की गिरजा की बहन की शादी एक क्षय-रोगी से करायी गयी। कुछ समय के बाद चूल्हे से आग लगकर उसकी मृत्यु हुई। "खैर, बहन अधिक दिन नहीं जी पाई। अपने पति से ही उसे क्षय-रोग लग गया। निर्बल रोगिणी चूल्हे पर रोटी बना रही थी, कपड़ों ने आग पकड़ ली और गिरजा की चिर-स्नेह सहोदरा ससुरालय की चौखट पर ही भस्म हो गयी। तीन माह का बच्चा छोड़ा था।"[1] गिरजा की स्थिति भी इससे भिन्न न थी। वह भी अचानक विधवा बन गयी।

---

1. बहेलिये चिह्नार पृ. 36

लड़कियों को शादी में अपनी मर्जी प्रकट करने का अधिकार नहीं है। उनको कोई वृद्ध, रोगी आदमी को जो पहले एक-दो शादी की गयी थीं, ब्याहकर अपनी ज़िंदगी बरबाद करना पड़ता है। ससुराल में उनकी ज़िंदगी एक गुलाम जैसी होगी, वहाँ से बच ही नहीं सकते। विवाह योग्य आयु में उनको वैधव्य का अथाह दुःख भोगना पड़ता था। अखबार पढें तो समझते हैं ससुराल में बहुओं की मृत्यु का दर दिन व दिन बढ़ता जा रहा है खुदकुशी, दुर्घटनाग्रस्त मृत्यु, पति, सास-ससुर द्वारा हत्या आदि कई कारणों से बेचारी ग्रामीण लड़की को अपनी ज़िंदगी नष्ट करनी पड़ेगी।

विवाह जीवन में नारी को कभी आत्महत्या करनी पड़ती हैं, कभी उसकी हत्या भी होती है। सब सोचते हैं कि शादी होने पर नारी सुरक्षित हैं, विशेषतः शारीरिक और आर्थिक स्तर पर। लेकिन सच्चाई तो इसके विपरीत है। वैवाहिक जीवन में नारी का सबसे अधिक शोषण शारीरिक स्तर पर है। चंदना की कथा कहकर मैत्रेयीजी ने 'मन नाहिं दस-बीस' कहानी में एक शोषण का पर्दा अनावृत किया है। चंदना और बचपन के दोस्त स्वराज आपस में प्यार करते थे। लेकिन दलित होने के कारण स्वराज को गांव छोड़ना पड़ा। चंदन की शादी भी बीत चुकी। लेकिन चंदना के पहले प्यार जानकर पति और देवर उस पर शक करने लगा। पति पिता बनने योग्य नहीं है, इसलिए चंदना को संतान-भाग्य भी नहीं हुआ। शराब के नशे में देवर उस पर शारीरिक शोषण करने केलिए निरंतर आता था। वह आत्महत्या करने केलिए धतूरी लायी। लेकिन - देवर के हमले से बचने केलिए चंदना को उसके भोजन में विष डालना पड़ा। अचानक वहाँ आए चंदना के पति ने भी भोजन खाया और पति और देवर दोनों एक साथ

मारे गए, विधवा चंदना को जेल जाना पड़ा। शोषण किसी भी प्रकार का हो, वह सहनेवाली किसी भी नारी हो, सहन-क्षमता की एक सीमा होती है। सीमा पार करें तो वह प्रतिक्रिया करेगी, अपने प्राण और मान की रक्षा केलिए प्रतिक्रिया करनी चाहिए। निर्भाग्य की बात यह है कि कानून के आगे वह अपराधिनी होगी।

अधिकांश नारियों का स्थान घर और बाहर दोयम दर्जे का है। ग्रामीण लड़कियों को 'शिक्षा' के साथ 'कला' से भी दूर रहना पड़ा। किसी भी तरह उसने कोई कलारूप पढ़ा तो वैवाहिक जीवन में उसको छोड़ना पड़ेगा। वह कितनी बड़ी कलाकार हो, ससुराल में वह केवल रसोई में काम करनेवाली नौकरानी है। 'सहचर' की छवीली को बहुत मुश्किल से नृत्य पढ़ने की फुरसत मिली। बंशी की पत्नी बनने के बाद पाँव के एक गहरे घाव के कारण उसको गेंगरीन हुआ और पाँव काटना पडेगा। वह सुंदर थी, अच्छी आदतवाली थी, निपुण नर्तकी थी, लेकिन वह लड़की थी। बंशी की माँ ने कहा, "अरे अब वे घर का काम-धंधा निपटा लेंगी? अब तो उल्टे उनकी ही टहल करेंगे हम। सो क्या करने हैं? हम अपने मोंड का दूसरा ब्याह लो कल कर लें। टोटे हैं क्या?"[1] वैवाहिक जीवन में नारी का स्थान नौकरानी का है, सिर्फ एक नौकरानी का।

आर्थिक स्वतंत्रता हर एक मानव केलिए अनिवार्य है। विशेषतः स्त्री का कोई आमदनी नहीं है तो ज़रूर उसको पुरुष का गुलाम रहना पड़ेगा, पढ़ी-लिखी होने पर भी। पति अमीर होते हुए भी पत्नी को गरीब

---

1. 'सहचर' (चिह्नार)- पृ. 33

होकर रहना पड़ेगा। 'कृतज्ञ' कहानी की वसुधा अनुपम की पत्नी थी। वे शहर में रहते थे। उस समय गाँव से वसुधा की पड़ोसवाली नानी शहर के अस्पताल में इलाज केलिए आयी। उनसे मिलने की अनुमति अनुपम से नहीं मिली। एक दिन अनुपम से बिना कहे वसुधा अस्पताल गयी। बात जानते ही अनुपम तमतमा उठा "उन्हीं चमारों में बैठो जाकर। पकड़ लाओ मथुरा से, आगरा से..... तमाम कंगले आ जाएँगे - कोढ़ी, दरिद्री.... करवाओ सबका इलाज। उस गंदी गली में पैदा होकर क्या सारे मोहल्ले का ठेका लिया है मैं ने? निरंतर फटते-दहकते ज्वालामुखी के समक्ष अपराधिनी-सी खड़ी भस्म हुई जा रही वह।"[1]

इस पुरुषाधिपत्य समाज में पत्नी का स्थान सबसे निचले स्तर पर है। अपने वैवाहिक जीवन में भोगी हुई पीड़ा की सीमा ही नहीं है। पत्नी को पतिव्रता होनी चाहिए। पति-सेवा ही उसका जीवन-लक्ष्य है। पति के अलावा दूसरे आदमी का चेहरा देखना ही जुर्म है। लेकिन पति कितनी रखवालियों के साथ जी सकता है; समाज को कोई शिकायत नहीं। उसको एक पत्नी होते हुए भी दूसरी शादी कर सकता है (कानून के अनुसार यह सज़ा मिलने की मामला है।) आजकल ही हमारे समाज में पत्नी का अधिकार-शोषण होता ही रहता है। 'भंवर' कहानी की विरमा केशव की पत्नी है। केशव से बहुत कुछ शारीरिक पीड़ाएँ सहनी पड़ीं। एक दिन विरमा को घर से बाहर निकाल दिया गया। उस रात उसको एक दुर्घटना हुई, किसीने अस्पताल में पहुँचाया। स्कूटरवाले से कुछ पैसा लेकर केशव

---

1. कृतज्ञ (चिह्नार) पृ. 91

ने केस समाप्त कर दिया और विरमा को अस्पताल छोड़कर चला गया। पति से शोषित विरमा कई ग्रामीण नारियों का प्रतिनिधि है। हमारे सरकारी अस्पताल के दालान में इसप्रकार की कई नारियाँ ज़रूर मिल सकती हैं।

'मन नाहिं दस बीस' कहानी की चंदना का बलात्कार अपने देवर ने किया तो 'केतकी' कहानी की केतकी का बलात्कार अपने ससुर के मित्र गंधर्वसिंह ने किया था। नारी जहाँ भी हो मायके में या ससुराल में, शोषण का शिकार है। यहाँ केतकी ने कोई अपराध नहीं किया, फिर भी पति श्रीकांत उसको छोड़कर चला गया। केतकी को अपनी ज़िंदगी ही नष्ट हो गयी। अपनी बेटी जैसी लड़की को बलात्कार करनेवालों की खबर आजकल हम ज़्यादा ही सुनते हैं, पुरुषों की कामांध दृष्टि में स्त्री केवल 'शरीर' है, कौन बेटी? कौन माँ?

पत्नी के रूप में नहीं, माँ के रूप में ही शोषित सरजू की कहानी मैत्रेयीजी ने 'चिह्नार' कहानी में उभारी है। लम्पट पति चंद्रप्रकाश को बाहर निकलने केलिए सरजू को थाने में जाना पड़ा। चंद्रप्रकाश की मृत्यु के बाद ननदोई ने बेचारी सरजू के गांव की ज़मीन बेच ली। सरजू की बच्ची को ननद विद्या दीदी ने हड़प लिया और उसे अपनी नौकरानी बनायी। सरजू अपनी बेटी को दूर से निहाल ही लेती। "क्षुधा से व्याकुल कनक जब रो-रोकर घर को तह पर उठा लेती तो सरजू की छातियों से दूध की धार स्वयं बह-बहकर ज़मीन पर गिरने लगी। कैसी विकट स्थिति.... पास ही क्षुधा से व्याकुल चीखता शिशु और भरे स्तन लिए दुग्धपान करने के तरसती

माता.....।"[1] पत्नी और माँ के रूप में शोषित सरजू जैसी नारियाँ हमारे मन में एक गहरे घाव की वेदना जगाती है।

राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में लिखी गई मैत्रेयीजी की कहानी 'फैसला' पर टेलिफिल्म भी हुआ है। वसुमती गाँव के प्रमुख रनवीर की पत्नी ही नहीं गुलाम भी है। प्रधानिन होने पर भी वसुमती को पंचायत जाने की अनुमति नहीं है। ईसुरिया, जो गडरिया की पत्नी थी, इस पर वसुमती से सहानुभूति प्रकट करती थी। वसुमती ग्यारहवीं कक्षा तक पढ़ी थी, लेकिन उसको पति की आज्ञा तिरस्कृत करने की हिम्मत नहीं थी। राजनीतिक क्षेत्र में हो या किसी भी क्षेत्र में नारी का प्राधिनित्य पुरुष वर्ग सह नहीं सकते। पति-वर्ग सोचते हैं पत्नी को कोई 'पोज़ीशन' मिलें तो कभी उनका स्थान निचला हो जाएगा क्या?

'भँवर' की विरमा जैसी और एक उपेक्षिता पत्नी की कहानी मैत्रेयीजी ने 'ललमनियाँ' में चित्रित की है। यह ललमनियाँ की नर्तकी मोहरो की कहानी है। वह अपने पति द्वारा उपेक्षित एक छोटी बेटी के साथ अपनी कष्टतापूर्ण ज़िंदगी झेलती रहती है। रोज़ाना चलाने केलिए उसको शादी में ललमनियाँ नृत्य करना पड़ा। एक बार वह ललमनियाँ केलिए तैयार कर रही थी, तब बेटी पिंडकुल ने उससे कहा बारात में दुल्हा उसके पिता है। गाँव में कई पुरुष एक पत्नी होते हुए भी दूसरी शादी करते हैं। पहली शादी की बात दूसरे से छिपा लेकर उनसे दहेज माँगकर नई ज़िंदगी जीते हैं। विरमा, मोहरो जैसी उपेक्षित पत्नियों की संख्या हमारे समाज में कम नहीं है।

---

1. चिह्नार पृ. 138

लड़की को किसी के ऊपर छोड़कर अपना बोझ हल्का करना घरवालों की इच्छा है। वर रोगी हो, वृद्ध हो, लम्पट हो, शराबी हो या पागल हो। बेटी की शादी जल्दी ही जल्दी करना चाहिए। दहेज माँगने के बिना कोई रिश्ता आ जाएं तो छान-बीन के बिना तुरंत ही शादी कराने केलिए तैयार हो जाता है। 'स्मृतिदंश' की भुवन की शादी चंदनपुर के एक बडे घराने के कुंवर विजयसिंह के साथ करायी गयी। विजयसिंह पागल था, इसलिए अनाथ गरीब भुवन को दहेज मांगे बिना पत्नी-पद मिल गया। विजय के घरवालों की धारणा थी कि शादी के बाद बेटे की बीमारी दूर हो जाएगा। उनके संबंध में विजय को एक पत्नी नहीं, उसकी सेवा-शुश्रूषा केलिए एक नौकरानी चाहिए। जब विजय अस्पताल में था तब अजय की पत्नी कुसुम को भुवन के प्रति ईष्या लगी, क्योंकि अजय भुवन से ज़्यादा वात्सल्य दिखाता है आजकल। पति और पत्नी के बीच झगड़ा हुआ और कुसुम ने आत्महत्या केलिए बंदूक ले लिया। बीच में आयी भुवन को गोली लगी और उसकी जीवन लीला समाज हो चुकी। भुवन की जिंदगी में आदि से अंत तक उसका शोषण ही हुआ था। भुवन की तरह जिंदगी के आरंभ में ही हत्या या आत्महत्या के शिकार होनेवाली युवतियां हमारे समाज में अवश्य है।

'बेतवा बहती रही' की उर्वशी का पहला वैवाहिक जीवन खुशी से भरा था। सर्वदमन उसे बहुत प्यार करता था। लेकिन एक दुर्घटना में उसकी मृत्यु के बाद विधवा उर्वशी की ज़िंदगी में खुशी की हल्की-सी रेखा भी नहीं हुई। अपने भाई अजीत की प्रेरणा से उसको अपने पिता के उम्रवाले मीरा के पिता बरजोरसिंह की दूसरी पत्नी बननी पड़ी। ज़्यादा समय बीतने के

पहले उर्वशी की दोनों किड्नी खराब हो गयी। काफ़ी दिनों तक पति द्वारा भेजे गए वैद्य के दवा के निरंतर प्रयोग से उनके गुर्दों पर भयंकर असर हुआ। उर्वशी की अंतिम अभिलाषा, उसका दाहकर्म बेटा देवेश करें, इसलिए सिरसा जाना चाहिए। लेकिन सिरसा पहुँचने के पहले ही उर्वशी की मृत्यु हुई। उर्वशी की ज़िंदगी आद्यंत पीड़ाग्रस्त थी, बीच में कुछ दिन सर्वदमन के साथ, राहत का अनुभव मिला था। उर्वशी की कथा पढ़ते समय ज़रूर हमारे आँखों में आंसु आ जाएँगे। बेतवा की बेटी उर्वशी एक दर्दभरी याद दिलाकर अवश्य पाठकों के मन में ज़िंदा है।

भुवन और उर्वशी को ज़िंदगी में प्रतिक्रिया करने का अवसर बहुत कम ही मिलता था। परिवार, सुरालवाले और समाज से उन दोनों को हमेशा शोषण ही सहना पड़ा और बीच में मृत्यु वरण करना पड़ा।

विवाह हमारे समाज की नींव है। लोग सोचते हैं 'विवाह' नारियों केलिए एक सुरक्षा कवच है। लेकिन सच्चाई यह नहीं है। आज विवाह-संस्था एक जंजीर का बंधन जैसा है, यहाँ स्त्री एक गुलाम जैसी है। विवाह की अस्थिरता के कारण तलाक की संख्या में वृद्धि होती जा रही है।

'चाक' में रेशम, सारंग जैसी विद्रोहिणी नारियों की कहानी है, जिनको अपने वैवाहिक जीवन में अतिभयानक शोषण अनुभव करना पड़ा। पति की मृत्यु के छः महीने के बाद विधवा रेशम गर्भवती बन गयी। उसे गर्भपात करने केलिए सास ने उसे काढ़े की लुटिया दिया, लेकिन हिम्मतवाली रेशम उसे बाहर फेंक दिया था। सास उसे बीचों बीच रंडी, वेश्या आदि विशेषणों से पुकारती थी। रेशम ने परवाह ही नहीं की। रंजीत

के नाम पर बदनामी भी करायी गयी। रेशम के दृढ़-संकल्प देखकर फिर और एक प्रस्ताव रखा गया कि डोरिया की पत्नी बनो। रेशम ने यह बात नहीं मानी। अंत में डोरिया के हाथों से उसकी हत्या हुई।

नारी विधवा हो या विवाहिता, पुरुष का गुलाम रहना चाहिए, पुरुष अपनी मर्जी के अनुसार किसीके साथ कुछ भी कर सकता है।

सारंग और रंजीत के वैवाहिक जीवन में पहले कुछ समस्याएँ नहीं थी। लेकिन जब गांव में मास्टर श्रीधर प्रजापति आये तब से सारंग के प्रति श्रीधर के नाम पर रंजीत को शक हुआ। श्रीधर कभी-कभी इनके घर आता जाता था। यह बात जानकर रंजीत क्रोध से तड़प उठा। "नहीं आएगा वह। कतई नहीं आएगा। इस घर का मालिक मैं हूँ। यहाँ वही होगा जो मैं चाहूँगा। मैं इस घर का कर्ताधर्ती।"[1]

पति ही घर का मालिक है पत्नी केवल उसकी इच्छानुसारिणी। पति कहीं भी जा सकता है, कहीं भी ठहर सकता है, पत्नी को पूछने का अधिकार नहीं है। लेकिन पत्नी उसकी मर्जी के बिना रसाई के बाहर नहीं आना चाहिए। आये तो अवश्य बदनाम सुनेगा। हमारे समाज का वातावरण ऐसा ही है।

डोरिया के भय से आगरा भेजा गया बेटा चंदन दलवीर की पीड़ा न सहकर भागकर वापस आया। इस पर नाराज़ होकर रंजीत ने उसे मारने केलिए पकड़ा। लेकिन थप्पड़ बीच में आई सारंग को मिला। रंजीत

---

1. चाक पृ. 156

आजकल अपने वश में नहीं है। उसका नियंत्रण फत्तेप्रधान ही कर रहा था। राजनीति का एक चालाक है कि शत्रु-पक्ष के किसी को मित्र बनाकर अपने साथ रखना और विद्रोह पक्ष की योजनाएं जानना। रंजीत भी राजनीतिक छल का शिकार बना। अन्यायी सत्ताधारियों के चंगुल में पड़कर चुनाव में एक सीट ढूँढ़ रहा है। इसी कारण रंजीत और सारंग के रिश्ते में बदलाव आ गया।

सारंग पति से लड़ती थी, फिर भी वह उसे प्यार करती थी। लेकिन बीच में मास्टर का दखल उसकी ज़िंदगी में परिवर्तन लायी। मास्टर के व्यक्तित्व पर सारंग प्रभावित थी, फिर भी अपने पारिवारिक जीवन नष्ट करना वह नहीं चाहती। लेकिन अनब्याही श्रीधर का मन सारंग पर ठहरा, वह उसे प्यार करने लगा, चंदन द्वारा चिट्टी भी भेज दी गयी। सारंग के मन में रंजीत और श्रीधर के प्रति ममता थी। पहला तो अपना प्रिय पति, दूसरा माननीय व्यक्तित्ववाला मास्टर। बेचारी सारंग के वैवाहिक जीवन में दरार आने लगी। सारंग और रंजीत के वैवाहिक जीवन की शांति दिन व दिन कम होती जा रही थी। यहाँ कौन है कसुरवाला? सारंग, रंजीत या श्रीधर?

रंजीत ने शराब पीने की आदत शुरु की। शराब पीकर वह मास्टर के नाम पर सारंग को गालियां देने लगा। शराबी आदमी पागल से भी ज़्यादा खतरनाक है। उनकी बुद्धि उनके वश में नहीं होती। शराब एक परिवार का नहीं, पूरे समाज का दुश्मन है। शराब आदमी को अशांति, आत्महत्या, बीमारी, पागलपन की ओर ले जाता है। दुःख या तनाव से मुक्त होने केलिए रंजीत ने शराब पीना शुरू किया, लेकिन फल विपरीत लगा।

एक बार श्रीधर मास्टर को किसीने बुरी तरह पीटा। उसे अस्पताल से लैंगसिरी बीबी के घर लाया गया। रात में उसकी शुश्रूषा करने केलिए सारंग आयी और एक अनोखे क्षण में दोनों के शारीरिक संबंध भी हुआ। अगले सबेरे सारंग को मारने केलिए रंजीत बंदूक लेकर आया। गजाधर सिंह के प्रसंगानुकूल बर्ताव के कारण सारंग बच गयी। तदवसर बाबा ने अपनी पत्नी या रंजीत की माँ की मृत्यु के बारे में पहली बार रंजीत से कह दिया। रामसिंह नामक एक दोस्त के नाम पर शक होने के कारण उन्होंने उसे मार डाला, लोगों ने सोचा वह फोड़ा से मर गयी। इसप्रकार पति द्वारा पत्नी की हत्या का अधिकांश कारण शराब ओर शक होगा।

भँवर और मास्टर की प्रेरणा से सारंग ने प्रधान पद केलिए उम्मीदवार बनने का निश्चय किया। सारंग पर नाराज़ होकर चंदन को फिर आगा भेजना चाहता था। रंजीत ने कहा, सारंग को कोई अधिकार नहीं है उसे रोकने केलिए - "सारंग! ये त्रिया चरित्र..... नहीं, अब और नहीं। मैं भेज रहा हूँ, तू जाने दे। घर मेरा है, बच्चे की ज़िम्मेदारी मेरी है। तेरी जैसी औरतें सैकड़ों देखी हैं हमने-खसम करके भागती हुई। उन वेश्याओं का कोई कुछ नहीं बिगाड पाया। ....पर सारंग हम ऐसी औरत को चुटिया पकड़कर इस चौखट से बाहर करके अपने परिवार से बेदखल कर सकते हैं।"[1] सारंग की जिंदगी का चैन हमेशा केलिए छूट गया। पति के प्यार से वंचित सारंग एक पराश्रित नारी नहीं है, हर पल वह जूझती रहती है। एक मामूली-ग्रामीण पत्नी की तरह जिये तो उसके जीवन में कोई समस्या नहीं होती। वैवाहिक-जीवन में दुःखी होने पर भी सारंग थक नही गयी।

---

1. चाक पृ. 412

मैत्रेयीजी ने अपनी रचनाओं में उपेक्षित नारियों की विडंबनाएँ और उनके प्रति पति और ससुरालवालों के शोषण के चित्रण करने में ज़्यादा ध्यान दिया है। 'इदन्नमम' की कुसुम इसका उदाहरण है। 'झूलानट' में शीलो सुमेर की वधु बनकर ससुराल में आती थी। लेकिन एक ग्रामीण अनपढ़ लड़की को पत्नी बनाना वह नहीं चाहता, पिता की वादा पूरा करने केलिए ही सुमेर ने शीलो से शादी की। उसे घर छोड़कर सुमेर शहर गया। फलतः शीलो शादीशुदा होने पर भी अनब्याही ही रही। एक वर्ष के बाद सुमेर वापस आया, लेकिन माँ बिनती करने पर भी उसने शीलो का स्वीकार नहीं किया। पति को मिलने के लिए शीलो ने व्रत-पाठ ले लिया। अचानक एक दिन खबर आयी सुमेर ने दूसरी शादी की। इतने दिन इंतज़ार करने पर भी शीलो उपेक्षिता बन गयी। वह आत्महत्या केलिए ऊँगली काटी, लेकिन मरी नहीं। फिर वह बालकिशन की पत्नी बन गयी। लेकिन 'बछिया' केलिए उसने इनकार कर दिया। उसके शरीर रूपी जाल में बालकिशन फँस गया। आगे सास उसके दुश्मन बन गयी और जिंदगी का चैन नष्ट हो चुका है। माँ और शीले की लड़ाई में पड़कर बालकिशन चकनाचूर हो गया, उसको घर छोड़कर जाना पड़ा। दूसरी जिंदगी भी शीलो के हाथ से छूट गयी।

'अगनपाखी' की भुवन का शोषण पहले परिवार में हुआ था। घरवालों ने पैसे केलिए विराटा के कुंवर विजयसिंह से भुवन की शादी करायी, जो पागल था। शादी के पहले भुवन जानती ही नहीं थी विजय पागल था। पागल पति के साथ जीते समय पूजा-पाठ पर वह राहत मिलने की कोशिश करने लगी, बीच बीच में मंदिर गयी। तब उस पर आरोप

लगाया गया कि भुवन और पुजारी के बेटे आपस में प्यार करते थे। ससुराल में भुवन का सुख-साज पूछने केलिए कोई नहीं था।

"इस घर के लोगों को नहीं पता कि विजयसिंह की ज़रूरतों के अलावा भुवन की भी कोई ज़रूरत है? ज़रूरत तो इंसान की इंसान की तरह से ही होती हैं, पर हमें कोई इंसान माने तब न?"[1]

भुवन रात भर सो न सकती, दिन-रात पति पर ध्यान रखना चाहिए। इतने दुःखों के बीच जिठानी उसे मज़ाक उठाती थी, 'महामाया योगिनी' बोलकर। चारों ओर से शोषण ही शोषण। किसी तरह भुवन अपना वैवाहिक जीवन आगे बढ़ाती थी, जब विजयसिंह अस्पताल में मर गए तब ससुरालवालों ने सती अनुष्ठान केलिए भुवन को धमकी दी। मंदिर में देवी मैया की पूजा केलिए प्रवेश करनेवाली भुवन अंतर्धान हो गयी, वह पूजारी के निजी दरवाज़े से राजेश और दामिनी की मदद से वन में बच गयी। अपने परिवार केलिए जिंदगी का कुर्बान करनेवाली भुवन जैसी नारियाँ ज़रूर हमारे समाज में आज भी जिंदा है।

कामकाजी महिलाएँ आर्थिक रूप से कामयाब है लेकिन शोषण से मुक्त नहीं है। वैवाहिक जीवन में ये नारियाँ हर पल समस्याएं सामना करती रहती हैं। मैत्रेयीजी के उपन्यास 'विज़न' दो नेत्र चिकित्सक डॉ. नेहा और डॉ. आभा के शोषण की कहानी हैं। डॉ. नेहा डॉ. अजय की पत्नी है। उसकी राय में "अजय ही मेरी ज़िंदगी के दुःखमय नाटक के नायक.....।[2]

---

1. अगनपाखी - पृ. 95
2. विजन पृ. 18

अजय के पिता डॉ. शरण आई सेंटर चलाता है, नेहा और अजय वहाँ के चिकित्सक हैं। डॉ. शरण की बहु होने पर भी नेहा को अपनी इच्छा के अनुसार कोई सर्जरी नहीं कर सकती, कोई कान्फ्रेंस में जाकर सेमिनार नहीं कर सकती। डाक्टर होकर भी अपनी खर्च केलिए नेहा नहीं कमा सकती। एक सक्सेसफुल ऑपरेशन के बाद एक बधाई भी सुन नहीं सकती।

अजय ने डोनेशन देकर अड्मिशन पाया एम.बी.बी.एस. में। शरण आई सेंटर केलिए एक मेधावी डाक्टर की ज़रूरत है। इसलिए डॉ. शरण ने अजय की शादी नेहा से करायी। नेहा को अजय का रिश्ता कभी भी मंजूर न था। लेकिन माता-पिता की इच्छा के अनुसार उसको अजय को स्वीकार करना पड़ा।

डॉ. आभा नेहा की प्रिय दीदी जैसी है। उसका वैवाहिक जीवन भी समस्याओं से भरा पड़ा है। संयुक्त सचिव पिता की अफ़सरी नखरोंवाली परवरिश में नकचढ़ हो जाना स्वाभाविक है। आभा के ससुरालवालों को वह एक मामूली औरत जैसी वहाँ रहनी चाहिए। लेकिन शहर के एक अस्पताल की डाक्टरी छोड़ना आभा के संबंध में नामुमकिन है। इसी कारण आभी को अपना वैवाहिक जीवन छोड़ना पडा।

आजकल विवाह-जीवन समस्यापूर्ण होता जा रहा है। औरत और मर्द एक-दूसरे से अड्जस्ट नहीं सकते, वे सोचते हैं अलग रहना ही बेहत्तर है। तब उनके सामने अपना अपना अधिकार की मकसद है, बाल-बच्चा, दूसरे परिजन सब नगण्य है। वैवाहिक जीवन में नारियों की भूमिका पुरुषों

से ज़्यादा मानी जाती है। लेकिन पत्नी पति का गुलाम है वह शिक्षित हो, कामकाजी हो, शहरीय हो हमेशा शोषण के शिकार है, पुरुष की इच्छानुसारिणी है।

मैत्रेयीजी के कथा-साहित्य पढ़कर हम समझते हैं कि वैवाहिक जीवन में नारी की अवस्था अत्यंत शोचनीय है।

नारीशोषण - समाज में

नारी, नारी होने के कारण हर कहीं उसका शोषण हो रहा है। 'बलात्कार' शोषण का सबसे भयानक हिस्सा है, जिसके द्वारा नारी का जीवन हमेशा केलिए मिट्टी में मिल जाएगा। एक तरह का अपराध-बोध हमेशा उसके इर्द-गिर्द मंडराने लगेगा। वह गर्भवती बनी तो समाज और घरवाले सिर्फ नारी को गुनाहगार मानेगा और वह बदनामी का शिकार बनेगी। आखिर उसको आत्महत्या तक करना पड़ता है।

'बहेलिये' कहानी की भोली की नियति भी ऐसा ही था। मिट्टी का तेल डालकर स्वयं जलकर वह बदनामी से बच गयी। समाज में नारी का शोषण कितने और किसप्रकार के होंगे, बताना मुश्किल है। उपयुक्त कहानी में मास्टरजी की पत्नी सावित्री की दुरवस्था देखकर कठोर हृदयवालों का मन भी पिघल जाती है। अचानक पति का लाश देखकर सावित्री को विश्वास नहीं होता। उन्होंने पति के खुले मुख में शरबत डाला। दारोगा ने फैसला किया, "इसकी मौत जहर से हुई है।"[1] सावित्री को लॉकअप में डाल दिया गया। बेचारी की दशा अतिदयनीय लगी। इसप्रकार निरपराधि

---

1. बहेलिये (चिह्नार) पृ. 43

कभी कभी अपराधि ही बनेगी। वह नारी ही हो तो प्रतिक्रिया ही नहीं करेगी, नहीं कर सकेगी।

गाँव का परिवेश शहर से बहुत भिन्न है। शहरी लड़कियों की अपेक्षा ग्रामीण लड़की अस्वतंत्र, अनपढ़ और गरीब ज़्यादा है। गाँव की नारी घर के चहारदीवारी बाहर आयीं तो बदनामी हो जाएगी। रंडी, वेश्या आदि किसी भी नाम से पुकारी जाएगी। किसी दूसरे आदमी से बोलें तो, दूसरे घर जाएँ तो, कुआँरी होकर ब्याह न करें तो ज़रूर बदनामी होगी।

'आक्षेप' में मैत्रेयीजी की नायिका रमिया अपने ऊपर की अपकीर्ति की परवाह किये बिना एक समाज-सेविका का दायित्व निभा रही थी। बीमार को मदद करना, अनाथ बच्चों की देख-रेख करना उसने अपना कर्तव्य माना। उसकी प्रवृत्ति के बारे पूछने पर समाज के प्रति विद्रोह प्रकट करने का साहस भी उसने दिखाया था।

मैत्रेयीजी की कहानी 'सिस्टर' कहानी का पात्र सिस्टर डोरोथी डिसूसा जैसी अनब्याही, समाज-सेविका ज़रूर हमारे समाज में होती है। निस्वार्थ सेवा करने पर भी समाज उसे अपने चंगुल में डालकर दर्द देते हैं। यहाँ सिस्टर अपाहिज पिता की शुश्रूषा केलिए अपनी वैवाहिक जिंदगी भूल गयी। ज़िंदगी में अकेली बन गयी सिस्टर ने सुरेशचंद्र की शुश्रूषा का बोझ स्वयं ही उठा लिया, बाद में उनके घर की एक सदस्या बन गयी। लेकिन सुरेशचंद्र के बेटे की शादी में उसको एक अपरिचिता बननी पड़ी। सिस्टर जैसी नारियों को समाज हमेशा अकेली ही रहनी पड़ेगी।

सामाजिक नारी शोषण शिक्षा के क्षेत्र में ज़्यादातर देखा जा सकता है। हमें विश्वास ही नहीं करता, अध्यापकों द्वारा छात्राओं का शारीरिक शोषण, सहपाठियों द्वारा शोषण, फीस के नाम पर आर्थिक शोषण आदि कई प्रकार के शोषण दिन व दिन बढ़ती जा रही है। 'आज फूल नहीं खिलते' कहानी में झरना कई छात्राओं का 'डेलिगेट' है जो अध्यापकों से शोषण भोगती रहती है। झरना की कॉपी में गुप्ता साहब ने अश्लील और अनर्गल शब्द, घिनौने वाक्य और बेहूदे चित्र लिखे हैं। क्रिसमस की छुट्टियों में एक्स्ट्रा क्लास के नाम पर पिता के उम्रवाले प्रिन्सिपल ने झरना का शारीरिक शोषण किया। आजकल अध्यापकों का धार्मिक स्तर बिगड़ता दिखाई देता है। उनके सामने छात्रा, बेटी कोई नहीं है, उनकी दृष्टि में केवल 'स्त्री' है। आगे हम अपनी बेटियों को स्कूल-कालिज कैसे भेजें?

विधवा नारी की विडंबनाएँ वर्णनातीत है, लोग सोचते हैं पत्नी के कसुर से पति मर गया है। इसलिए उसे घर के अंधकार में जीने की नियति मिल जाएगी। 'पगला गयी है भगवती' कहानी की भागे एक अनपढ़ ग्रामीण विधवा युवति है। उसको अपने ब्याह की तो याद ही नहीं, क्योंकि बालविवाह था। "वह सारे दिन कोठे में छिपी बैठी रही। फिर समय के अंतराल ने बता दिया कि वह विधवा हो गयी। तब से आज तक उसका तन, उसका मन संपूर्ण अस्तित्व विधवा का है।"[1] होस उमंग, पहनना-ओढ़ना, सजना-संवारना उसकेलिए वर्जित है। औरतें उसे सगुन-सात-मंगल कार्यों से बचाती हैं। सुबह-सवेरे उसका किसी के आगे पड़ जाना अशुभ है।

---

1. पगला गयी है भगवती (ललमनियाँ) पृ. 93

यह बात भागो जानती है। वह स्वयं भी देख-बचकर निकलती है।"[1] विधवा पराश्रिता होने के कारण समाज में वह उपेक्षिता है। उसकी लंबी ज़िंदगी अकेली काटनी पड़ेगी। कभी कभी उसको शारीरिक शोषण का शिकार ही बनना पड़ा।

सांप्रदायिकता एक संक्रामक बीमारी की तरह हमारे समाज की नींव उखाड़ देती है। देश के हर-एक कोने में एक या दो नहीं, विस्फोट की परंपरा होती हैं और सैकड़ों निरपराध-आदमी मारे जाते हैं, अनेक परिवार अनाथ होते रहे हैं। सांप्रदायिकता के नाम पर आतंकवाद पूरे देश में फैलने लगी। उसका सच्चा मिसाल अब हम मुंबई में देखा है।

मैत्रेयीजी अपनी कहानी 'छाँह' में बत्तासो की ज़िंदगानी सामने लाई है। बत्तासो और पति सन्नो अलीगढ़ जाते समय रास्ते में ददुआ से मिला। तीनों वहाँ पहुँचते ही दंगा शुरु हुआ। मस्जिद में नमाज़ केलिए गए सन्नू वापस नहीं आया, आतंकवादियों से उसकी हत्या हुई और बत्तासो ज़िंदगी में अकेली बन गयी। बत्तासो कई पत्नी, बहन, माँ, बेटी का प्रतीक है जो कश्मीर, असम, नागालैंड, उत्तरप्रदेश, पंजाब, महाराष्ट्रा जैसे राज्यों में अकेली और अनाथ बनकर ज़िन्दगी झेलती रहती हैं।

'राय प्रवीण' मैत्रेयीजी का कहानी-संग्रह "गोमा हँसती है" की एक कहानी है। बाद में लेखिका ने यही कहानी अपना उपन्यास 'कही ईसुरी फ़ाग' में संलग्न किया है। यहाँ तीन नारियों के शोषण की कथा कही गई है।

---

1. पगला गयी है भगवती (ललमनियाँ) पृ. 93

राजा इंद्रमणि सिंह की प्रेमिका रायप्रवीण को अपने राज्य की रक्षा केलिए अकबर के दरबार जाना पड़ा। राय प्रवीण जवान, खूबसूरत और नाचने-गानेवाली वेश्या है। अकबर को उसपर मोह हुआ और इंद्रमणिसिंह से उसकी मांग की। इस कहानी में और एक शोषित पात्र है सावित्री। एक बार बाढ़ के समय पूरा गांव प्रलय में डूब गया। राहत कैंप खुला गया। अपने पति और गांववालों को भूख से बचने केलिए, अनाज लाने केलिए सावित्री राहत कैंप गयी। लेकिन अनाज के बदले वहाँ के अफ़सरों का उसको अपना शरीर देना पड़ा। बात जानकर पति ने उसे छोड़ दिया। दूसरों की सेवा केलिए जाने पर सावित्री को अपना मान और वैवाहिक जीवन छूट गये। किसी प्रकार नारी का शोषण करना। पुरुष वर्चिस्वता समाज अपना अधिकार मानता है।

'पगला गयी है भगवती' कहानी के बाद लेखिका ने 'बेतवा बहती रही' में वैधव्य का बोझ उठानेवाली उर्वशी का चित्रण किया है। "सफेद सूती धोती-ब्लाउज़, नंगे-उजाड़ हाथ, बिछिया सुती पाँवों की नंगी उँगलियाँ, उसके वैधव्य पर बिसूरती हुई।"[1] यही दृश्य हम विजय की मृत्यु के समय उसकी छोटी बहु के साथ भी देख सकते हैं। बेचारी यह भी नहीं जानती थी कि पति के निधन पर कैसे रोये। विधवा-नारी समाज के संबंध अमंगल का प्रतीक है। किसी सुअवसर पर उसका चेहरा देखना भी पाप समझा गया।

विधवा उर्वशी पर एक बार मीरा के पिता ने हमला किया। वह किसी तरह बच गयी। इस पर अपमानित उर्वशी बेतवा में कूदकर आत्महत्या

---

1. बेतवा बहती रही पृ. 64

करने लगी। लेकिन एक मल्लाह ने उसे बचाया। अपने प्रति हो रहे शोषण के बारे में किसी से वह कह नहीं सकती। कहें तो समाज की दृष्टि में वह ही दोषी लगेगी।

'चाक' सारंग की बुआ की बेटी रेशम की हत्या से प्रारंभ होता है। स्त्री-जीवन में पतिव्रता-धर्म तोड़नेवाली औरत केलिए इससे ज़्यादा और कोई दण्डविधान कहीं नहीं देख सकता। नारी-जीवन की असलियत मैत्रेयीजी प्रभावपूर्ण ढंग से व्यक्त करती हैं यहाँ "स्त्रियाँ ज़िंदगी के गीतों, संस्कारजनित उत्सवों और रोजमरी की ज़रूरतों के चलते अपने-आपको प्राकृतिक लीला में उतार रही है। या कि भीतर से उमडते करुण खूँखार हाहाकार को पीकर महाविनाश को चुनौती देती हुई जीने की अदम्य चेष्टा कर रही हैं। शायद पिए हुए समस्त विष को अपनी मुस्कानों में ढ़ालकर अमृत कर देना चाहती है! नहीं, शाश्वत सत्य की तरह उजागर होती हुई अनहोनी को पहचानते हुए भी अनजान बने रहने का ढ़ोगा!"[1]

अतरपुर गांव के इतिहास में सिर्फ रेशम को नहीं, रस्सी के फंदे पर झूलती रुकमिणी, कुएँ में कूदनेवाली रामदेई, करबन नदी में समाधिस्थ नारायणी आदि कई नारियों को समाज के शोषण शिकार बनकर ज़िंदगी नष्ट करनी पड़ी। पच्चीस साल में विधवा बन गयी रेशम पति की मृत्यु के छः महीने बाद गर्भवती बन गयी। उसने ज़िम्मेदार का नाम बताया नहीं इसलिए वह समाज से परित्यक्ता बन गयी। तोता की बहू ने रेशम की हत्या अपनी आँखों से देखा। रेशम के पति कर्मवीर के भाई डोरिया ने यह

---

1. बेतवा बहती रही पृ. 7

अपराध किया है। लेकिन न्यायालय में गवाह देने केलिए तोता की बहू नहीं आएगी, नहीं आने देंगी गांव में स्त्री के चारों ओर बंधन ही बंधन है। घर के बाहर जाने केलिए ही उसको अनुमति चाहिए। इसलिए सारंग को रेशम की हत्या का रिपोर्ट करने केलिए रंजीत के पांव पकड़ना है। रेशम के हत्यारे ढूँढ़ने केलिए सारंग और रंजीत अपील केलिए जाने की खबर गांव भर फैलने लगी। खेत जाने के रास्ते में डोरिया ने सारंग को रोका और चेतावनी दी कि अगर केस लेकर आगे जाएँ तो चंदन को भी मारेगा। यह सुनकर सारंग ने उसे जूते से मार दिया और बदले में वह उसकी ब्लाउस फाड़ दी।

यहाँ डोरिया ऐसे लोगों का प्रतीक है जो अपने शारीरिक या राजनैतिक बल पर दंभ करके बेसहारों के शोषण करते हैं। आज की सामाजिक नीति डोरिया जैसे अधर्मियों के कब्जे में है। अपने सांप्रदायिक, सामाजिक वैर के बदला लेने केलिए वैरी के बेटे-बेटियों को हड़पकर छिपा रखना, उनके घर की नारियों का शारीरिक शोषण करना, घर में आग-लगाना, हमला करना, प्रियजनों की हत्या करना किसी झूठे-मूठे मामलों में फँसाकर जेल डालना आदि निर्मम व्यवहार आजकल हमारे समाज सजीव रूप से दिखाई पड़ती है।

एक बार सारंग अपने गुरुकुल की घटनाएँ याद करती रही। शारदा और शकुंतला की याद उसको आज भी दर्दनाक लगी। गुरुकुल में रहकर भी अपने मास्टरजी द्वारा शोषित शारदा और किसीसे गर्भधारण करनेवाली शकुंतला दोनों की मामलों में लड़कियों को सज़ा भुगतना पड़ा। अन्यायी पुरुष से किसीने कोई प्रश्न नहीं उठाया।

समाज का एक ऐसा आदत है कि नारियों की बदनामी करना, कानाफूसी में वे एक अलौकिक आनंद अनुभव करते हैं। श्रीधर मास्टर सारंग के यहाँ आता जाता था, वे दोनों आपस में प्रभावित थे। प्रधानिन ने कहा - "सारंग तो दो-दो मर्द.... भवानीदास के मोहल्ले में तो..... डोरिया की अम्मा हाथ फेंक-फेंककर गाली देती हैं दोनों बहनें नकटी निकलीं। एक ने पेट टाँग लिया, दूसरी टाँग लेगी तो रंजीत के सिर थोप देगी।"[1] कभी कभी नारी ही नारी का दुश्मन होगी।

हरिप्यारी की बेटी गुलकंदी बिसुनदेवा खटीक के साथ भाग गयी, श्रीधर ने उनकी मदद की। गाँव में बहुत हलचल मच गई एक दलित के साथ जाट युवति का फरार, मदद भी और एक दलित ने किया। होली के अवसर पर गुलकंदी और बिसुनदेवा गाँव आने की खबर जानकर गांव के सत्ताधारियों ने उनके विरुद्ध षड्यंत्र रचा और होली के रात उनके घर को आग लगा दी। गुलकंदी, माँ और बिसुनदेवा तीनों मारे गए। प्रधानजी ने बयान दी यह कोई हत्या का श्रम नहीं, होली के अवसर हुई सिर्फ एक दुर्घटना है। सारंग को बुलाकर प्रधानजी ने सबके सामने उसका अपमान किया। उन्होंने कहा हरिप्यारी के परिवार की हत्या और श्रीधर की ओर हुई मार-पीट का कारण सारंग है। सारंग पढ़ी-लिखी औरत थी, एम.एस.सी डिग्रीवाले रंजीत की पत्नी थी। फिर भी अपनी ज़िंदगी में उसका शोषण ही हुआ था।

अनाथ मंदा को लेकर 'इदन्नमम' की बुआ श्यामली के पंचमसिंह के शरणार्थी बन गयी। इनको आश्रय देने के विषय पर घर के अधिकांश

---

1. चाक पृ. 153

आदमीलोग विरोध प्रकट करते थे। वहाँ की नारियों ने उन्हें अवज्ञा की दृष्टि से देखा, पंचमसिंह की पत्नी और कुसुमा इसके अपवाद है। रतनयादव के आदमियों के भय से उनको समथर जाना पड़ा, वहाँ से वे श्यामली लौट आयी। फिर श्यामली से ओरछा, बिरगांव आदि स्थानों में जाना पड़ा। बिरगाँव में बुखार से तड़पती मंदा का बलात्कार कैलास मास्टर ने किया। अपने अस्तित्व खो गयी पहले उसको, फिर मान भी। बिरगाँव से श्यामली लौट आयी मंदा की सगाई मकरंद के साथ हुई। लेकिन मकरंद के माता-पिता के विद्रोह के कारण यह सगाई छूट गई। प्रेम केस वापस लेने की खबर सुनकर वे अपने सोनापुरा लौट आयीं। वहाँ पहुँचते ही उसने समझ लिया पंचमसिंह के भाई गोविंदसिंह ने सहायता और सहानुभूति की आड़ में उनकी सारी संपत्ति हड़प कर अभिलाख को बेच दिया। अब वे निरालंब थे।

गृहस्थी संभालने केलिए मंदा गाँव और बाहर रामायण बाँचने जा रही थी। मंदा का जीवन-लक्ष्य यह था कि गाँव के अस्पताल में डाक्टर लाना। इसकेलिए झाँसी के सी.एम. ओफ़ीस में आनेवाली मंदा से वहाँ के अफ़सर ने रिश्वत के रूप में बडे रकम माँगे। अपनी ज़िंदगी की असफ़लता पर निराश होकर मंदा योगिनी बनना चाहती है। कायला के महाराज और उनके शिष्य भृगुदेव के समुचित हस्तक्षेप के कारण मंदा अपने कर्तव्य के प्रति सजग हो उठी।

क्रेशर के ब्लास्टिंग के कारण आसपास के गाँववाले चैन से न रह सकते और उनकी खेती भी बिगड़ जाती है। मंदा के नेतृत्व क्रेशर मालिकों के विरुद्ध आंदोलन चलाने का निर्णय लिया गया। द्वारिका कक्का के

साथ जाते समय मंदा और क्रेशर मालिक अभिलाख के बीच वाक्युद्ध हुआ, क्रुद्ध होकर अभिलाख ने मंदा पर हमला किया। "अभिलाख ने आव देखा न ताव लपककर मंदाकिनी के बाल पकड़कर झंझोड डाले। साली - हरामजादी कहकर गालियां दीं। बाल पकड़कर ऐंठ डाली और जहाँ हाथ गया तहाँ... ठौर देखा न कुठौर ! टूट पड़ा भूखे भेडिए की तरह।"[1] जब राऊत वर्ग ने अभिलाख के घर पर हमला किया, मामला पुलिस तक गया। मंदा को थाने में पुलिस दारोगा और थानेदारों से अपमान ही सहना पड़ा। मंदा पीछे न हटी। जनद्रोह के विरुद्ध गांव के अस्पताल में डाक्टर न भेजने के विरुद्ध क्रेशर मालिकों से गांववालों में जागरण केलिए मंदा आंदोलन ज़ारी करती थी।

मंदा की संतत सहचारिणी सुगुना का बलात्कार अभिलाख सिंह ने किया। वह गर्भवती बन गयी। सुगुना अपनी पूरी ताकत संजोरकर चाकू से अभिलाख को मार डाला और मिट्टी का तेल डालकर आत्महत्या की।

'इदन्नमम' में सामाजिक शोषण करनेवाले ज़रूर धनवान लोग तथा उनके आश्रित हैं जैसे गोविंदसिंह, रतनसिंह, यादव, जगेसर आदि। अधिकारी वर्ग अपनी सत्ता कायम रखने केलिए नारी का इस्तेमाल करते हैं।

'झूलानट' की शीलो 'इदन्नमम' की कुसुम की तरह उपेक्षिता थी। सुमेर ने उसे छोड़कर एक शहरी नारी को अपनाया। सास की प्रेरणा से शीलो सुमेर के छोटे भाई बालकिशन की पत्नी बन गयी। बुंदेलखंड में स्त्री का दूसरा विवाह बछिया दान करके सादा रीति में संपन्न किया जाता है।

---

1. इदन्नमम पृ. 199

'बछिया' के नाम पर शीलो के विरुद्ध पंचायत भी बुलाया गया। यहाँ एक आदमी को कानून या रीति-रिवाज़ के एवज पहली पत्नी होते हुए भी दूसरी शादी कर सकता है, लेकिन स्त्री नहीं कर सकती।

'कस्तूरी कुंडल बसै' मैत्रेयीजी का आत्मकथात्मक उपन्यास है। इस उपन्यास के केंद्र में स्वयं मैत्रेयी है और उनके अधिक उनकी माँ कस्तूरी है। मर्दों की दुनिया में स्त्रियों की हैसियत का बोध मैत्रेयी को उसीसे मिला है।

पति की मृत्यु के बाद कस्तूरी पढ़ने लगी और ग्रामसेविका की नौकरी भी पाई। बड़ी होने पर बेटी मैत्रेयी को पढ़ने भेजा हर दिन उसे स्कूल पहुँचाने की ज़िम्मेदारी माँ ने एक साइकिलवाले लड़का जगदीश पर सौंपा। जगदीश से दुरनुभव होकर मैत्रेयी भाग गयी। हमारे समाज में छोटी लड़कियों के साथ इसप्रकार के शारीरिक शोषण दिन व दिन बढ़ती जा रही है। आदमी लोगों का नैतिक स्तर बिगड़ गयी है आजकल।

मैत्रेयी को संयोजिका के यहाँ रहकर पढ़ने का प्रबंधकर माँ काम केलिए चली गयी। संयोजिका के छोटे बेटे का दुरव्यवहार से ऊबकर मैत्रेयी अलीगढ़ में रहनेवाले गांववाले के यहाँ गयी। वहाँ की स्थिति भिन्न नहीं थी। घर में आने जानेवाले एक बूढ़े के कब्जे से वह किसी तरह बच गयी। कालेज में पढ़ते समय एक बसकंडक्टर से उसको शारीरिक अपमान भोगना पड़ा। अपने अनुभवों से मैत्रेयी ने सोचा कि नारी की सुरक्षा शादी से मिलेगा। अपनी बेटी की निरंतर मांग के कारण कस्तूरी को मैत्रेयी को वर ढूँढ़ना पड़ा और वर के रूप में एक डाक्टर को मिला। शादी के तुरंत बाद मैत्रेयी समझ गयी कि नारी को वैवाहिक जीवन में भी कठिनाइयां

झेलना है। बच्ची को रूप-सौकुमार्य न होने के कारण पास-पड़ोसवालों के हँसी-मज़ाक का पात्र बन गयी मैत्रेयी।

'कही ईसुरी फाग' लोककथा पर आधारित उपन्यास है। ऋतु नामक लड़की का शोध विषय है "ईसुरी का बुंदेली को योगदान।" इसको कोई प्रामाणिकता नहीं है परम्परागत रूप से कही जानेवाली कहानी है ईसुरी और रजऊ की प्रेमगाथा। ऋतु और माधव सरस्वतीदेवी भजनमंडली द्वारा मंच पर अवतरित फाग नाटक देख रहे थे। काकी के बेटा प्रताप की बहु रज्जो अतिसुंदरी थी। ईसुरी ने 'रजऊ' प्रताप का रज्जो है। रज्जो की ज़िंदगी का चैन छूट गया। रज्जो की अनुमति के बिना ही ईसुरी ने फाग में उसका नाम इस्तेमाल किया। प्रताप की गौरहाजिरी में रज्जो के मन में ईसुरी के प्रति प्रेम उत्पन्न हुए और वह अपनी घर की जिम्मेदारी भूल गयी। प्रताप, घरवाले और गाँववालों ने उसे कुलभ्रष्टा मानी। ईसुरी और समाज से पीड़ित सज्जो की कहानी है यह। समांतर रूप से ऋतु और माधव की प्रेम कहानी और ऋतु के शोध भी लेखिका हमारे सामने उभरती है। ऋतु का थीसिस 'अप्रामाणिक' कहकर उसके प्रोफेसर ने तिरस्कृत किया। गाँव की बड़ी-बूढ़ियों की मदद से ऋतु ने ईसुरी और रजऊ की ज़िंदगानी ढूँढ़ थी है। माधव के साथ उसका सारा प्रयास मिट्टी में मिल गयी।

मैत्रेयीजी ने अपने उपन्यासों ओर कहानियों में चित्रित नारीशोषण आजकल हमारे समाज में सजीव हैं। लेखिका ने यथार्थ अनुभव से ही अपनी रचनाओं का गठन किया है।

नारीशोषण-नौकरी के क्षेत्र में

आजकल लगभग ज़िंदगी के सभी क्षेत्रों में नारी अपना योगदान दे रही है। उच्चशिक्षित हो या अल्पशिक्षित हो वह कई प्रकार की कठिनाइयाँ झेल रही है। कई तरह के अत्याचारों और शोषण का शिकार वन रही है।

पुरुषवर्चस्व दुनिया में पुरुष नौकरी दिलाने के बहाने नारियों को फँसाकर उसका शारीरिक या बौद्धिक शोषण करता है। कामकाजी नारियों को नौकरी करने के साथ अपने परिवार को संभालना है। कितने ऊँचे पद पर शोभित होने पर भी आर्थिक स्वतंत्रता के बिना नारी कामयाब नहीं होगी। परंतु अधिकांश कामकाजी महिलाएं पिता और पति के गुलाम है, इसलिए उसकी ज़िंदगी अपनेलिए नहीं, दूसरों केलिए जीना है। उसके बुद्धि और क्षमता की अधिकारी वह नहीं, उसका पुरुष है।

मैत्रेयीजी के कथा-साहित्य के ज़्यादातर नारी-पात्र अशिक्षित ग्रामीण नारी है। लेकिन उन्होंने दो नेत्र-चिकित्सक डाक्टर महिलाओं की कहानी 'विज़न' नामक उपन्यास में चित्रित किया है।

डॉ. नेहा, डॉ. अजय की पत्नी होने के साथ साथ डॉ. शरण की बहू और शरण आई सेंटर के डाक्टर है। प्रतिभासंपन्न डाक्टर होने पर भी नेहा को अपने ससुर के आई सेंटर के 'बिसिनस' लाभदायक होने का उत्तरदायित्व भी है। नेहा को अपने पति और ससुर के छल-कपट को साथ देने की इच्छा कभी भी नहीं है। डेढ़ हज़ार की आंख शरण आई सेंटर में चार हज़ार में मिलती है। एक बार चंडीगढ़ कॉनफ्रेंस में भाग लेने केलिए नेहा ने पेपेर्स और स्लाइड तैयार किए। लेकिन अजय ने उसे वहाँ जाने से

रोक लिया। यहाँ नेहा प्रतिभासंपन्न डाक्टर होने पर भी पति और ससुर द्वारा शोषित थी।

डॉ. आभा डॉ. मुकुल की पत्नी थी। मुकुल के घरवाले जो ग्रामीण थे आभा को डाक्टर से ज़्यादा बहु समझती थी। इसलिए आभा शहर के अस्पताल जाना वे पसंद नहीं थे। मुकुल ने भी आभा का सहयोग नहीं दिया। डॉ. आभा एक व्यक्तित्ववाली स्वाभिमानी नारी थी। उन्होंने अपने पति से तलाक लेकर शहर गयी।

समाज के उच्चपद पर काम करनेवाली नारियों की अवस्था नेहा और आभा जैसी है तो मध्यवर्गीय और निम्नवर्गीय नारियों की स्थिति क्या होगा? शिक्षित नारियां शोषण के प्रति विद्रोह न करने पर नारी मुक्ति संभव नहीं होता।

दलित और जनजाति नारी शोषण

दलित वर्ग जन्म से शोषण के शिकार है। अपने वर्ग की मुक्ति केलिए डॉ. अंबेड़कर ने बहुत कोशिश की। लेकिन आज भी वे गुलाम की ज़िंदगी जी रहे है। जिंदगी के हर क्षेत्र में, हर दिशा में नारी का शोषण चलता रहता है। दलित और जनजाति होने पर नारी की स्थिति और भी शोचनीय है।

मैत्रेयीजी ने 'इदन्नमम' में क्रेशर मालिकों द्वारा शोषित एक भील जनजाति राऊत वर्ग की संघर्ष-गाथा खींची है। ये लोग पहाडों में टपरिया बनाकर रहते हैं। इसमें प्रवेश करने केलिए रेंगना चाहिए। भूख, बीमारी,

शारीरिक शोषण ये तीनों उनकी संपत्ति है। दिन-रात पत्थर तोड़नेवाली नारियों को वेतन नहीं देते, भोजन ही नहीं देते, फिर देते हैं शोषण। परबतिया, अहलिया आदि राऊत नारियाँ क्रेशर मालिकों के शोषण का शिकार बनकर मर गयी है। रात-भर बीमार से तड़पनेवाली परबतिया को मालिक ने शराब पिलाकर नौकरी करायी और अंत में भूख और बीमार से त्रस्त वह मर गयी। अपने बच्चे की शादी केलिए पैसा न मिलकर बारात में उन्होंने अनजाने एक विषजंतु का मांस परोसा था, इसी कारण हैजा फैल गयी, अनेक मारे गए। अहलिया पंद्रहवर्षीय लड़की है, अपने पिता जैसे उम्रवाले जगेसर काका के जाल में फँसकर तपेदिक की रोगी बनकर उसने मृत्यु का वरण किया। ये जनजाति अनपढ़ और शोषित हैं। सच में उनका अज्ञान ही मालिकों की संपत्ति है।

मैत्रेयीजी के 'अल्माकबूतरी' में 'कबूतरा' नामक अपराधि जनजाति का जीवन चित्र है। कदमबाई उपन्यास का प्रतिनिधि पात्र है। उसके पति जंगलिया को एक माट-काट के मामले में फंसाकर कज्जे लोग मरवा देते थे। जंगलिया की हत्या का कारण कदमबाई का मोहक शरीर था। मंसाराम ने उसपर मोहित होकर उसे अपनी इच्छा के अनुसार भोगने केलिए जंगलिया की हत्या की। कबूतरियों के शारीरिक शोषण केलिए और शराब पीने केलिए कज्जे पुरुष उनकी बस्ती में आते जाते थे। अंधेरे में पति की प्रतीक्षा में खेत में खड़ी कदमबाई के साथ मंसाराम ने शारीरिक संबंध स्थापित किया। वह गर्भवती बन गयी और उसने राणा को जन्म दिया। अपने बेटे को पढ़ाने केलिए उसको बहुत कुछ शोषण सहना पड़ा।

भूरी कबूतरी इस उपन्यास के सबसे विद्रोही नारी पात्र है। भूरी का पति वीरसिंह मारा गया। उसने अपने बेटा रामसिंह को पढ़ाने का निर्णय लिया। अपना शरीर बेचकर पैसा कमाकर उसने रामसिंह को पढ़ाने केलिए भेज दिया। अंत में उसको सज़ा के रूप में जलसमाधि स्वीकारना पड़ा।

रामसिंह की बेटी अल्मा पढ़ी लिखी थी। लेकिन रामसिंह को पुलिस का दलाल बनना पड़ा और डाकू बेटासिंह के नाम पर मरना पड़ा। अनाथ और राणा से गर्भवती अल्मा सूरजभान तथा उनके दोस्तों द्वारा और जन कल्याण मंत्री श्रीरामशास्त्री के द्वारा बलात्कार का शिकार बन गयी। अल्मा को अपने प्रियतम राणा और अपने प्रिय पिता नष्ट हो गए। 'अल्मा कबूतरी' में कोई भी कबूतरी शोषण से मुक्त नहीं है।

'कस्तूरी कुंडल बसै' में लेखिका ने एक दलित नारी हबीबन का उल्लेख किया है। मैत्रेयी के ब्याह के अवसर पर गांव की सभी नारियां घर मे आ समायी, लेकिन रसोई में मदद करने केलिए कोई नहीं थी। कस्तूरी ने बरतन माँजने की ज़िम्मेदारी हबीबन पर छोड़ दिया। बात जानकर बूढ़ी ब्राह्मणियों ने उसे गालियाँ से अभिषेक किया। उन्होंने कहा हबीबन रसोई में काम करें तो वे ब्याह में नहीं भाग लेतीं।

इसप्रकार दलित और जनजाति नारी की सामाजिक स्थिति बहुत शोचनीय है। मैत्रेयीजी उन शोषण का चित्रण यथार्थ के धरातल पर किया है।

नारी-शोषण के प्रति विद्रेह

विद्रोह से मनुष्य की स्वतंत्रता संभव होगी। शोषण के प्रति नारी-विद्रोह एक दिन की सृष्टि नहीं। युग-युगों से पीड़ित नारी मानसिकता की सहज परिणति है। आज की नारी सत्ता के प्रति, सांप्रदायिकता के प्रति विद्रोह करने के साथ साथ अपने बंधनों को तोड़ने का प्रयास भी करने लगी। धीरे-धीरे उसका पराश्रित रूप स्वाश्रित में परिवर्तित होती जा रही है। मैत्रेयीजी की रचनाएँ इसका नमूना है।

अधिकांश ग्रामीण लड़कियां 'बेटी' कहानी की मुन्नी शिक्षा से वंचित थी। मुन्नी अपनी माँ के विरुद्ध एक बार आवाज़ उठाती थी, क्योंकि उसको स्कूल जाना चाहिए। "अम्मा, तुम मेरे साथ जो कर रही हो, वह कुछ अच्छा नहीं कर रहीं। तुम पाँच-पाँच लड़कों को पढ़ा सकती हो, लेकिन मेरेलिए तुम्हारे घर अकाल है.... मेरी किताब-कापी के पैसे तुम्हें भारी है अम्मा!"[1] इसप्रकार अपने हक की माँग करनेवाली लड़कियाँ बहुत विरले ही हैं हमारे समाज में। 'बहेलिये' की गिरजा की बहन क्षय-रोगी बनकर, विधवा होकर ससुराल में आग लगकर मर गयी। गिरजा के वृद्ध पति के ऊपर पेड़ गिर गया और गिरजा भी विधवा बन गयी। माँ और दीदी के छोटे बेटे का बोझ उसके कधों पर आ गया। वह थक नहीं गयी। समाज से होड़कर ज़िंदगी बिताने को उसने निर्णय लिया। सूरज को एक पुलिस अफ़सर बनाना चाहिए। वे पढ़ने लगी। शिक्षा और जागरण की बातें करने लगी। स्त्री-शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठी। रात में सभाएँ बुलायी और रात्रि-पाठशाला में ग्रामीण नारियों को जोड़ लेती थीं।

---

1. बेटी (चिह्नार) पृ. 21

'मन नाहिं दस बीस' की चंदना अपने देवर का निरंतर बलात्कार का शिकार बन गयी। सहन-शक्ति की सारी सीमा चूक गयी पर उसने भोजन में जहर डालकर देवर को देकर उसकी हत्या की। चंदना के सामने और कोई रास्ता नहीं है। उसको देवर के साथ अपने पति भी नष्ट हो गया और स्वयं जेल जाना पड़ा।

'आक्षेप' नामक कहानी में रमिया सच में एक समाज-सेविका थी। समाज की ओर से अपनी तरफ़ आनेवाले आक्षेप के तीर को परवाह किये बिना दीन-दुःखियाँ की सेवा करके अपने अपना विद्रोह प्रकट किया।

'चिह्नार' कहानी संग्रह की नारी-पात्रों में सबसे सशक्त पात्र 'केतकी' कहानी की केतकी है। अपने ससुर के मित्र प्रधान गंधर्वसिंह ने केतकी का बलात्कार किया। वह गर्भवती बन गयी। एक बार पंचायत के समय सबके सामने केतकी गंधर्वसिंह को हाथ पकड़कर नीचे उतारा और ज़ोर से कहा मेरे गर्भ के ज़िम्मेदार आप है। आजकल के अधिकांश सत्ताधारियाँ गंधर्वसिंह जैसे हैं, स्वयं जुर्म करता है और ज़िम्मेदारी दूसरों के ऊपर डालता है।

'फैसले' की वसुमती पति रनवीर की गुलाम थी। उसकी मर्जी के विरुद्ध वसुमती घर के बाहर जा ही नहीं सकती। गांव की प्रधानिन होने पर भी मामलों पर फैसला लेने केलिए वह पंचायत नहीं जा सकती। प्रमुख के चुनाव में एक वोट की कमी पर रनवीर हार गया। वसुमती ने अपना वोट पति को नहीं दिया। अपने गाँव की सहेली गड़रिया की पत्नी ईसुरिया का प्रभाव उसपर गहरा असर डाला।

'अब फूल नहीं खिलते' में झरना गांववाली है फिर भी वह शहर के कॉलेज में पढ़ती थी। झरना में स्वयं मैत्रेयीजी का झलक है। सहशिक्षा होने पर भी लड़कियों केलिए अलग कॉमनरूम है, अध्यापक की अनुपस्थिति में लड़कियों को वहाँ बेठना है। झरना ने प्रिन्सिपल साब से कहा, लड़कों के साथ बैठकर पढ़ सकते हैं, उसी कक्षा में रह सकते हैं, फिर भी अध्यापक के साथ आने-जाने की बात क्यों करते झरना ने कॉमनरूम में जाना छोड़ दिया। गुप्ता साब ने झरना की कॉपी में अश्लील शब्द और चित्र लिखा। झरना ने उसका क्लास बायकॉट किया। प्रिन्सिपल साब ने उसका बलात्कार किया। वह अपने सारे सहपाठियों को बुलाकर बात बतायी और प्रार्थना सभा में प्रिन्सिपल के विरुद्ध आवाज़ उठायी। झरना जैसी विद्रोहिणी पात्र ज़रूर लड़कियों केलिए प्रेरणादायक है, क्योंकि आजकल की लड़कियों को इसप्रकार के शोषण कभी-कभी भोगना पड़ता है।

सिर्फ पढ़ी-लिखी नायिकाएँ द्वारा नहीं, अनपढ़ ग्रामीण नारी-पात्र द्वारा भी मैत्रेयीजी शोषण के प्रति विद्रोह प्रकट करती है। विद्रोह प्रकट करने में 'पगला गयी है भगवती' में भागो ने एक अलग रास्ता चुन लिया। जिज्जी की बेटी अनसूया पहले ही माँ से उपेक्षित लड़की थी। उसका संरक्षण भागो ने किया था। अनसूया के भाई ने अपनी मर्जी के अनुसार रेजिस्टेर विवाह किया और माँ-बाप उन्हें बुलाकर धूम-धाम से ब्याह कराया। उस समय आशिष देने केलिए माधोसिंह मंच पर आते वक्त बंदूक की गोली की तरह पत्थर कंकट भागो ने मारा। सब सोच भागो पागल बन गयी है। लेकिन वह अपने विरोध प्रकट करने केलिए ही पत्थर फेंका था।

'बेतवा बहती रही' में उर्वशी ने ज़िंदगी में केवल एक बार ही अपना विद्रोह प्रकट किया, वह है उदय की शादी के विषय में। उदय की शादी का प्रस्ताव आने पर उर्वशी ने उदय से सलाह दिया कि विजय की विधवा बहु को पत्नी बनाना अच्छा होगा। बरजोरसिंह विरोध करने पर भी उर्वशी की प्रेरणा से उदय ने विजय की बहु की शादी की।

भुवन और उर्वशी में विद्रोही भावना कम दिखाई देती है लेकिन 'चाक' की सारंग और रेशम ग्रामीण महिलाएँ होते हुए भी अपने प्रति हो रहे शोषण के विरुद्ध अपना विद्रोह प्रकट किया।

रेशम का पति कर्मवीर की मृत्यु के छः महीने बाद वह गर्भवती हो गयी। वह किसी के नाम बताने केलिए तैयार नहीं थी। बिना बाप के एक बच्चे का पालन करने का साहस उसमें थी। गर्भवती रेशम के सामने ससुरालवाले ने एक सुझाव रखा, डोरिया को पति के रूप में स्वीकार कर लो। लेकिन रेशम आत्मवंचना केलिए तैयार नहीं थी। उसने विद्रोही शब्द में नारी से संबंधित एक सच्चाई सास से पूछीं, "तुम्हारे पूत की चिता ठंडी हो जाने से क्या मेरी देह की आग बुझ जाती? बिना बाप के बालक को भगवान पाप मानता तो कुऑरी विधवा की कोख डालता।"[1]

शोषण के प्रति प्रश्न उठानेवाली रेशम की याद भी प्रेरणादायक है। लेकिन रेशम की हत्या डोरिया ने किया। रेशम की हत्या के विरुद्ध आवाज़ उठाने में सारंग के सिवा और अतरपुर गांव में कोई नहीं है। उसके

---

1. चाक पृ. 19, 20

हत्यारे को कानून के सामने लाने केलिए सारंग बहुत कोशिश करने लगी। सारंग गाँव के सत्ताधारियों के गूँगापन पर अपना रोष प्रकट करती है। जनसंरक्षक आजकल जनशोषक बन बैठे हैं। प्रजातंत्र स्वार्थपरता में डूब गया है। अन्याय के नाम पर गूँगे संरक्षक के प्रति हम क्यों नतमस्तक रहें? यही प्रश्न सारंग अपने मन से पूछ रही थी। सेशन कोर्ट से डोरिया को कोई दंड नहीं मिला, क्योंकि हत्या को कोई गवाह नहीं। इसलिए सारंग हाइकोर्ट में अपील करने जा रही थी। यह बात जानकर डोरिया ने उसे रास्ते में रोक दिया और चंदन को मारने की चेतावनी दी। यह सुनकर सारंग भयभीत होकर भाग नहीं गयी, उसने अपना जूता उतरकर लात मारा उसे। डारिया के भय से रंजीत चंदन को आगरा भेजना चाहता था। पर वह उसके विरुद्ध थी। फिर भी रंजीत की धमकी से चंदन को आगरा भेजना पड़ा। बाद में गाँव के स्कूल में श्रीधर प्रजापति आया, जो जाति में कुम्हार था। चट्टाचौथ के अवसर बच्चों के साथ घर आए। मास्टर के पाँव सारंग ने छुआ। नीचे कौमवाले व्यक्ति के पाँव पकड़ने पर गाँव में कानाफूसी फैलने लगी। सारंग ने उस पर ध्यान ही नहीं दिया।

एक बार मास्टरजी ने 'एकलव्य' नाटक बच्चों से मंच पर अवतरित कराने को निर्णय किया। नाटक के संवाद लिखने की ज़िम्मेदारी उन्होंने सारंग पर सौंपा। सारंग ने संवाद लिखा और 'रिहेर्सल' में स्कूल जाकर मास्टर की मदद भी की। इस पर नाराज़ होकर रंजीत ने उसे 'बेशर्मी' कहकर अपमानित किया, लेकिन वह न हिल उठी। किसीके सामने वह घुटना टेकना नहीं चाहती थी।

सारंग ने अपनी मर्जी से अपना शरीर श्रीधर को सौंप कर दिया। इसके प्रति सारंग के मन में अपराध-बोध लेश-मात्र भी नहीं था। उसके मत में पतिव्रता रखने पर नारी शोषण से मुक्त नहीं है। नारियों के प्रति समाज की दबी हुई नीति की ओर घोर विद्रोह यहाँ सारंग प्रकट करती है। सारंग आधुनिक नारी का प्रतीक है। एक ग्रामीण जाट कुल वधु होने पर भी सारंग का विद्रोह अपनी सीमाओं के ऊपर था। लेखिका ने पुरुषसत्तात्मक समाज से अपना विद्रोह प्रकट करने केलिए सारंग की पात्र-सृष्टि एक सशक्त हथियार के रूप में किया है।

प्रधान पद के चुनाव में खड़े होने केलिए सारंग तैयार हो उठी। अपने बेटे को फिर आगरा भेजने केलिए तैयार होनेवाले पति रंजीत के विरुद्ध उसने बंदूक भी ले लिया। इतनी हिम्मत मैत्रेयीजी की और कोई नारीपात्र नहीं दिखाती है।

'इदन्नमम' में मंदा, प्रेम, बऊ, सुगुना, कुसुमा आदि सब प्रमुख नारी-पात्र शोषण के शिकार बन पड़ी है। यहाँ मैत्रेयीजी ने अपनी नारी पात्रों द्वारा विद्रोह की मज़बूत आवाज़ उठायी थी।

मंदा जब तक श्यामली में थी तब तक एक साधारण गांववाली लड़की जैसी थी। लेकिन बरसों बाद जब वह सोनपुरा लौट आयी तब से उसके चरित्र-चित्रण में लेखिका अविश्वसनीय बदलाव लायी। गोविंदसिंह द्वारा अपनी पूरी ज़मीन और जायदाद नष्ट होने पर भी वह रामायण, महाभारत बाँचकर रोज़ाना चलाती थी। अपने पिता के स्वप्न गांव के अस्पताल में डाक्टर लाने केलिए वह दिन-रात कार्यरत थी। झाँसी के

सी.एम.ओ. आफ़ीस जाने पर क्रूर अवहेलना हुई फिर भी वह थक नहीं गयी। एम.एल.ए राजा साहब से मिलने गयी। फिर भी अस्पताल में डाक्टर नहीं आया। गांव में पक्के सड़क नहीं है। एक पोस्टअफीस नहीं है। हर दिन अखबार नहीं मिलता। चुनाव के समय मंदा के नेतृत्व में गाँव में वोट बहिष्कार का आंदोलन चलाया गया और राजासाहब ने जल्दी से डाक्टर इंद्रमणिसिंह और एक कम्पौंडर को भेजा।

कायला के महाराज से पारीछा थर्मल प्लांट के विरुद्ध आंदोलन चलनेवाले पारीछ ग्राम प्रधान टीकमसिंह और ग्रामवासियों के प्रयत्न जानकर मंदा ने अपने ग्रामवासियों की सुरक्षा केलिए क्रेशर मालिकों के विरुद्ध आंदोलन चलाने का निश्चय किया। गांववालों के सभा बुलाकार उनमें जागरण उत्पन्न करने केलिए भाषण दिया मंदा ने। यहाँ मंदा श्रीमती मेधा पड़कर की याद दिलाती है। राजनीति के कब्जे में न पड़कर समाज-सेवा करनेवाली मेधाजी जैसी महतियां हमारे देश में कम ही नहीं विरले ही मिलती है। मंदा का पात्र यहाँ से विद्रोहिणी समाजसेविका का रूप धारण करता है। गाँव में ट्राक्टर लाने केलिए मंदा ने खूब परिश्रम किया और सफ़लता पायी। वह क्रेशर बालकों को बाल-नौकरी से मुक्त होकर पढ़ने केलिए भेजना चाहती थी। हमारे देश में बाल-नौकरी कानून से रोक लिया था, फिर भी व्यवसाय के अधिकांश क्षेत्र में बालक-बालिकाओं की भरमार है।

पहाड़ों में काम करनेवाले आदिवासी राऊत लोगों में जागरण उत्पन्न केलिए मंदा का श्रम प्रशंसनीय था। ये राऊत वर्ग क्रेशर मालिकों के गुलाम थे। भूख, बीमारी के शिकार इन बेचारों को रहने केलिए घर भी नहीं था। राऊतिन क्रेशर मालिकों की काम-लिप्सा का शिकार भी था।

मंदा के ज़्यादातर कोशिशें सफ़लता प्राप्त की है। राऊतों पर जागरण लाने में, अस्पताल में मकरंद को डाक्टर के रूप लाने में, क्रेशरवालों के विरुद्ध आंदोलन चलाने में उसने सफलता पाई है।

विधवा बऊ के चरित्र में लेखिका ने विद्रोह लाने की कोशिश की है। विधवा होने पर भी उसने दूसरी जिंदगी न स्वीकार करके अपने बेटे की देख-भाल अकेली निभायी। बेटे की हत्या के बाद बहु मंदा को छोड़कर चलते समय मंदा का सुपुर्द उसने ले लिया। मंदा को माँ न लेने केलिए उसने केस चलाया। मंदा की सुरक्षा केलिए उसको उसे लेकर श्यामली, समथर, ओरछा, बिरगांव जाना पड़ा। सोनपुरा के सारे जायदाद छल से नष्ट होने पर भी उसने अपना साहस न छोड़ा। बऊ मंदा की माँ प्रेम को कभी भी माँफ़ी न दे सकती। अपनी आखिरी संपत्ति बेचने पर भी उसने पंचमसिंह भेजे गए रुपए स्वीकार नहीं किए। मंदा के चरित्र-गठन में बऊ का योगदान कम नहीं था।

कुसुम भी एक विद्रोहिणी नारी है। अपने पति यश्पाल द्वारा उपेक्षित भी वह ससुराल में रहती थी। वहाँ के तपेदिक के रोगी अमरसिंह के साथ उसका संबंध हुआ और एक बच्चा भी हुआ। बच्चे के जन्म से पहले अमरसिंह मर गया। मंदा को मंदा बनाने में कुसुम की कोशिश ने जीत पाई। बिरगाँव तक जब कैलासमास्टर ने मंदा का बलात्कार किया तब कुसुमा ने उसे मार मारकर हड्डियां तोड़ डाली और मंदा को धीरज बँधाकर श्यामली ले गयी।

आद्यंत मंदा की सहचारिणी सुगुना पर मंदा का प्रभाव ज़रूर पड़ा था। जब वह समझ गयी कि अभिलाख के बलात्कार से वह गर्भवती बन गयी, अभिलाख की हत्या करने की बहादुरी उसने दिखाया और मिट्टी का तेल डालकर उसने आत्महत्या की।

'झूलानट' की शीलो को शादीशुदा होने पर भी बरसों तक अनब्याही रहना पड़ा। सुमेर ने उसे छोड़कर एक शहरी नारी से शादी की। सास की सलाह से वह बालकिशन की पत्नी बन गयी, शादी के बिना। बुंदेलखंड में स्त्री के दूसरा संबंध केलिए 'बछिया दान' अनिवार्य है। लेकिन बछिया केलिए शीलो तैयार नहीं थी। सुमेर ने पहली पत्नी के रहते हुए भी दूसरी शादी की। फिर शीलो क्यों न करें।

भुवन का अनोखा चित्रण मैत्रेयीजी ने 'आगनपाखी' में किया है। भुवन का पहला परिचय लेखिका ने विद्रोहिणी रूप में अदा किया है। अपने स्वर्गीय पति विजयसिंह के जेठ अजयसिंह के नाम पर भुवन ने कोर्ट में एक मुकदमा फाइल किया अपने पति के हिस्से की चल-अचल संपत्ति की हकदार स्वयं भुवन है, इसलिए पति के जायदाद का हक उसको मिलना चाहिए। भुवन कई वर्षों के अज्ञातवास के बाद ही अब प्रकट हुई, इतने साल वह कहाँ थी? किसीको नहीं जानते।

भुवन की पिछली ज़िंदगी शोषण से भरपूर थी। वह पाँचवीं कक्षा के आगे पढ़ नहीं सकती, उसको पढ़ना चाहिए, लेकिन घर और खेत में ज़्यादा काम है। भुवन की शादी पागल विजयसिंह के साथ हुई। भुवन तलाक लेना चाहती थी। वह अपनी माँ से पूछ रही थी, "अम्मा ब्याह करना

पाप नहीं तो ब्याह छोड़ना क्यों पाप है?"[1] वह ससुराल के आचार-मर्यादा न मानकर मंदिर में पूजा केलिए जाती थी। गांव से मंगल माली वहाँ आयें तो लाज-लिहाज भूलकर उसने स्वीकार किया। भुवन ने चंदर की मदद से विजय को इलाज केलिए अस्पताल में पहुँचाया। अपने पति की बीमारी दूर करने केलिए तांत्रिक विद्या पढ़ने लगी। अंत में विजय की मृत्यु पर सती अनुष्ठान केलिए दूसरों ने प्रेरित किया। मंदिर की पूजारी की मदद से भुवन वन में बच गयी। यहाँ जुझारू भुवन को लेखिका ने 'स्मृतिदंश' की भुवन से भिन्न विद्राहिणी नारी के रूप में चित्रित किया है।

दूसरे उपन्यासों से अलग 'विज़न' दो नेत्र चिकित्सक महिला डाक्टरों की कहानी है। डॉ. नेहा अजय के पत्नी होने के साथ साथ डॉ. शरण की बहु और 'शरण आई सेंटर' का डाक्टर भी है। थे तीनों उत्तरदायित्व साथ साथ निभाकर वह थक गयी क्योंकि तीनों रूपों में वह अपनी अस्मिता पहचान न सकी। टिम्मी की माँ के रूप में भी वह जीत न पाई। उसके प्रति जो शोषण हुआ उसकेलिए वह अकेली विद्रोह नहीं कर सकती। इसलिए नेहा ने डॉ. आभा की मदद माँगी। डॉ. आभा ने अपनी डाक्टरी का बाधा बनानेवाले वैवाहिक जीवन छोड़ने की हिम्मत दिखाई। नेत्र चिकित्सा में कुशल डॉ. आभा पति और ससुरालवालों के ज़िद स्वीकार नहीं कर सकती। इसलिए वह तलाक ले लिया। डॉ. आभा ही नेहा से ज़्यादा विद्रोही पात्र है। नेहा की ज़िंदगी का मार्गदर्शक है आभा।

---

1. अगनपाखी पृ. 77

'कस्तूरी कुंडल बसै' मैत्रेयीजी के आत्मपरक उपन्यास होने के नाते माँ कस्तूरी की जीवन-संघर्ष की गाथा है। कस्तूरी शादी करना नहीं चाहती थी। लेकिन माँ, भाभी आदि की प्रेरणा और धमकी से उसको शादी करना पड़ा। ससुराल में किसीने उससे देवता की पूजा करने को कहा, लेकिन वह मूर्तिपूजा पर विश्वास नहीं करतीं, इसलिए पूजा करने केलिए कस्तूरी तैयार नहीं थी। कस्तूरी का दाम्पत्य जीवन तनावग्रस्त था। मैत्रेयी के अठारह महीने की उम्र में कस्तूरी के पति मर गए। एक बूँद आँसू भी कस्तूरी की आँखों से नहीं गिर पड़ी। उसने विधवा बनकर रो-रोकर दिन नहीं बिताए। स्त्री-शिक्षा पर आकृष्ट होकर पढ़ने केलिए इग्लास गयी। तत्कालीन समाज के रीति-रिवाज़ों के विरुद्ध अपनी बेरी के साथ कस्तूरी जीने लगी। कस्तूरी को ग्रामसेविका की नौकरी मिल गयी और पहला पोस्टिंग झांसी में था। कस्तूरी अपनी बेटी को शादी कराना नहीं चाहती थी। उनकी राय में विवाह बुरी चीज़ है, नारी का अजीवनांत बंधन है। बेटी की खुशी केलिए कस्तूरी वर की खोज में निकली, साथ कोई मर्द नहीं था। वह दहेज के विरुद्ध थी, जन्मकुंडली के बदले उसको लड़के का मार्कलिस्ट देखना चाहिए। खोज के अंत में उसको एक डाक्टर दामाद को मिला। कस्तूरी की ज़िंदगी है मैत्रेयी की पाटपुस्तक। उसने अपनी माँ के अनुभवपूर्ण जीवन से बहुत कुछ सीखा।

'कही ईसुरी फाग' की मीरा एक सशक्त आधुनिक नारी पात्र का प्रतीक है। उसकी मदद से ऋतु ने अपनी शोध के 'मेटीरियल्स' इकट्ठा किया है। मीरा गाँववाली होती तो एक साधारण सी लड़की की तरह घूँघट डालकर रसोई में नहीं बैठी। उसकी शादी पंद्रह-सोलह साल की उम्र में हुई

जब वह आठवीं पास थी। बाद में किसी तरह उसने हायर सेकेन्डरी कर ली। दो बच्चे भी हुए। उसने रात भर पढ़ा, दिन में काम किया। बी.ए. कर लिया और गांव की अनपढ़ नारियों को पढ़ाना शुरु किया। पूरे समाज से विद्रोह कर आँगनबाड़ी में काम करने लगी। मीरा से प्रेरणा पाकर रही ऋतु ने अपना थीसिस पूरा कर दिया था।

विद्रोह से मनुष्य की आज़ादी संभव होगी। नारी-विद्रोह एक दिन की सृष्टि नहीं है। कई वर्षों से शोषित नारी मानसिकता की कालानुसृत परिणति है। आज की नारी शोषण के प्रति विद्रोह करने के साथ साथ अपने ऊपर के बंधनों को तोड़ने का प्रयास करने लगी। मैत्रेयीजी के उपन्यास और कहानियाँ इसका सच्चा मिसाल है। समकालीन परिवेश और समाज में नारी को जो-जो अत्याचार झेलने पड़े, उसके विरुद्ध वे अपनी आवाज़ उठाती हैं। नारी जीवन के विभिन्न पहलुओं की भीषणता को अनावृत करने में मैत्रेयीजी अपने कथा-साहित्य के द्वारा समर्थ हुई है।

अध्याय-3

मैत्रेयीपुष्पा के कथा-साहित्य में ग्राम्य-स्पंदन

मैत्रेयीपुष्पा के कथा-साहित्य में ग्राम्य-स्पंदन

भारत की आत्मा गांवों में है। इसलिए गांव को छोड़कर लिखना मैत्रेयीजी केलिए असंभव है। उनका जन्म और परवरिश बुंदेलखंडीय वातावरण में हुआ था। इसलिए गांव का प्रभाव उनकी हर एक रचनाओं में दिखाई पड़ता है। ग्राम्य जीवन के विभिन्न परिदृश्य, प्रकृति वर्णन, प्रकृति का शोषण, शोषण के प्रति विद्रोह, गांव के किसान-मज़दूरों की अभावग्रस्त ज़िंदगी, गांव में रहनेवाली विभिन्न जाति-जनजातियों के लोग, गांव की अनोखा-संस्कृति, आजकल ग्राम्य-जीवन में आए जागरण आदि गांव से संबंधित कई पहलुओं का गहरा अध्ययन और प्रकटीकरण मैत्रेयीजी के कथा-साहित्य का अनोखापन है। हिंदी साहित्य के दूसरे साहित्यकारों से अलग उनका स्थान भी यही है ग्राम्य-लेखिका। उनके हर एक वाक्य में भी ग्राम्य-जीवन का गमक महसूस होता है।

मैत्रेयीपुष्पा के कथा साहित्य में ग्राम्य-जीवन का परिदृश्य

पहले कहानी-सम्राट प्रेमचंदजी और आंचलिक कथाकार रेणुजी आदि महान साहित्यकारों ने कथा-साहित्य की रचना में जो रास्ता अपनाया था, बरसों बाद मैत्रेयीजी उसी रास्ते पर आगे बढ़ रही हैं। ग्राम और ग्राम्य-जीवन उनकी रचनाओं का वैशिष्ट्य है।

'चिह्नार' सन् 1991 में प्रकाशित मैत्रेयीजी का पहला कहानी-संग्रह है। मैत्रेयीजी की ज़्यादातर रचनाओं की भूमिका गांव है। बुंदेलखंड और उसके आसपास के गंव के लोगों की ज़िंदगी उनकी कहानियों की पृष्ठभूमि है। ग्राम्य-जीवन की समग्र निरीक्षणात्मक अभिव्यक्ति कथा-गति के साथ हम महसूस कर सकते हैं।

आजकल के सामाजिक शोषण का सबसे प्रमुख कारण है पारिवारिक विघटन अर्थात् संयुक्त परिवार का विघटन। ग्राम्य जीवन की अपनी खासियत है संयुक्त परिवार। शहर से ग्राम्य-जीवन का मुख्य अंतर भी यही है। संयुक्त परिवार में मिलते अवधान और शांति सुरक्षा भरी ज़िंदगी अणुपरिवार में कभी भी नहीं मिलते। ज़िंदगी की किसी भी आतताइयों को झेलने का अवलंबन संयुक्त परिवार में ज़रूर मिलता है। 'अपना अपना आकाश' नामक कहानी में ससुराल का सारा बोढ कैलाशोदेवी के कंधों पर था। क्योंकि घर की अकेली औरत-जात वह ही थी। लेकिन उसने बड़े अपनत्व के साथ अपना दायित्व निभाती है। घर में सास-ससुर के अलावा विधुर चचिया ससुर, अनब्याहा जेठ, पति, लखिया और मेहनती मज़दूरों की रेल-पेल का अच्छा खासा कुनबा था। अपनी बहु की दक्षता देखकर ससुर ने उसे कनस्तरी-भरे स्वर्ण आभूषण भी दिये।

घर के बुजुर्गों का आदर करना, उनकी सेवा करना ग्रामीण जीवन की विलक्षणता है। बुजुर्गों का संरक्षण करना शहरी लोगों के संबंध 'टैम वेस्ट' है। यहाँ कैलाशोदेवी का एक दिन चिड़ियों के जगाने के पूर्व ही प्रारंभ होता था। लेकर ढ़ोर-डंगारों की सानी-पानी ससुर केलिए दातुन पानी का प्रबंध लखिया को जगाना आदि कई ज़िम्मेदारियां उस पर निर्भर है।

प्रत्येक गांव में शादी के संबंध में जो आचार अनुष्ठान हैं उनमें फरक दिखाई पड़ते हैं। 'सहचर' नामक कहानी में बंशी की लड़की को देखने केलिए उसके दादा और भाई गए थे। उनके यहाँ लड़का साथ जाकर अपनी पत्नी के रूप में किसी लड़की को पसंद करने का रिवाज़ नहीं है।

गाँव की अधिकांश नारियां बेरोजगार हैं। इसलिए हम सोचते हैं कि वे हमेशा आराम से बैठती हैं। लेकिन स्थिति ऐसा-वैसा नहीं है, उनके पास आपस में बातों करने केलिए ही वक्त नहीं है। 'बहेलिये' कहानी में लेखिका ने गांव को ऐसा एक परिदृश्य खींचा है। जहाँ गिरजा के संयुक्त रिवार में घर का सारा काम उसकी माँ और वे दो बहनें करती थीं। चौका-चूल्हे से लेकर ढोर-बछेउओं की सानी-पानी तक माँ का काम है। वे दोनों बहनें खेत-खलिहान का काम संभालती हैं। बुआई के दिनों में बैल के बदले हल के साथ भागती हुई बुआई भी करना पड़ा। हरगिज गांव की नारियां शोषण से मुक्त नहीं है।

"अतिथि देवो भवः" इसका सच्चा अर्थ ग्रामीणों जैसे और कोई नहीं जानता होगा। अपने सीमित दायरे में खड़े होकर वे खुले मन से अतिथियों का स्वागत करते हैं। लेकिन शहरवाले अतिथि आने के पाँच मिनिट बाद घड़ी में बार बार देखते हैं, क्योंकि अतिथि-सत्कार केलिए उनके पास वक्त नहीं है। 'मन नाहिं दस बीस' में ग्रामीणों की अतिथि-पूजा के एक दिली आविष्कार लेखिका ने किया है। जिला नियोजन अधिकारी स्वराज वर्मा का स्वागत वनगाँव के पंचायत भवन में हुआ था। उनके स्वीकार करने केलिए ग्रामसेवक और ग्रामप्रधान जैसे गांव के प्रमुख-लोग

वहाँ मौजूद हैं। बैठने की व्यवस्था कोई वातानुकूलित शयन कक्षा में नहीं नीम के सघन वृक्ष के नीचे थी। वे बैठते ही कुछ ग्रामीण युवतियां एक स्वागत गाना गायीं, फिर मिठाई और शरबत बाँट दिए गए। गाँववासियों के दिल में जो प्रेम और आदर उन्होंने देखा उसका मिसाल शहर में कभी भी नहीं देखा।

शादी के बाद वधु ससुराल में खुले ट्रैक्टर में बैठकर आती है। यह दृश्य हम सपने में भी नहीं देख सकते। गांव में ऐसा दृश्य मामूली तौर से दिखाई पड़ते हैं। गांव की एकमात्र मोटरगाड़ी तो ट्रैक्टर है। वहाँ कार बहुत विरले ही मिलते हैं। 'केतकी' कहानी में मैत्रेयीजी ने ससुराल में वधु आने का एक मनोहर दृश्य का वर्णन किया है। व्रजभूमि में जमुना के किनारे मधुपर गांव में केतकी वधु बनकर आ रहीथी। ट्रैक्टर के आसपास बच्चे मंडरा रहे थे। छोटे बच्चे ट्रैक्टर को पकड़कर चकफ़ेरी लगा रहे थे और कुछ दुल्हन के रेश्मी वस्त्र छूने का असफ़ल प्रयास भी कर रहे हैं।

उपर्युक्त परिस्थिति ग्राम्यजीवन के एक रमणीय परिदृश्य है तो ग्रामीण जिंदगी का एक पीड़ा भरी स्थिति का अंकन लेखिका ने 'केतकी' में किया है। कोई विधवा-नारी नराधमों के बलात्कार की शिकार बनकर गर्भवती हो गयी तो पंचायत बुलाकर उसे अपमानित करने की कूटनीति गांवों में दिखाई पड़ती है। लेकिन जिसने बलात्कार किया उसपर कोई पूछ-ताछ नहीं हो जाएगा। गांव में नारी ही शोषित है पुरुष नहीं, पुरुष-वर्ग कुछ भी कर सकते हैं क्योंकि अधिकार उनके हाथों में है। केतकी का बलात्कार उसके ससुर के मित्र और गांव के प्रधान गंधर्वसिंह ने किया। उस घटना के

बाद एक दिन रेशमिया नामक एक विधवा गर्भिणी का विचार-विमर्श केलिए गंधर्वसिंह के नेतृत्व में पंचायत बनाया गया और फैसला किया गया कि रेशमिया को अपने देवर को पति के रूप में स्वीकारना पड़ा। इस अवसर पर केतकी ने सबके सामने अपने गर्भ का ज़िम्मेदार गजाधरसिंह घोषित किया और उसका यथार्थ चेहरा गांववालों के सामने खोलकर दिखाया।

'रायप्रवीण' कहानी में लेखिका ने फहतेपुर के एक वर्षकालीन ऋतु का वर्णन किया है। कई दिनों से पानी बरसता रहा। आकाश मे काले बादल छा गए। चारों ओर अंधेरा घिर गया। दिन-रात बरसात ही बरसात। बेतवा का जल बढ़ने लगा। खेतों में फसल का बीज गल-गलकर मर गया। सब कहीं भूख ही भूख, खाने केलिए अनाज और पीने केलिए पानी नहीं था। उत्तर भारत के गांवों में इसप्रकार का भीषण दृश्य अक्सर हर साल में होता ही रहता है।

'स्मृतिदंश' मैत्रेयीजी का पहला उपन्यास है। इसमें चंदर के मन में शीतलगढ़ी भुवन की यादों से मिलेजुले हैं। खेत-क्यार, कुआँ, बावड़ी, पीपल वृक्ष के मोटे तन की आड़, राजाजी के बाग जहाँ वे खेलते छिपते थे। आजकल गांवों में भी खेत-खलिहान वृक्षों की शीतल छाया नहीं है, खेतों में मिट्टी डालकर वहाँ फ्लैट और कंपनियाँ बनाते हैं लोग।

गर्मी की अवकाश में गांव की गलियों, बाग, रास्ता, नदी, सब कहीं बच्चों भी दिखाई देते हैं। गर्मी की दोपहर चंदर याद करता था। धूल के बगूले भरी दोपहरी में जब परिंदे भी पत्तों के बीच दुबके सहमे ऊँघ रहे

होते तब भुवन सबको बुलाकर जाएगी, आम, जामुन तोड़ने केलिए। शाम तक आम के पेडों पर उतरने लगती। एक बार भुवन ने लल्लु को पेड़ पर चढ़ाया और वह गिर गया, नानी से खूब गालियां मिली भुवन को।

हमारे मन कैसा होगा, प्रकृति ही वैसी होगी। भुवन की शादी के बाद वह ससुराल गयी। तब शीतलगढ़ी देखकर चंदर को उदास, वीरान लगा कि, लाल, सफ़ेद कमलों से भर गौरी का ताल वे आब और राजाजी के बाग की बौरी अमराई बहारहीन लगी। चंदर को ही नहीं जानता कि ये सब इसप्रकार कैसे होंगे।

लेखिका ने अपने उपन्यासों और कहानियों में बारात के दृश्य का वर्णन कई बार किया है, लेकिन हर एक अवसर में हमें विविधता पाई जाती है। यहाँ भुवन की शादी कुंवर अजयसिंह के भाई विजयसिंह के साथ होनेवाली है। अजयसिंह अपने इलाके का अमीर व्यक्ति थे। पंचायत भवन और स्कूल में उनको ठहरने की व्यवस्था है क्योंकि गांव में कोई होटल-लाड्ज नहीं है। बीडी-सिगरेट, हुक्का-पानी, ठंडाई शरबत आदि सबका संबंध था। रात का भोजन ट्रोली पर भरकर पंचायत भवन में पहुँचाया गया। कुछ लोग सुर स्मृतिदंश में लेखिका ने ग्राम्य जीवन के विभिन्न परिदृश्य व्यक्त किया है।

हर गांव के निवासियों की ज़िंदगी वहाँ की प्रकृति से अलग नहीं की जा सकती। 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में लेखिका ने बताया है कि चिरगांव, राजगिरि, सिरसा आदि ग्रामवासियाँ की ज़िंदगी बेतवा नदी के तेज़ प्रवाह के साथ ही आगे बढ़ती रहती है। उनकी खुशी और संताप की

हिस्सेदारी है बेतवा। इस उपन्यास में मीरा के मन से 'अतीत की स्मृतियों का उमड़ता तूफ़ान"[1] के रूप उर्वशी की कहानी हमारे सामने प्रकट होती है।

मैत्रेयीजी के शब्दों से राजगिरि गांव का यथार्थ रूप हमारे मन में आता है। कच्चे-पक्के घरों का छोटा-सा गांव। धूल-भरा रासता, चारों ओर कंकड़ पत्थर भरा पहाड़। हमें लगता है भोर का सूरज पहाड़ के पीछे से उदय होता है। रात के चंद्रमा का उद्‌भव स्थान ही वही था। क्रेशरों से टूटते पत्थरों के टुकड़े, बेतवा के चौड़े किनारे, बेतवा के लहर, बेतवा में पेड़-पौधों की छाया, इतना सुंदर दृश्य ज़रूर गांव का वैशिष्ट्य है।

हर एक गांव के प्रकृति दृश्य को अपनी विलक्षणता होती है। राजगिरि में बेतवा है तो चंदनपुर में पहूंज नदी बहती है। वहाँ मिट्‌टी के ऊँचे नीचे भरका-गहरी खाइयां रेतीले दूह देखकर डर लगते हैं। गांव के पूरा रास्ते के दोनों ओर सुनसान खेत हैं, यह रास्ता पहूँज तक पहुँचता है। पक्के सफ़ेद मकान खपरौल-छपे घरों के छोटे-छोटे समूह, वृक्ष की शाखाएँ आदि धूल से भरे हुए हैं। गांव में लड़कियों को शिक्षा मिलने का मौका बहुत कम ही मिलता है। इसलिए उसकी ओर होनेवाला शोषण भी ज़्यादा है। प्रस्तुत उपन्यास में मीरा पढ़ी लिखी थी, लेकिन उर्वशी को कोई औपचारिक शिक्षा नहीं मिली थी। ग्राम्य जीवन का यह दुरुस्तक आज भी है। घर का सबकुछ बेचकर अजीत को पढ़ाया गया था। ब्याज पर रुपए लेकर फीस भरी थी, पिताजी स्वयं भूखे पेट सोये और बोटे को अच्छा भोजन खिलाया। उर्वशी तो घर की चाकरी करती रही। ब्याह की बात आने

---

1. बेतवा बहती रही पृ. 9

पर उसको देने केलिए कुछ भी नहीं है, अजीत ने अपने कर्तव्य ये हाथ धोया है। ग्राम्य जीवन में लड़की की शादी हमेशा एक समस्या बन पड़ी है।

राजगिरि से सिरसा जाने केलिए बेतवा के ऊपर कोई पुल नहीं है, इसलिए तो नाव को आश्रय देना पड़ा। उर्वशी की बारात भी बेतवा नदी द्वारा नाँव पर सिरसा जा रही थी। बेतवा का पानी ज़्यादा ठंडा लगता है। कहते हैं उज्यान-परीछा के धारों के बीच एक पहाड़ी को काटकर निकलती हुई बेतवा अपने शीतल पानी में आग छिपाकर ही आगे बढ़ती है। उर्वशी ने नदी के जल छूकर प्रणाम किया आँखों से आँसु बढ़ने लगी, अनाथ उर्वशी अपनी बेतवा मैया को छोड़कर ससुराल जाती है, अम्मा छोड़कर जानेवाली सभी लड़कियाँ ज़रूर रोएँगी।

सिरसा भी रूपवती है, बारात पहुँचने पर उर्वशी को ऐसा लगा। शिवाजी के मंदिर, आम और जामुन के पेड़ों की बगीचा, खाली जोते हुए नरम मिट्टीवाले खेत बगीचे के बीच आम के पेड़ के तले एक चोटा-सा चबूतरा-सर्वदमन की माँ का थाना। सबसे पहले जिठानी उसे वहाँ ले गयी, पूजा करने केलिए, फिर गाना, नाच, उर्वशी ने भी एक मधुर गीत गाया।

गर्मी की रातों में गांववाले चारपाई पर घर के बाहर लेट रहे हैं। सिरसा में बिजली नहीं थी, बिजली लाने केलिए पारीछा बांध का निर्माण चल रहा था। उर्वशी को मीरा के पिता के भये से अचानक राजगिरि से जाना पड़ा आधी रात तक उदय के साथ वह सिरसा पहुँची। पूरा गांव अंधेरे में डूबा था। उमसभरी गर्मी के कारण दाऊ घर के बाहर लेट रहा था। अधजले अलाव मच्छरों से निजात पाने केलिए जगह-जगह अकेले ही

सुलग रहे थे। गांव के यह रात्रिकालीन दृश्य शहर में हम कहीं नहीं देख सकते।

'इदन्नमम' मैत्रेयीजी का बहुचर्चित उपन्यास है क्योंकि इसमें सोनपुरा, श्यामली, समथर, बिरगांव, ओरछा, गोपालपुरा आदि कई गांवों की जिंदगी का चित्रण है। श्यामली गांव के प्राकृतिक वर्णन से यह उपन्यास शुरु होता है। बेर की कंटीली झाड़ियां और गूलरर के पेड़ों से आच्छादित गली। सड़क के दोनों ओर लिपि-दीवारवाले घरौंदों की खपरैल बीच में बने पक्के अटारों की झिलमिलाती सफ़ेदी दिखाई पड़ी।

श्यामली में जाति-पांति का भेद-भाव बहुत थोडे ही दिखाई देता है। यहाँ बसोर जाति के मिठु ने बजन शुरु किया, लेकिन सोनपुरा में पहले भजन पंडित-पुजारी से ही शुरु होता है। श्यामली में अवर्ण सवर्ण सब एक है। गाँव के ब्याह-कारज तक में चमार टोला की पंगत सबसे पहले बिठाएँगे। फिर लोधी-कुर्मी बैठ जाते हैं। यादव, छात्री और साथ साथ पुजारी महाराज भी बैठें।

रतन यादव के आदमियों के डर से मंदा और बऊ को समथर से ओरछा के घने जंगल में जाना पड़ा। जब वे वहाँ पहुँचे तब सूरज ढ़ल रहा था। घने वनों में सुनहरी किरणों की ताल चमक करधई और खैर की फुनगियां को रँग रही है। आसपास पलाश, सेमल और कदंब के फूलों का भरमार है। बबूल और सागौन की छतनार छाया में अंधेरा ही छा गया। चारों ओर कंटीली झाड़ियां। आसपास फैले एकांत में जंगली पंछियों की कर्णभेदी चिचियाहट भय उत्पन्न करनेवाली है। एक वनप्रदेश का मनोहर

चित्रण, आज वन कहाँ? वन में वृक्ष-झाड़ियाँ, पंछियां कहाँ? सब कहीं मानव का अधिकार है।

सोनपुरा के सबसे भयानक बरसात के मौसम का चित्रण अत्यंत मार्मिक ढंग से लेखिका ने किया है। क्रेशर पर बरसात बेकारी भरी और हानिकारक। व्यापार खत्म हुई। मज़दूरों की स्थिति भयानक थी भूख, गरीबी, मृत्यु। पूरी रात टपरियों से पानी उलीचते रहे। सब कहीं जल ही जल पहचान भी नहीं सकते किधर खेत-तालाब। जल जीवन है - साथ-साथ जल मृत्यु भीहै। इसप्रकार गर्मी और वर्षा गांववालों का प्राण भी लेते हैं।

'अगनपाखी' भुवनमोहिनी की एतराज की कहानी है। शीतलगढ़वाली अनाथ जुझारू लड़की थी भुवन जो रिश्ते में चंदर की मौसी थी। चंदर की यादों से हम शीतलगढ़ी का असली स्वरूप समझ सकते हैं। बऊआसागर से लगभग चालीस मील दूर का एक खूबसूरत गांव है यह। डेढ़ मील तक कच्चा रास्ता। शीतलगढ़ी के रास्ता की शुरुआत में एक बड़ा कस्बा मौंठ था। मोंठ में बिसत, हलवा और बजाज की दूकारें थी।

शीतलगढ़ी का रास्ता झाड़ियों से भरा पड़ा था। झाड़ियां आपस में भिड़ी हुई है इसलिए बैल बहुत परेशान होगा। झाड़ियां गाड़ी के बैलों और यात्रियों को एक साथ चुनौती देती थी।

शीतलगाढ़ी में बस उतरकर घर की ओर चलता था चंदरा उसने रास्ते में गांव के कम्हार को देखा जो गधे पर बैठकर सवार कर रहा था। चंदर को देखकर उसने नीचे उतरकर आदर प्रकट किया क्योंकि चंदर उच्चजातिवाला था। फिर उसने भुवन की सहेली बेला को देखा। औरतों को

अपने बच्चों की धूपताप अपनी धूपताप लगती है। बेला के सिर पर डलिया में बकरी के बच्चे हैं, बच्चों पर छाता तना है। ऐसा एक दृश्य सिर्फ गांव में ही दिखाई देता है। आजकल की माताओं अपने बच्चों को छाता लगाने का वक्त नहीं, फिर टकरी की बात कहने की बात क्या?

भुवन का ससुराल विराटा में था। बेतवा के किनारे जंगल के बीच एक सुंदर गांव। बेतवा की चौड़ाई यहाँ कुछ ज़्यादा दीख पड़ी है। चारों ओर ऊँचे पहाड़ और घनों जंगल। बेतवा के किनारे दुर्गा का पुराना मंदिर था। दूसरे गांवों की तुलना विराटा एक अप्सरा जैसी थी।

'चाक' उपन्यास के केंद्र में अतरपुर गांव है। यह तो उतना बड़ा गांव नहीं, कुल आबादी सिर्फ एक हज़ार। गांव की उत्तरी छोर पर रेत से भरी विशाल ऊसर भूमि दिखाई पड़ती है। खेतों के बीच करबन नदी बहती है। नदी के अलावा एक बड़ी पोखर है, बरसात में वह समुद्र का रूप धारण करती है। गर्मी में पानी बहुत कम होगी। पानी में बुगुला, सारस, बतख आदि पक्षी और कीचड़ में भैंसें, सुअर आदि जानवरें मिलजुलकर रहते हैं। पानी और कीचड़ के शीतल सतह के नीचे जहरीलेजंतु भी हैं जिनके विष के कारण गाय-भैंसे, बकरी, बैल आदि मर जाते हैं।

हर बार खेतों में अच्छी पैदावर होती है। सरसों, अलसी, मटर, चना और अरहर के पीले, गुलाबी, बैंगनी और चितकबेर फूलों के अलावा गेंदे का फूल की खेती कर रहे हैं अतरपुर के किसान। गांव में कपड़ा और मिट्टी के क्षेत्र के सिवा सबकुछ विद्यमान हैं।

गांव में पाँचवीं कक्षा तक पढ़ाने केलिए पाठशाला है, लेकिन निगरानी के अभाव में सच रूप से नहीं चलता। मास्टर कभी आते हैं, कभी नहीं आते हैं। पाठशाला केलिए एक पक्की इमारत भी नहीं है। गांव के दूसरे सरकारी अफ़सरों की स्थिति भी मास्टर से भिन्न नहीं था। ग्रामसेवक, पंचायत सेक्रेटरी, पटवारी आदि पद केलिए अफ़सरों की नियुक्ति अतरपुर में है, लेकिन कोई नहीं आएगा वहाँ। बि.ड़ि.ओ कोई खास अवसर पर आएँ और ए.डी.ओ टी.ए. बिल के मोह में कभी आएगा। मिड़वाइफ़ और दाइयाँ तीन-चार महीने में कभी एक बार।

गांव में विभिन्न जातिवाले लोग हैं ब्राह्मण, बनिया, जाट जैसी ऊँची कौमें और तेली, कुम्हार, गड़रिया, खटीक, चमार जैसी छोटी जातियां।

गांव में पढ़े-लिखे लोगों की संख्या बहुत थोड़े ही है। रंजीत अग्रीकल्चर में एम.एस.सी ले लिया था। भँवर बी.ए. डिग्री हासिल हुए थे। कुंवरलाल चमार का छोटा भाई कलक्टर है।

गाँव की ज़्यादातर नारियां अनपढ़ थं, जो पढ़ी-लिखी थी घर के काम और परिवार संभालने के बीच वे अपनी विद्या भूल चुकी है। सारंग कन्या गुरुकुल में ग्यारवीं कक्ष तक पढ़ी थी।

गांव के अक्सर तमाम घरों में गाय, बैल, भैंस आदि का पालन ज़रूर होते हैं। ये जानवर घर के सदस्य जैसे होंगे। सारंग की धैरी गाय का प्रथम नामक बढड़ा मर गया था, किसीने विष देकर उसे मारा। उसका बिछोह सारंग के बेटे चंदन की आँखें से बहता जा रहा है। रंजीत को प्रथम

को लेकर कई सपने थे - उसके द्वारा खेतों की उपज दूनी कर देगा। धौरी गाय की आँखें देखने की ताकत सारंग को नहीं मिली। पशुओं से इतना प्यार शहर में कभी नहीं देख सकते। उनकी राय में पशु-केवल मांस और दूध देनेवाला जानपर है।

'कस्तूरी कुंडल बसे' मैत्रेयीजी और उनकी माँ कस्तूरीजी की अपनी कहानी है। उन्होंने जिस वातावरण में पनपा वह उनेक दूसरे कथा - साहित्य में भिन्न-भिन्न हिस्से में दिखाई पड़ते हैं। कस्तूरी के गांव में नई ब्याही दुलहन चमकीले रथ में बैठकर अपना गांव छोड़कर ससुराल जाती है, उसका चेहरा घूँघट के अंधेरे के अंधेरे में है, हवा, धूप और रोश्नी निषिद्ध कस्तूरी की मुक्त आत्मा यह गुलामी स्वीकार करने में विद्रोह प्रकट करती है।

मैत्रेयी के स्कूल जाने की पगड़ंड़ी के दोनों ओर खेत है, ऊसर भूमि है, तीन मील पैदल चलना है स्कूल पहुँचने केलिए। स्कूल जानेवाले बच्चों में लड़के हैं, लड़की केवल वही है। रास्ते में आम के पेड़ हैं। पेड़ की नीचे बैठकर किताबों में छपे बच्चो के तस्वीर देखते थे।

सिर्कुरा गांव में है मैत्रेयी का पैतृक घर। जन्म, शादी, मृत्यु गांव के सामूहिक मामले होते हैं, यहाँ कोई बात किसीसे गोपनीय नहीं रह सकते, बात तूफ़ान की तरह गाँव के हर एक कोने में पहुँचेगी। मैत्रेयी की शादी यहाँ तक चलना है। बारात आने केलिए रास्ता साफ़ करना है, गाँववाले यह अपनी बात समझकर आपस में चर्चाएँ किया करते थे। दिसंबर का महीना

था। बरसात ही बरसात, चबूतरे गीले हो गए घर के छप्पर पछाड़ गया। यह गाँव तो हर मौसम केलिए खुला मैदान है।

'कही ईसुरी फाग' ग्रामीण परिवेश में प्रचलित लोककथा के आधार पर लिखा गया उपन्यास है। इसकी नायिका रज्जो, प्रताप की पत्नी थी, अनुपम सुंदरी थी। सज्जी के साथ उसकी सास भी रहती थी। खपरैलवाले घर के आगे गाय-भैंस बँधी थी। नीम के पेड़ में एक तोता का पिंजड़ा लटका है। रज्जो की अनुमति के बिना फाग गायक ईसुरी ने फाग में उसका नाम इस्तेमाल किया, गांव-गांव में उसका नाम गूँज रहा है। रज्जो के बारे में गांव में कानाफूसी चल रही थी। फाग गायक ईसुरी और रजऊ की कहानी पर शोध करनेवाली ऋतु सरस्वती देवी के निर्देशानुसार ज्यौराह गयी, वहाँ रहती थी मीरासिंह। पान की खेती के बीच डगर पर चलते नहीं बनता था। धरती पत्तों से बनी हरियाली से भरा है। भूमि का यह समतल सघन और मुलायम था।

ग्राम्य-जीवन का समग्र-वीक्षण मैत्रेयीजी के कथा साहित्य में हर कहीं दिखाई पड़ते हैं। गाँववालों की जीवनशैली, गांव का वातावरण, गांव की विशेषता आदि कथा-गति के अनुकूल समर्थ रूप से लेखिका ने वर्णित किया था।

प्रकृतिशोषण और प्रतिरोध

आज की सबसे बड़ी समस्या है प्रकृति-शोषण। दिन-व-दिन पर्यावरण प्रदूषण बढ़ती हो जा रही है। मानव अपनी सुख-सुविधा केलिए

प्रकृति का नाश कर रहा है। मैत्रेयीजी कठोर शब्दो में अपने उपन्यासों द्वारा प्रकृति शोषण का विद्रोह कर रही हैं।

'बेतवा बहती रही' की आत्मा ही बेतवा नदी है। बेतवा कई गांवों की जीवनदायिनी नदी है। लेकिन उसमें पारीछा बांद बन रहा है। जब उदय के साथ उर्वशी सिरसा जाने केलिए बेतवा के किनारे खड़ी थी। "नदी पर धुंध छा गयी थी। बराठा घाट पर चौड़ा पाट है बेतवा का। पहले इतना नहीं था। जब से पारीछा बाँध बना है, यह और चौड़ा हो उठा है। नदी में पडे पत्थर तरह-तरह के आकारों के हैं। दूर से लगता है, जैसे पत्थरों की फसाल उगी हो नदी के बीच।"[1]

भारत एक विकसनोन्मुख देश है। हमारा देश हर दिन प्रगति की ओर जा रहा है। विकास के नाम पर यहाँ चार कतार सड़कें, सौ मंजिलोंवाले फ्लैट, सैबर सिटी, फ्लाईओवर, क्रैशर, बड़े-बडे कारखाने, नदी ऊपर बाँध आदि का निर्माण तेजी से चल रहा है। इन सुख-सुविधाओं की वृद्धि केलिए प्रकृति का शोषण ज़रूर हो रहा है। वन, पहाड़ जलस्रोत, वायुमंडल, धरती आदि प्रकृति के वरदान को जड़ से उखाड़कर ही मानव विकास की ओर जा रहे हैं। इस प्रकार आनेवाली पीढ़ी केलिए हमारा धरोहार तो औहत और मारी होगी।

उपर्युक्त उपन्यास की तरह 'इदन्नमम' में परीछा थर्मल प्लांट की योजना से उत्पन्न समस्याओं पर लेखिका ने प्रकाश डाला। बेतवा के ऊपर

---

1. बेतावा बहती रही पृ. 10

पारीछा धर्मल प्लांट की योजना के विद्रोह करनेवाले पारीछा गांव के प्रधान टीकमसिंह और वहां के गांववासियों की कहानी कायलेवाले महाराज ने मंदा को सुनाया। सरकार ने घोषित कर दिया कि पारीछा थर्मल प्लांट बुंदेलखंड के विकास की अपूर्व घड़ी है। उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश के सैकड़ों गांवों को बिजली मिलेगी, सिंचाई की व्यवस्था उपलब्ध होगी और ट्रैक्टरों व मशीनों द्वारा खेती की वृद्धि हो जाएगी। प्लांट बनाने केलिए साधन लाने केलिए खेत से होकर सड़कें बनाना चाहिए। वहाँ के निवासियों को अपनी भूमि नष्ट हो जाएगी। उनका समझ में नहीं आया कि अपनी ज़मीन और खेत छोड़कर मुट्ठी भर नोट लेकर वे कहाँ जाए? कैसे जिएँ? उनकी शिकायत किससे करें? कौन सुनेगा यह गंवारू आवाज़। प्लांट का निर्माण आगे बढ़ने लगा। अचानक पारीछा के प्रधान टीकमसिंह ने सरकार के विरुद्ध केस दायरे कर स्टे ओर्डर ले लिया। सरकार नागरिकों से बड़ी होती है। लेकिन केस हारे गए। टीमकसिंह और पारीछा निवासियों पीछे न मुड़े। दिन में निर्माण केलिए लाई सारी सामग्रियां रातों-रात नदी में पटकवा दी। गिरफ्तारियां हुई। कुर्की, नीलाम पर बात आ गयी, अपनी धरती केलिए वे आत्मबलिदान केलिए तैयार हो उठे। अंत में सरकार हार गई। केस का परिणाम टीकमसहिं के पक्ष मे आ गया। पारीछा थर्मल प्लांट का निर्माण आगे बढ़ने का निर्णय हुआ। परंतु टीकमसिंह के शर्तों पर चौगुनी कीमत पर ज़मीन बिकना चाहिए और आसपास के गांव के निवासियों को रोजगार मिलना होगा।

उपर्युक्त घटना सुनकर मंदा ने भी निर्णय लिया कि हमारे गांव के किसानों और खेतों के दुश्मन क्रैशरवाले ठेकेदारों को बाहर निकालना

चाहिए। इसकेलिए अथाह परिश्रम करना चाहिए। प्रकृति शोषण का एक खतरनाक रूप है पहाड़ विस्फोटन अथवा 'ब्लास्टिंग'। युग-युगों से रूपांतरित पहाड़ो को बंब रखकर तोड़ना, इससे वायु प्रदूषण, शब्द प्रदूषण और भू प्रदूषण भी हो रहे हैं। ब्लास्टिंग के समय निकले विषवायु भयानक आवाज़ प्रकृति के साथ साथ मनुष्यराशि केलिए खतरा उत्पन्न करते हैं। 'इदन्नमम' जो कुछ मैं अपर्ण कर रहा हूँ यह मेरा नहीं है मंत्र महाराज से स्वीकार कर मंदा अपने गांव और प्रकृति को व्यापारियों के हाथ से बचने केलिए दिन-रात कोशिश करने लगी।

गांव के किसानों को हार-खेत में किसी के यहाँ मेहनत-मज़दूरी मिल जाय तो आधा दिन प्लास्टिंग के चक्कर में निकल जाता है। बलदेव की मौत ब्लास्टिंग के कारण हुई और उसकी बहन परिभुआ पागल बन गयी। सोनपुरा के मूल-निवासी अपने खेत-जायदाद छोड़कर कहाँ जाएँगे? कैसे जिएँगे अपनी भूमि, नाम और मिट्टी भूलकर। सोनपुरावालों को अपनी हैसियत वापस लाने केलिए क्रेशरवालों को अवश्य भगाना चाहिए। इसपर विचार-विमर्श केलिए मंदा ने गोंती, डिकौली, खम झखनवारा, गोपालपुरा, नरसिंहगढ़ आदि सोनपुरा के पड़ोसी गांव के निवासियों और ग्रामप्रधान को बुलाये। मंदा ने उनको समझाया कि यह शोषण किसी भी कीमत पर अंत करना चाहिए "सदियों से खड़ा यह पुरखे-सा पहाड़ अपने नीचे बसे किसानों को ही खाने ला। गांव में सुख-शांति से दो वक्त की रोटी खाते हुए लोग तबाह कर डाले! चूल्हा की आग को बजरी डालकर बुढा दिया।"[1]

---

1. इदन्नमम पृ. 197

मंदा ने उनसे कहा कि आज नींव पड़ीं तो व्यापारियों की जडें उखाड़ नहीं सकते। दो सौ साल तक ब्लास्टिंगा करें तो भी पहाड़ नहीं खतम हो जाएगा। फिर तो आनेवाले दिनों में इन व्यापारियों की औलाद पहाड़ का नारा कर गांववालों के खून पिएँगी। इसलिए तो अभी से शुरु करना है, इनको बाहर भेजने का प्रयत्न!

"अल्मा कबूतरी' कबूतरा जनजातियों के जीवन संघर्ष की कथा है। कबूतरा की बस्ती मंसाराम के खेतों के एक हिस्से पर है। उनकी नौकरी तो अपराध, लूट, हत्या और शराब बनाकर बेचना है। शराब बनने केलिए वे खेत के फसल काटर भट्टियां खुदने लगे। महुआ और गड़ के खमीर ने फसलों को घेर लिया।

विकास के नाम पर प्रकृति का शोषण आज सर्वसाधारण सी बात बन गया। प्रकृति से होड़ देकर जीना मानव का अपना दिन-चर्या बना है। हर दिन बढ़ते हुए प्रकृति शोषण के साथ धरती की उम्र भी कम होती जा रही है। यह सच्चाई न मानकर मनुष्य तत्कालीन मांग की पूर्ति केलिए प्रकृति का नाश करते हैं। मैत्रेयीजी के कथा-साहित्य का एक उद्देश्य तो यह है कि शोषण के प्रति हमें सजग रहना अनिवार्य है। 'इदन्नमम' की मंदा शोषण के प्रति विद्रोह करती है और प्रतिरोध की भावना सब में जगा देती है।

ग्रामीण किसान और मज़दूर

गांव के निवासी आम-तौर से किसान व मज़दूर होते हैं। वे दिन-रात जी-तोड़ मेहनत करके गांव के विकास में भाग लेते हैं। अपने गांव-केंद्रित कथा साहित्य में मैत्रेयीजी ने किसान-व-मज़दूर के प्रति चल रहे

शोषण, उनके विकास केलिए चल रही परियोजनाओं पर खूब विचार किया है। हमारे समाज में कितने अधिक शोषण नारियों पर होते रहते हैं उससे ज़्यादा किसानों पर दिखाई पड़ते हैं। दिन व दिन खेती-बाड़ी का उपचय होता रहता है। इसलिए वैज्ञानिक तरीके से खेती करने केलिए बैंक से लॉन दिलवाकर उनकी मदद करने केलिए सरकार ने हर एक गाँव में ग्रामसेवकों की नियुक्ति की है।

'आक्षेप' नामक कहानी में किसान को मदद करनेवाले ग्रामसेवक विशालनाथ का चित्रण लेखिका ने किया है। विशालनाथ का तबादला ग्रामसेवका के रूप में रकमपुर में हुआ था। भोलेभाले ग्रामीणों के आदर भरे बर्ताव की चुंबकीय शक्ति उसे गांव की ओर खींचती रहती थी। उनकी मदद करने केलिए विशालनाथ दिन-रात मेहनत करने गा। पूरे दिन किसानों के साथ खेत निगराने केलिए घूम रहा था, देखा, फसल तो कीड़ा तो नहीं लगी? खाद समय पर डाली है कि नहीं, ऋण दिलवाले केलिए भाग-दौड़ किया और उनकी परेशानियों सरकार तक पहुँचाने केलिए भरसक प्रयत्न किया। नई तरीके से खेती करने का आयाम उनके सामने कोलकर रखा। इसप्रकार ग्रामीण किसानों की प्रगति केलिए ग्रामसेवकों का योगदान महत्वपूर्ण होगा।

अधिकांश किसान-वर्ग अनपढ़ है इसलिए उनका शोषण आसानी से कर सकते हैं। "सेंध' के गंगासिंह के शोषण की कहानी पढ़ें तो हमारे मन में प्रेमचंदजी के 'गोदान' का होरी आता है। अंत में होरी को अपनी खेती-बाड़ी छोड़कर मज़दूर बनाना पड़ा। अंत में होरी को अपनी खेती-

बाड़ी छोड़कर मज़दूर बनना पड़ा। गंगासिंह की दशा होरी से उतना भिन्न नहीं था। कलावति उसे मज़दूरों के बीच देखकर आश्चर्यचकित हो गयी। उसका खेत चकबंदी में चला गया, क्योंकि चकबंदी के अफ़सर को देने केलिए उसके पास पैसा नहीं था। अपने उर्वर खेत के बदले उसको बंजर, सफ़ेद रहे-भरे खेत, सोड़ामिली मिट्टी की धरती मिली थी। इसप्रकार सब कुछ खोकर वह जिंदगी चलाने केलिए शहर गय।

'स्मृतिदंश' में भुवन के नाना के खेत में चैत महीने की कटाई होनी थी। पक्की फसल खेत में पड़कर सूखी हो जाती थी। कटाई केलिए कोई किसान-मज़दूर नहीं मिला। विकास निगम का क्रशर-ठेकेदार के गुलाम बन गए। इधर गांव के खाते पीते किसानों ने पहले खाल की अपेक्षा कटाई की मज़दूरी दुगुनी कर दी तो उधर ठेकेदार के शराबी ठेरे में आधे-पौने मुफ्त बाँटने लगे। अतृप्त तृष्णा को बुझाने की ललक में एक भी मज़दूर खेतों की ओर नहीं झांकता था। सच्चे अर्थ में यहाँ ग्रामीण किसानों का शोषण ही चलता है।

'इदन्नमम" में मंदाकिनी अपने गांव सोनपुरा के किसानों की प्रगति केलिए खेती के विकास केलिए दिन-रात मेहनत करती रही। अपने गांव के किसानों की दयनीय अवस्था देखकर मंदाकिनी का मन विह्वल की दयनीय अवस्था देखकर मंदाकिनी का मन विह्वल हो उठा। सोनपुरा के पहाड़ों में क्रेशर आ गये। गांव के किसान लोगों को खेती छोड़कर क्रेशर में काम करना पड़ा। क्रेशर की हद्बंदी में आए किसान लोग अब मज़दूर ही नहीं रहे कंगाल और भिखारी बन गए। बाहरी आदमी सोनपुरा आकर

पैसा खोद रहे हैं। वे लोग पहाड़ों के चट्टानों से धन कमा रहे हैं। वास्तव में गांव के गरीब किसान लोग क्रेशर में काम क्योंकि उनके मुख की रोटी ठेकेदार छीन लेते हैं। खेती और किसान की अस्मिता भारत के गांव ये दिन दिन नष्ट होती जा रहा है।

सोनपुरा में रबी की फसल काट चुकी है। गांव में हर कहीं क्रेशर के धूल-धंगड़ा फैला हुआ है। इसलिए खलिहान गांव की पूर्वी दिशा में रखे हैं। बऊ ने अपना खलिहान नहीं रखा। प्रधानजी के खलिहान में दॉच तिलवाकर अपने तीन चार बोरी गेहूँ निकलवा दिया। तब उन्होंने सोचा हर वर्ष काम करनेवालों को इतना ही बाँट देंगे। अब उनके पास न खेत है, न अनाज।

किसानों की मदद केलिए, खेती की प्रगति केलिए सोनपुरा में एक ट्रैक्टर की आवश्यकता है। एक ट्रैक्टर खरीदने केलिए पैसा इकट्ठा करने के मकसद में मंदा पिरभुआ नाई के घरा पहुँचा। ब्लास्टिंग द्वारा अपने बड़े बेटे की मृत्यु हो जाने के बाद वह सिर्रिन-सी हो गयी। उन्होंने शादी के अवसर अपने बेटे को देने केलिए रखे दे मोहरें ट्रैक्टर केलिए मंदा को दिया। इसप्रकार अनपढ़ और चिथड़ों में लिपटी औरत किसी तरह लगी हैं इस यज्ञ की तैयारियों में। मदा को गौरव लगा अपने गांव की औरतों पर। इसप्रकार किसानों की रक्षा केलिए मंदा के नेतृत्व में एक ट्रैक्टर खरीदा।

गरीबी और अज्ञान किसानों के शोषण का प्रमुख कारण हैं। शोषण से बचने केलिए उनके नेतृत्व करने को मंदा जैसी उदार नेता की ज़रूरत है।

'अगनपाखी' में चंदर के नाना पहले फौज में थे, लेकिन अपने पिता के मरने पर उन्होंने इस्तीफ़ा दे दिया और गांव आकर एक किसान बन गया। किसान होने के साथ उनके शरीर में फौजी का बल था। बलशाली शरीर में हौसलेमंद मन था। गांव के मुखिया उसे परदेशी मानकर ज़मीन का कुछ भाग हड़प लिया। तब उन्होंने मुखिया से कहा धरती हमारी मांह है, किसानी हमारा बन है। कितनी कीमत देकर धरती या खेती की रक्षा करना हमारा कर्तव्य है। नाना एक असल किसान था, उनकी सोच यह थी कि गेहूँ, सरसों की फसल जवानों की टोली है और हल-फावड़ा के जगह राइफिल है।

शीतलगाढ़ी के मज़दूरों की अवस्था तो दयनीय थी। अपनी असलियत खोकर, अपनी धरती खोकर वे गुलाम की तरह काम कर रहे हैं। पहले वो किसान थे, लेकिन आज मज़दूर, पहनने केलए सिर्फ मैले कुचले कपड़े थे उनके पास। स्त्रियों के राजपाट फुटरियाँ और गठरियाँ मुर्गियों से भरा था।

मैत्रेयीजी के कथा साहित्य में एकमात्र पढ़ा-लिखा किसान 'चाक' का रंजीत है। उसने 'अग्रिकल्चर' में एम.एस.सी ले लिया था। उसका चचेरा भाई भँवर बी.ए. डिग्री हासिल किया हुआ है। उनके संबंध में किसानी करने और किसान कहलाने में गौरव का अनुभव करते हैं। लोगों का विचार है कि नौकरीपेशा लोग ही सभ्य हैं। कीचड़ में खड़े होकर खेती करनेवाला किसान असभ्य और मूर्ख है। रंजीत और भँवर ने यद दिख देने का निर्णय लिया कि गांव का पढ़ा-लिखा किसान ऊँचे से ऊँचे सरकार अफ़सर से ज़्यादा योग्य और सज्जन होता है।

लोग सोचते हैं किसानी सबसे कमतर काम है। पढ़े-लिखे होने पर खेती करना सबसे बड़ा पाप है। रंजीत के बाबा कहते थे गुदगुदी कुर्सी पर बैठकर काम करने से ज़्यादा ज्ञान खेत-बारी करने पर होना है। उन्होंने रंजीत को सलाह दिया कि इस परीक्षा की घड़ी में दिखाना चाहिए कि किताबों की ज्ञान खेती को रोश्न करने में कितनी मददगर है। नौकरी करने पर आदमी कागज़ के नोट और लोहे के सिक्के या सकता है, किसानों की तरह साक्षात् अन्नदेवता नहीं। किसानियत जैसे महत्व होनेवाले और कोई नौकरी इस दुनिया में नहीं है।

फसल कटाई गांव का उत्सव है। गांव की नारियों को कहीं एकत्रित होकर फसल का गीत गाया जाएगा। गीत के साथ खेती करने का अर्थात् भी करते हैं। अतरपुर में हरिप्यारी के ढ़ोलक के ताल में लैंगसिरी बीबी गीत गाती है।

एक बार रंजीत ने रासायनिक खाद की खतरे के बारे में गांववालों को समझा दिया। उन्होंने कहा कि बिजर-धरती का कटाव रोककर उसमें अनुकूल खाद-खुदाई डालें तो उपज और बढ़ेगी। कीटनाशकों का दुष्प्रभाव धरती को नहीं किसान को भी हानिकार है। किसानों का स्वास्थ्य खराब करने में इसका बड़ा हाथ है। बी.एच.सी, डी.डी.टी जैसे जहरीले खात से मनुष्य को कैंसर की रसौली जैसे बीमारी उत्पन्न होती है। खर-पतवार खत्म करने की दवा केंचुओं, गिजाई और बीर बहूटियों का नाश कर देती है। ये कीड़ें धरती के अनुकूल है। कीटनाशक दवाओं के असर के खेत के फसल खानेवाले जीवजंतु भी मर जाते हैं। इसलिए नये या वैज्ञानिक तरीके के

प्रयोग के साथ पुराने किसानों के अनुभव संपदा पर भी ध्यान देना चाहिए। कीटनाशक दवाओं के असर एक पीढ़ी के नहीं, आनेवाली कई पीढ़ियों को लगेगा, इसलिए खेती-बाड़ी की वृद्धि केलिए प्राकृतिक साधन अपनाना चाहिए।

'अगनपाखी' के फौजी नाना ने फसलों को सिपाही के टोली देखा था, यहाँ श्रीधर मास्टर ने खेत के सरसों-अलसी, मटर-चना और अरहर के पीले, गुलाबी बेंजनी फूल को अपने छात्र समझा।

ग्रामीण किसान - मज़दूर का धंधा आजकल समाज होता जा रहा है। आजकल भारत के गांव भूमंडलीकरण व बाज़ारीकरण के चंगुल में पड़कर खेती-बाड़ी भूल जाते हैं। ग्रामीण किसान की सामाजिक आर्थिक स्थिति भी बिगड़ी हुई है। इसलिए परंपरागत किसान-मज़दूर भी व्यापार में प्रवेश-कर पैसा कमाते हैं। लेखिका ने अपने कथा-साहित्य द्वारा ग्रामीण किसान व मज़दूर की यथार्थ ज़िंदगी की अभिव्यक्ति की है।

गांव की राजनीति

भारत की राजनीति आज-कल कई प्रकार से दूषित हो गयी है। जिसप्रकार विष पानी में धुल-मिल-जाता है उसीप्रकार पूँजीवाद, व्यक्तिवाद, आतंकवाद लूट-खसोट और आंतरिक कलह उसमें समाहित है। अब यहाँ राजनीति नहीं, राज-अनीति चल रही है। लेकिन कुछ महान-व्यक्तियों के हाथों में राजनीति आज भी सुरक्षित है। राजनीति के खासियत और कबाहत दोनों हम गांवों में देख सकते हैं। मैत्रेयीजी ने अपने कथा-साहित्य में राजनीति गांव के वातावरण में कितना हावी हो रहा है इस पर विचार किया है।

'बहलिये' नामक कहानी में लेखिका ने भोली की आत्महत्या का कारण शारीरिक शोषण कहा है। प्रधान के मित्र साहूकार के बेटे की वहशियायी दबोच से भोली के प्राण निकल गए। वह बेचारी गर्भवती बन गयी, आगे कोई रास्ता न देखकर उसने मिट्टी का तेल ऊपर डालकर आग लगाई। गिरजा ने थाने में रिपोर्ट कर दिया। पहले खोज हुई। लेकिन प्रधान की बैठक में चाय-पानी होता रहा-कारण भोली की मृत्यु बिना कारण के एक आत्महत्या बन गयी। केस बंद हो गया। गांव की राजनीति ऐसे थी कि अपराधी कोई सत्ताधारियों के रिश्तेदार हो तो केस गायब हो जाएगा। भोली की आत्महत्या और निरर्थक खोज-बीन पर निराश होकर, समाज की भलाई करने केलिए गिरजा प्रधान पद के चुनाव में खड़ी थी। परिवार ने उसे छड़ो दिया, समाज ने उसे भर्त्सना की। किसी ने घर के आंगन में पत्थर मारे, डरावनी मिली, टूटे कांच फेंक दिये उसकी ओर। वह घायल तो हुई, मगर-पराजित नहीं बनी। छल, कपट, भ्रष्टाचार, अपराध आदि की पाठशाला है आजकल की राजनीति।

'हवा बदल चुकी' में लेखिका ने आजकल की राजनीति एक हिस्सा और इस वातावरण में बेमेल व्यक्ति सुजानसिंह की कहानी बतायी है। आजकल की राजनीति में भ्रष्टाचार विमुक्त व्यक्तियों को बहुत कम ही दिखाई देता है। ऐसे एक आदमी थे सुजानठाकुर। वे गाँधीवादी के साथ साथ समाज-सुधारक भी थे। पाकिस्तान बनने पर हिंदू-मुस्लिम दंग शुरु हुआ, तब भारत के गरीब मुसलमानों को पाकिस्तान जाने से बचने केलिए उन्हें हिंदु नाम दिया था। स्वराज मिलें तो गाँव में स्कूल खुले, प्रौढ़-पाठशालाएँ लगीं, गांव तक झकिया हर दूरे दिन आने लगा और जन-

जागरण सभाएँ होने लगीं सबके पीछे सुजान सिंह थे। गांव के शराबखोरी ने सुजानजी पर बदनामी फैला दिया। गाँव की जाटव बस्ती में जबरदस्त डाका पड़ा, एक कन्या का अपहरण हुआ, इसके पीछे सुजानजी का नाम जोड़ा गया। जुलाहे की बेटा को छेड़ने के जघन्य जुर्म में सुजानसिंह को अपने भतीजे को सज़ा देना पड़ा। शराब विरोधी होने के कारण वे गांव की नई पीढ़ी के दुश्मन बन गए। चुनाव में सुजानजी अपने ही भतीजें के मुकाबले हार गये, चुनाव-पेटी की हेराफेरी हुई। तत्कालीन राजनीति की रीति ऐसी ही है। नए सत्ताधारियों ने गरीब किसानों के सहकारी ऋण झूठे अंगूठे और हस्ताक्षरों को डालकर अपना लिया और आपस में बाँट दिया। प्रधान और उनके अनुयायी लोगों के घर पक्के मकान में बदल गए।

बरसों बीतने पर भी राजनीति में कोई परिवर्तन नहीं आया। स्वराज मिलने से साठ वर्ष बीतने पर भी राजनीति में सुजानसिंह जैसे उदार व्यक्तियों को सीट नहीं मिलेगा। आजकल सत्ताधारी बनना है तो उसे डाकू, हत्यारे, आतंकवादी आदि अवश्य होना चाहिए।

राजनीति के क्षेत्र में नारी अधिकारी पुरुषवर्ग के खिलौना है, उनकी मर्जी के विरुद्ध वह हिल नहीं सकती। 'ललमनियाँ' कथा संग्रह की 'फैसला' कहानी में वसुमती गांव की प्रधानिन थी। लेकिन क्या फ़ायदा? उसको घर के बाहर जाने की अनुमति नहीं ती। उसके पति रनवीर वसुमती के बदले मामलों पर फैसला किया करता था। सिर्फ दस्तखत करने केलिए वसुमती की ज़रूरत है। गांव के विकास और औरतों की प्रगति केलिए कुछ करने का मन वसुमती को है, लेकिन रनवीर की आज्ञा का विरोध वह

कभी नहीं कर सकती। हरदेई पिता के छल के कारण अपने पति के पास नहीं जा सकती। बेचारे रामकिसुन ने घर के छत बनाने केलिए अपने बैल को बनीसिंह को बेच डाला। लेकिन बैल से अपनी मांग की पूर्ति के बाद बैल को वापस देकर पैसा लौटाने को बनीसिंह रामकिसुन के पास आया। इन दोनों मामलों पर विचार कर फैसला लेने केलिए वसुमती पंचायत नहीं गयी। दूसरा दिन गांव भर यह खबर फैली, इरदेई ने आत्महत्या की। गांव के सत्ताधारियों की प्रेरणा से पुलिस ने केस उलटा कर दिया-दहेजलोभी पति की पीड़ा से उसको आत्महत्या करनी पड़ी। गड़रिया की पत्नी ईसुरिया ने आवाज़ उठाकर इस का विरोध किया, लेकिन रनवीर ने उसे आगे बढ़ने से रोक लिया। प्रमुख के चुनाव में एक वोट की कमी पर रनवीर हार गया। वसुमती ने अपने वोट रनवीर को नहीं दिया था।

'गोमा हँसती है' कथा संग्रह की पहली कहानी है 'शतरंज के खिलाड़ी'। इसमें पीतमसिंह का नौकर कामता दलित अनपढ़ ग्रामीण आदमी था। गांव में चुनाव आते समय पीतमसिंह और नत्थूसिंह आपस में चर्चा कर रहे थे कि इस बार के सीट दलित आरक्षण है तो कामता को खड़ा कर दें। तब सत्ता उनके हाथों से कहीं नहीं जाएगा। ब्राह्मण, बनियों क्रुर्मी, क्षत्रियों जैसे समाज के उच्चवर्ग को आकर्षित करने केलिए राम, कृष्ण और शिवाजी की तस्वीरवाले कलैंडर निकला, हरिजनों के बीच बाँटने केलिए बुद्ध भगवान और बाबा अंबेड्कर का फोटो छपे कलैंडर निकाले। औरतों के वोट हासिल करने केलिए सोने की बिछुए और पायलें बाँटे। सस्ती धोती और ब्लाउज़ पीज़ें, साथ ही साथ शराब औरर खाना बाँटकर वोटरों को अपने पक्ष में लाने की योजना ज़ारी रही है। तत्कालीन

राजनीति का यथार्थ चित्रण यहाँ स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। बाज़ार में जलवा, रुतवा, दबदबा है। आदमी के कंधों पर राइफल, कमर में कारतूस की पेटी, छाती में जनेऊ की तरह गोलियों की माला, जेब में नोटों की गुत्थी चुनाव का दृश्य हमें डराता है।

लेखका ने 'प्रेम भाई आण्ड पार्टी' कहानी में गांववालों के प्रति होनेवाले सामाजिक और राजनीतिक शोषण का परिदृश्य दिखाया है। नरेंद्र और तारा के तीन बेटियों में पहली मुन्नी की शादी होनेवाली है। लड़केवालों ने दहेज के रूप में इक्यावन हज़ार मांगा। गांव के अनपढ़ लोग सत्ताधारियों को बहुत अधिक आदर करते हैं। इसलिए नरेंद्र के दोस्त चंदन ने भूतपूर्व मंत्री-सौदानसिंह को शादी में लाने का खूब प्रयत्न किया। मंत्री के आने केलिए अड्वांस के रूप में दस हज़ार और बेटी को देने केलिए रख जंजीर, मुंदरी, बाली आदि भी देना पड़ा। इसप्रकार की घटनाएँ राजनीतिक क्षेत्र का आम दृश्य है।

राजनीति में अधिकार प्राप्त करना एक छोटी सी बात नही। 'बेतवा बहती रही' में विधान सभा के चुनाव में मीरा के पिता बरजोरसिंह के हितैषी मित्र एम.एल.ए. का प्रभुपद पा गया। उसके बाद ग्राम-प्रधान का चुनाव आया। उसके मन में प्रधान बनने के बाद ब्लाक-प्रमुख बनने का लोभ-लालच था-गांव के सबसे ऊँचा पद। पत्नी की मृत्यु का दुःख उसने मन में फेंक दिया। बरजोरसिंह ने सुरा-सुंदरी के दुर्ग में प्रवेश किया। अपने ही घर में रंग-बिरंगी शराब के सुंदर बोतलें लाए गए। प्रधान पद पर बैठकर अपने विधायक मित्र की मदद से उसने अपने विरोधी दल के सदस्यों को

कत्ल केस में फँसाया। डाकुओं को साथ देकर पुलिस से उसकी रक्षा की। गांव भर बरजोरसिंह के विरोध में खूब सभाएँ हुई। पढ़े-लिखे लड़के उत्तेजनापूर्ण भाषण देकर जनता को जगाए। परंतु आगामी चुनाव में वे फिर प्रधान बन गए क्योंकि नेपथ्य में उसने राजनीति के कौशलपूर्ण केल खेला। लेखिका ने 'बेतवा बहती रही' द्वारा राजनीति का चकमाभरा चेहरा खोलकर दिखाया है।

'इदन्नमम' में राजनीतिक क्षेत्र में राजनीति में चल रहे दंगे, जलवा, मारकाट, अभियान आदि का यथार्थ चित्रण लेखिका ने किया है। अभिलाख मंदा के पिता महेंदर का दोस्त था। सोनपुरा के अस्पताल के उद्घान कर्म में हुई मारकाट में अभिलाख ने महेंदर को मार डाला। महेंदर आज की राजनीति का शिकार बन पड़ा। सरकार और विपक्षी दलों का गोरखधंधा मच्छर जाल सा फैला है। गांव भर। इस जाल से आदमी बच नहीं सकते। दोनों लोकसभा और विधान सभा में आपस में जीभ से लड़ते हैं। स्याही-कलम से अखबारों में और आचरण से आम आदमी के बीच महाभारत युद्ध करते हैं। ये राजनीतिक द्वन्द्व का शिकार आम आदमी होगा। इसका दुष्परिणाम वे ही भोग रहे हैं। राजनीति के प्रवर्तक अपनी स्वार्थपरता केलिए सोनपुरा में मारकाट निकलवाकर भारत भर हड़ताल चलाता है। लोकसभा में मकर के आँसू बहाते हैं। हमारे विनाश का ढ़ोल अखबारों में पीटते हैं। तुरंत एक जाँच-कमीशन आएगा और सत्ताधारियों के अनुकूल रिपोर्ट भी देगा।

महेंदर के नेतृत्व में जिस अस्पताल बनवाया थाष वहाँ उस मारकाट के बाद बरसों बाद भी डाक्टर नहीं आया। क्योंकि जिस सरकार

ने अस्पताल बनवाया था तब के बाद वह सत्ता में आयी ही नहीं। जिस विरोधी पार्टी ने अस्पताल के विरुद्ध दंगा कराया था वह उस अस्पताल को क्यों चलने देगी। यहाँ प्रजातंत्रीय राजकाज नहीं, एकाधिपत्य राजनीति चल रहा है।

सोनपुरा लौट आने पर समझ गया कि बऊ और मंदा के ज़मीन-जायदाद गोविंदसिंह द्वारा बिक गए थे। प्रधान ने उस छल की मदद की। अस्पताल में डाक्टर लाने केलिए मंदा ने महाराजा टीकमसिंह की मदद माँगी। तब उन्होंने कहा कि रुगण तो आदमी की आत्मा है उसके निवारण की दवा कहीं नहीं मिलेगी। रोगी हमारी व्यवस्था है। इसलिए हमारे क्षयग्रस्त समाज को सुधारने की यत्न करो। उन्होंने उसे समझाया, "राजकाज में तेज़ी लाना अपने हाथ की बात नहीं। वे लोग अपने तरीके से करते हैं हर काम। नौकरशाह और राजनेताओं के हाथ का खिलौना हो गया है हमारा जीवन। यहाँ प्रजातंत्र नहीं, शोषणतंत्र लागू है।"

क्रेशरवालों के विरुद्ध मंदा के नेतृत्व में सोनपुरा जो आंदोलन चल रहा है जो विभिन्न मुद्दों पर आ गया। पोस्ट ऑफिस से लेकर स्कूल, सड़क के आसपास के गांवों में दो-दो स्कूल हैं और सोनपुरा जैसे हर दराजी गांव एक स्कूल केलिए तरसते हैं। गाँव तक आने का साधन केवल बैलगाड़ी ही है - पूरे पच्चीस किलोमीटर तक सड़क नहीं। हफ्ते में दो दिन भी डाकिया नहीं आएगा। अखबार मिलता ही नहीं। चिकित्सा केलिए जो अस्पताल बनवाया - वहाँ डाक्टर नहीं। इतने शोषण और असुविधाओं के

---

1. इदन्नमम पृ. 198

बीच जिंदगी झेलनेवाले सोनपुरा वासियों के पास सत्ताधारियाँ सिर्फ वोट अपनाने केलिए आते हैं। आज मंदा के नेतृत्व में सोनपुरावालों ने राजनैतिक शोषण के प्रति वोट बहिष्कृत कर अपना एतराज प्रकट करने का निश्चय किया।

मंदा गोपालपुरा की ठकुराइन को लेकर गांव-गांव गयी पहाडियों पर फिरती रही, वहाँ के निवासियों को समझाया कि चुनाव में वोट देने केलिए नहीं जाना है। झबरा, झखनवारा, कुडरी, डुड़ी, हाजीपुर और गोपालपुरा में बड़ी-बड़ी बैठक बुलाई गई। वोट की राजनीति पर विश्लेषण करने केलिए। मंदा ने कहा नेता लोग उन्हें इनसान नहीं; केवल वोट समझते हैं; उनकी दृष्टि में गांववाले कागज़ पर ठुकी मोहर है। उन्होंने गांववालों के केवल अपनी मर्जी के अनुसार इस्तेमाल करनेवाली चीज़ समझा।

मंदा को महाराज की वाणी याद आयी। "राजनीति का आदमी डाकू, चोर ठग से भी ज़्यादा खतरनाक हो जाता है क्योंकि इनमें से भी वह किसी एक का पेशा नहीं अपनाता! समय-समय पर तीनों के हथकंडे इस्तेमाल करता है और अपने आपको सबके सामने ऐसा साध तोलकर परोसता है कि भूले से भी भ्रम न हो उसकी असलियत का।"[1]

महाराज के परामर्शी से मंदा राजनीतिक कुरीतियों के विरुद्ध सशक्त प्रतिक्रिया करती है। चुनाव आने पर राजनीतिक भ्रष्टाचार के भिन्न भिन्न मुद्दे हम देख सकते हैं। पैसे और सौदे देकर वोट पकड़ने की

---

1. इदन्नमम पृ. 355

कोशिश, रथ-यात्रा दिल्ली-ग्वालियर में जलवा, रामजन्म भूमि बाबरी मस्जिद-समस्या, हिंदु-मुस्लीम दंगे आदि तत्कालीन राजनैतिक व्यवस्था में कायम रहे ज्वलंत समस्याओं की चर्चा लेखिका ने 'इदन्नमम' में की है।

'चाक' में मैत्रेयीजी ने अतरपुर गांव के सामाजिक सांस्कृतिक, राजनीतिक परिप्रेक्ष्य अभिव्यक्त किया है। भारत-पाकिस्तान जाना पड़ा। नम्बरदार ने सारे मुसलमान के नाम बदलकर उनको हिंदू नाम दिया और पाकिस्तान जाने से उन्हें बचा लिया। छानबीन हो रहे गांव में, लेकिन वहाँ कोई मुसलमान देख नहीं सकते-सब हिंदू हैं।

डोरिया ने रेशम की हत्या की। तोता की बहू और रामजी बाम्हन गवाह थे। लेकिन दोनों न्यायालय में आने केलिए तैयार नहीं थे। राजनैतिक दबाव उतना ही था। प्रधान पद एम.एल.ए. के समान 'पवर' है गांव में, इसलिए उनकी मर्जी के अनुसार ही वहाँ की हवा ही बहती है। राजनीतिक अधिकार नहीं है तो मान-सम्मान नहीं मिलेगा।

राजनीति की हरियाली देखकर रंजीत के मन भी उर्वर बना। प्रधान-पद के चुनाव में वे खडे होना चाहते हैं। वोट, उम्मीदवार, चुनाव, प्रधान आदि शब्दों ने उनको मोहित किया है। धीरे-धीरे वे गांव के सत्ताधारी वर्ग के चंगुल में पड़ गये।

चुनाव के समय हर कहीं भाषण ही भाषण हैं। आज के सत्ताधारियां अपने द्वारा की गयी बातों पर भाषण देते समय विपक्षी दल अधिकार में आये तो हम वह करें, जो करें कहकर भाषण दिया। कठज़ोड़ से गांव तक सड़क बनाया। ए.एन.एम. सेंटर की मंजूरी करवाई। रंजीत के साथ बीज

भंडार की कोशिश में जुड़े हैं। फिर मास्टरजी से अपना अफ़सोस व्यक्त किया है कि चार लोग मित्र हो तो छः लोग शत्रु ही रहते हैं। मास्टरजी थानसिंह के तबादले करने पर वह रुकवाने केलिए कभी नहीं गये। क्योंकि तबादला तो नौकरी के शर्तों में आता है।

रंजीत चुनाव के प्रचार में सजीव रूप से निकला। चुनाव के पहले की 'रहरसल' चल रहा है। रंजीत ने अपनी उपलब्धी पर भाषण दिया था- खाद और बीज भंडार, स्कूल और डाकघर, पुल, सड़क, बम्बा नहरें उनकी अपनी अमानत है। अफ़सर लोग तो केवल इन्हें मुहैया कराने भर के ज़रिए मात्र हैं।

होली की रात में हरिय्यारी के घर को किसीने आग लगाया। हरियारीं, बेटी गुलकंदी और बिसुनदेवा जलकर मर गए। पुलिस आने पर प्रधान ने बयान दिया कि आदमी होलिका मइया का प्रसाद- जलता लूगरा लेकर भागते समय होरी की चितगारी गिरते ही आग लग गयी होगी। सच प्रधान जानते थे, यह भी जानते थे कि किसने आग लगायी? लेकिन राजनीति ऐसी थी, सच्चाई नेपथ्य में, झूठ सम्मुख। बाद में हरप्रसाद को पकड़ा गया, जिसने आग लगायी। वह चुनाव में खड़ा रहा था। चुनाव में जीतने केलिए उसने पचास हज़ार रुपए प्रधान को दिए थे। आजकल हाथ में रुपए तो किसी को, किसी हत्यारे, डाकू या आतंकवादी एम.एल.ए, या मंत्री बन सकते हैं।

'अक्षय त्रितिया' किसानों के संबंध में सबसे प्रमुख उत्सव है। लेकिन बैशाख के महीने में चुनाव की बहरा है। इसलिए खेतों पर आधे

किसान भी नहीं पहुँचे। किसानी से ज़्यादा मूल्य आजकल लोग राजनीति को देते हैं क्योंकि राजनीति से जो लाभ मिलता है वह किसानी से ज़्यादा है, अक्षयत्रितीया अगले साल में आता है, लेकिन चुनाव पाँच वर्ष के बाद ही आता होगा।

प्रधान और उनके दल ने रंजीत को अपने जाल में फँसा दिया, राजनीति के छल और भ्रष्टाचार का रास्ता उसने भी अपना लिया, इसलिए गांव के लोग उसे नफ़रत करते थे। इसीकारण रंजीत के स्थान पर और किसी को चुनाव में खड़ा होना चाहिए। श्रीधर मास्टर और भंवर ने सारंग को प्रेरण दी।

रंजीत ने सारंग से कहा चालीस हज़ार रुपए देने पर क्या नाम वापस ले सकते हो? प्रधान और उसके परिवार ही इसके पीछे थे। भारत के तत्कालीन राजनीतिक वातावरण तो यही था। पैसे से वोटर को अपनाते हैं, वोट पकड़ सकते हैं, उम्मीदवार के नाम वापस सकते हैं।

अतरपुर का चुनाव-अभियान। फत्तेसिंह की निगानी में वोटर-लिस्ट के बहन-बेटियाँ को घर जाकर जीप से लिवा लाते हैं। वापस जाते समय सबको एक-एक धोती और डलिया देकर विदा किया। मुफ्त रूप से एक ट्यूबवेल खोल दिया। फत्तेप्रधान तीन ट्राक्टर लाकर काश्तकारों को खेती जुत रहे हैं। संग में कीटनाशक दवा या खाद का इंतज़ाम भी था। अब सबको लगा फत्तेसिंह ब्राह्मण, जाट, गड़रिया, भी था। अब सबको लगा फत्तेसिंह ब्राह्मण, जाट, गड़रिया, नाई, तेली, कुम्हार, खटीक आदि सातों

जातियों का शुभचिंतक है। आजकल भारत में चलती राजनीति का यथार्थ स्वरूप 'चाक' के अतरपुर में दिखाई पड़ता है।

'अलमा कबूतरी' के कबूतरा वर्ग तो समाज से बहिष्कृत है। समाज के किसी भी क्षेत्र में वे नगण्य हैं लेकिन राजनीति में नहीं। उनको मतदान का अधिकार है। इसलिए चुनाव के समय राजनीति के आदमी वोट पकड़ने केलिए उनके पास आते हैं। मंसाराम को इस प्रकार महसूस हुआ कि उनके खेत में कबूतरा नहीं, वोटों की फसल लहलहा रही है।

हमारे मंत्री, एम.एल.ए जैसे प्रमुख व्यक्तियो के चारों ओर सुरक्षा दल के बड़े-ड़े फ़सर होंगे। लेकिन पुलिस-सेना पर नेताओं की आस्था खो गयी है, इसलिए पिछले चुनाव के अवसर पर बीस डाकुओं की गारद ही भेजी थी।

बेटासिंह गांव सबसे क्रूर डाकू था। उसने कहा कि समाजवादी पार्टी, बी.जे.पी, कांग्रेस आदि प्रमुख राजनीतिक दल से उनको न्योता मिला चुनाव में खड़े होने केलिए। सभी पार्टियों को ऐसा लोगों की तलाश है। क्योंकि चुनाव के समय बम्ब विस्फोटकर, लोगों को धमकी देकर, बूथ पकड़कर वे अपनी पार्टी को ज़रूर सत्ता में लाये। कबूतरा बस्ती से आदमियों को लाकर उनकी हत्या करें, फिर कहें वे ही डाकू थे।

रामसिंह कबूतरा भी बेटासिंह डाकू के नाम से मारे गए। बेटी अल्मा अनाथ हो गयी और सूरजभान के कब्जे में पड़ गयी। सूरजभान और उसके दोस्तों ने अल्मा का बलात्कार किया और उसकी निगरानी केलिए धीरज को नियुक्ति की। धीरज ने वहाँ से बचने केलिए अल्मा की मदद की,

इसी कारण वह प्रकृति-विरुद्ध शारीरिक शोषण का शिकार बन पड़ा। सूरजभान से बचकर अल्मा समाज कल्याण मंत्री श्रीराम शास्त्री के चंगुल में आ गयी जो पहले कुप्रसिद्ध डाकू था। अल्मा और शास्त्री का विवाह हुआ और उनके मरते ही अल्मा मंत्रि पद के उम्मीदवार भी बन गयी। सच्च में वह कुछ नहीं करती, सब राजनीति का खेल है, वह सिर्फ खिलौना है।

यथार्थ राजनीति आज़ादी के तुरंत बाद छूट हो गयी। आज के समय हमारे गांवों में होनेवाले जलवा, मारकाट, आतंकवाद आदि राजनीति का यथार्थ चेहरा है। छल, कपट से भरी-पूरी राजनीति का चित्रण लेखिका ने अपने कथा-साहित्य में किया है।

गांव की विभिन्न जातियां

गांव के विभिन्न जाति-धर्मवाले लोग मिल-जुलकर रहते हैं। जाति या बिरादरी का विवेचन अधिकांशतः उनके कुलाचार या कुल-कर्म द्वारा होता है। बड़े या छोटे कौम के लोग अपने अपने कर्त्तव्य निभाकर एकता के साथ गांव में जीते हैं। फिर भी वर्ण-विवेचन का जहरीला तूफ़ान गांव पर व्याप्त है।

'इदन्नमम' में श्यामली गांव में 'बसोर' नामक दलित वर्ग बड़े जात के कुएँ पर नहीं चलते। नीचे कीचड़-कांद में बसोरिनों गागरी टिकाए बैठी रहती है। चमारों ने गांव के बाहर कुआँ बनाया है।

गांव के लोगों में उच्च और निम्न जातियां हैं। यह उच्च नीचत्व उनकी जीवन-रीति, रीति-रिवाज़, आचार-विचार, सभ्यता-संस्कार, विश्वास-

अंधविश्वास सब कहीं विद्यमान है। लेकिन चुनाव आ जाएँ तो उच्च या नीच कोई भी हो सब वोटर है। किसान, महींदार, मज़दूर कोई भी हो या ब्राह्मण, बनिये, लोध, कुर्मी, यादव, चमार, कोरी, काछी, लाई, महेतर, कबूतरा किसी भी जाति के हो सबको मतदान निभाने का अधिकार है। पहाड़ी राउत-भीलों के पास भी चुनाव के (सिर्फ चुनाव के समय) समय वोट पूछकर सत्तामोहियां आते रहते हैं।

'चाक' में उतरपुर गांव का असली स्वरूप दिखाई पड़ता है। वहाँ आज़ादी के दस वर्ष बाद तक जाति-विधान अपने-अपने कर्म-विधान के अनुसार थी। चमार मरे पशु के त्वचा लेकर जूते बनाते थे। तेली कोल्हू चलाते थे। गड़रियों का काम भेंडों का पालना और दूध और न लेना। कुम्हार लोग घड़े, दोहनी और शकोरे देकर किसानो की मदद करते थे। नाइयां सेवा-टहल, हजामत, दौना-पत्तल और बुनावे का का संभालते थे। छोटे जोतवाले किसान साग-सब्जियों की खेती करते थे और बड़े किसान इनको गुड़, गेहूँ, जो, चना, मटर, सरसों, दालें और भैंसो का दूध-घी देते थे। इसप्रकार हर-एक जातिवाला अपना अपना काम करता रहता था।

गांव में नया मास्टर आया-श्रीधर प्रजापति-प्रजापति माने कुम्हार-छोटी कौम की जाति है। उन्होंने कहा "मैं कुम्हार का बेटा हूँ, जो चाक चलाकर बर्तन बनाता था, और आप जैसे किसानों के घर की पूर्ति करता था।"[1] जिसप्रकार कुम्हार घड़ा बनाता है उसप्रकार एक अध्यापक नई पीढ़ी को सक्षम बनाता है।

---

1. अल्मा कबूतरी पृ. 132

'अल्मा कबूतरी' के कबूतरी वंश के पूर्वज तो रानी-पद्मावती की संतान थी। जंगलो में विचरनेवाली चितौड़ से बागी हुई फौजी पीढ़ियाँ। रसद ले जानेवाले 'बंजारे' बने, नाचने-गानेवाले लोग 'कबूतरा' जाने जाते हैं। दवा-रुखरियाँ में दक्षत 'मोघिया' और घाटियों को लाँघने नाखने में माहिर लोग-नट। औजार बनानेवाले गडिया-लोहार, बंदर-भालुओं द्वारा जीविका चलानेवाले 'कलंदर' बन गए। आजकल भी इन गुलाम लोगों के पास इंसानी हक भी नहीं है।

अंग्रेज़ों के समय यह अधिनियम लागू हो गया "कबूतरा, मोघिया, कलंदर, साँसी, पारदी, मास्पट, औंदिया जैसी जातियों के लोगों के धंध अपराध माने जाते हैं, क्योंकि वे अपने रोजगार को कानूनी करार देते हैं और वारदातें करते हैं।"[1]

'कस्तूरी कुंडल बसै' लेखिका का आत्मपरक उपन्यास है। कस्तूरी पहले अनपढ़ थी, फिर वह स्वयं पढ़कर ग्रामसेविका बन गयी। हर दिन उनके घर में कई आदमी आए थे, मामलों के सुझाव केलिए। चरनसिंह बौहरे, रामचंद, रामजीलाल जाट, रामजीलाल ब्राह्मण, राधेश्याम बनिया आदि बडे कौम के लोग और झज्जू खटीक, रामस्वरूप कुम्हार, सूँसा तेली, ननुआँ नाई, सक्का, गड़रिया, चमार जैसे छोटी जाति के आदमी कस्तूरी के सामने आते रहते थे।

भारत धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र है। यहाँ हर एक धर्म में विश्वास करनेवालों को समान पद संविधान में कहा गया है।

---

1. अल्मा कबूतरी पृ. 132

लेकिन अपने कुल-कर्म के अनुसार गांवों में छोटी-बड़ी जाति में फरक है। लेखिका ने उत्तर भारत के गांवों में होती सभी छोटी-बड़ी जाति का उल्लेख अपने कथा-साहित्य में किया है।

ग्राम्य-जीवन की संस्कृति

हर एक गांव को अपनी-अपनी संस्कृति ज़रूर होती है। रीति-रिवाज़, आचार-विचार, पर्व-त्योहार आदि संस्कृति के अंतर्गत आते हैं। आज की संस्कृति में पुरानी और नई संस्कृति का मेल-जेल दिखाई पड़ता है। ज़माने बदलने के साथ-साथ संस्कृति में भी परिवर्तन आता है। मैत्रेयीजी ने कथा साहित्य में गांव की संस्कृति का चित्रण कथा-गति के अनुकूल रूप से किया है।

पशु-पालन ग्रामीण संस्कृति का अभिन्न हिस्सा है। गांव के हर एक घर में गाय-बैल, भैंस, बकरी आदि जीवों का पालन ज़रूर होता रहता है। इनसे उनका व्यवहार सहानुभूतिपूर्ण होता है।.... 'सहचर' कहानी के वंशी पालतू जानवरों के अलावा नेवलिया और नाग से भी दोस्ती रहती थी। "घर के बैल-भैंस, पड़ा-पड़िया, बच्छा-बछिया उन्हें पहचानते थे, कान खड़े करके उनसे हँसते-बोलते थे। उनकी पाली हुई नेवलिया घर में दिन-रात उछल-कूद मचाया करती। उनका कहना तो यह भी था कि धानवाले खेत की बामी में रहनेवाला नाग भी उनका मित्र है।"[1]

तत्कालीन समाज से भाई-चारे की संस्कृति दिन-व-दिन नष्ट होती जा रही है। भाई-चारे की भावना बढ़ाने केलिए गांव में हर वर्ष 'भाई दूज'

---

1. सहचर (चिह्नार) पृ. 27

मनाया जाता है। मैत्रेयीजी की 'सिस्टर' कहानी में भाई दूजा का एक अनोखा मुहूर्त का वर्णन किया गया है। सिस्टर डिसूज़ा अकेली अनब्याही औरत थी। वे सुरेश चंद के यहाँ उसको इंजक्शेन लेने केलिए हर दिन जाया करती थीं। धीरे-धीरे वे उस घर की सदस्या बन गयीं। 'भाई-दूज' के अवसर पर सुरेश चंद की पत्नी ने रोली, चवाल, बताशो, मिठाई सजाकर एक थाली उसको दी और सुरेश के माथे पर टीका लगाने को कहा। गांव में ऐसा एक रिवाज़ है कि भाई-दूज के दिन बहन भाई का टीका करती है। घरवालों ने सिस्टर को सुरेशचंद की बहन के रूप में स्वीकार किया है।

पर्व-त्योहार हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग है। इतिहास औ पुराण की कहानी के आधार पर भिन्न भिन्न नामों में भिन्न भिन्न त्योहार मनाये जाते हैं। 'छाँह' कहानी में मैत्रेयीजी ने 'दशहरा' का वर्णन किया है। 'दशहरा' पूरे भारत के हिंदु-लोग मनाते हैं। अलीगढ़ में बत्तसो ने देखा जगह-जगह रामलीला होती रहती है। काली और हनुमान की मूर्ति बनाकर लोगों की सवारी। ऊपरकोट का फूल-चौराहा, दूकान ही दूकानों सब लोग उमंग में थे। कितनी अधिक समस्याएँ अपनी ज़िंदगी में होने पर भी गांववाले ये सब भूलकर पर्व-त्योहार मनाते हैं।

'ललमनियाँ' एक नृत्यरूप है जो ब्याह के समय गांवों में चलती रहती है। ललमानियाँ नाचने केलिए विशेष रूप से अभ्यस्त नर्तकी अनिवार्य है। मैत्रेयीजी की कहानी 'ललमनियाँ' मोहरो नामक एक नर्तकी की कहानी है। नर्तकी पूरी साज-सज्जा के साथ बारात आने पर नृत्य और गाना शुरु करती है।

'बेतवा बहती रही' मैत्रेयी का एक ग्रामीण उपन्यास है जिसमें उर्वशी की वेपथु ज़िंदगी की कहानी कही गयी है। उर्वशी सर्वदमन की वधु बनकर सिरसा आयी। उसको एक बेटा हुआ - बच्चों का नामकरण संस्कार गांव केलिए बड़ा उत्सव है। सारे गांववाले और रिश्तेदार आमंत्रित थे। बुआ पालना लेकर आयी थी। दाऊ ने दावत का बड़ा आयोजन किया था। राजगिरि से उर्वशी के दादा और नाना यथा शक्ति 'पछ' भेजा था देवेश केलिए सोने के कड़े, जंजीर, कपड़े, उर्वशी केलिए साड़ी, कान के झुमके, रुपए, पैसे, आटा-चावल, घी-चीनी, दाल, सुप चलनी और भी तमाम चीज़ें। सारी रात नाच चलता रहा। गांवों में ऐसा ही है। परंतु शहर में एक घर की खुशी या नाखुशी उसकी अपनी होगी।

'इदन्नमम' में मैत्रेयीजी ने एक नहीं अनेक गाँवों की संस्कृति का वैशिष्ट्य व्यक्त किया है। रक्षाबंधन भाईचारे की भावना बढ़ाने का त्योहार है, राखी और भुँजरियों का त्योहार। बरसात में एक घड़े में गेहूँ का बीज बोयें और रक्षाबंधन के दिन निकाला जाता। जब मंदा और बऊ चीफ़ कक्का की बहन अनवरी बुआ के साथ थी तब अनवरी बुआ का छोटा बेटा शकील ने उसको राखी बंधवा दिया और नये कपड़े मिल गया। उस समय मंदा को सोनपुरा की याद आयी। वहाँ गांव के सब आदमी माता के मंदिर के पास लैन बनाकर बैठे होंगे। सब बेटियाँ भुंजरियां बाँट रही होंगी। इस अवसर पर गांव की बेटियाँ ससुराल से आयी होंगी।

श्यामली में कार्तिक नहान का त्योहार मनाया जाता है। मोदी लल्ला के यहाँ गांव की नारियां इकट्ठा होकर पूजा करती हैं, गनेस, तुलसी

और गौरा-पार्वती का भजन गाती है। सब अपनी चादर के छोर में गीले चावल बांधती है। गांव में एक विश्वास है कार्तिक नहाने में झूठ न बोलना चाहिए। सखियों बीच अपना अपना मन खोलना पड़ता है, नहीं तो पाप लगता है। जिसको पाप लगेगा उसके चावलों में अंकूर फूट आएंगे। सच्चाई का मूल्य कम होता जा रहा है आजकल। तदवसर इसप्रकार का त्योहार अवश्य होना चाहिए।

गांव में नारियां सोमवार व्रत लेती हैं, नहा-धोकर शिवजी की पूजा करती है, तुलसी पर जल चढ़ाती हैं। कहा जाता है कि पति की भलाई केलिए या योग्यपति को प्राप्त करने केलिए ही नारियां सोमवार व्रत लेती हैं।

फाग और होली रंगों का त्योहार है। धरती पर वसंत और जन-मानस में भरपूर उल्लास। मंदाकिनी के मन में सरसों का फूल उठा है। तितली, चिड़िया उड़ती रहती हैं। फाग और वसंत उसके मन में हैं। पूरनमासी को होली-पूजन और परमा के शोक दिवस। उस दिन रंग और गुलाल नहीं होगा। परमा के दिन अंग्रेज़ों ने झांसी को हथिया लिया था। उसके विद्रोह में झाँसी की रानी और प्रजा ने होली नहीं मनाई थी। तब से द्वितीया को फाग खेली जाती है। मृदंग, रामतूला, झांझ बजकर पूरे श्यालमली वासियाँ होली फाग मनाते हैं। त्योहार खुशी और एकता का प्रतीक है। हमारी संस्कृति में एकता लाने केलिए त्योहार का स्थान अनुपम है।

'झूलानट' मैत्रेयीजी का एक अलग उपन्यास है जिसमें भी गांव का जीवन वर्णित है। प्रस्तुत उपन्यास की प्रमुख घटना तो सुमेर और शीलो की शादी है। गांव का एक रिवाज़ ऐसा था कि सुमेर के भाई बालकिशन को

शीलो के गोद में बैठना है, क्योंकि भाभी और देवर के बीच माँ-बच्चे का रिश्ता जोड़ना अवश्य है।

आसमान के नक्षत्रों से संबंधित कई विश्वास गांवों में फैले हैं कवार-कार्तिक के दिनों में जेठ मास की गरमी लगती है नक्षत्रों की अशुभ वेला, देवी-देवता, कुल-पितरों के घर के लोग खतरे में हैं। बालकिशन भाग्य पर विश्वास करता था, वक्त की मार से उस समय वह बारहवीं में फेल हुआ।

अपनी ज़िंदगी में कोई शुभकार्य लाने केलिए, या ईश्वर से वरदान मिलने केलिए गांव की नारियां किसी न किसी नाम पर व्रत लेती हैं। सुमेर को शहर से वापस लाकर अपनी ओर आकर्षित करने केलिए चंपादास की सलाह से शीलो व्रत लेती है। पूस मास के दिन अंधियारे में ठंडे पानी से नहाकर तुलसी-पीपल दोस्ती देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना करने लगी।

बुंदेलखंडीय गांवों की संस्कृति में 'बछिया' एक ज़रूरी रिवाज़ है। स्त्री का दूसरा विवाह बछिया दान करके सादा रीति से संपन्न किया जाता है। यहाँ सुमेर की उपेक्षिता पत्नी शीलो अपने देवर बालकिशन की पत्नी बनकर जीने लगी। लेकिन वह बछिया केलिए तैयार नहीं थी। सास और पंचायत की प्रेरणा से शीलो अपने निर्णय से एक इंच न हिल उठी।

हर-एक गांव में अपनी-अपनी संस्कृति और रीति-रिवाज़ होती है।

'अगनपाखी' में मैत्रेयीजी ने प्रमुखतः दो गावों में घटित घटनाओं का वर्णन किया है। शीतलगादी और विराटा दोनों गावों प्रकृति-सौंदर्य से

अनुग्रहीत हैं। 'दशहरा' ग्रामीण संस्कृति से अलग नहीं किया जा सकता। दशहरे की छुट्टियों में गांववाले अपने मित्रों और रिश्तेदारों के घर आते-जाते हैं। चंदर के परिवार इन दिनों में बहुआसागर से शीतलगाढ़ी आते रहते थे। दशहरे में लोग पुस्तक, हथियार आदि देवी मैया के वरदान मिलने केलिए पूजा करते हैं। शीतलगढ़ी में फौजी नाना की याद में नानी उनके एकमात्र हथियार राइफिल की पूजा करती थी। नानी पकवान बनाती थी और भुवन घर के बाहर दीवार पर मिट्टी से 'सुआटा' का स्त्री-रूप बनती थी और फूल, मिठाई, चावल, हल्दी चढ़ाकर पूजा करती थी। सुआटा की कथा जो है वह शीतलगढ़ी की लड़कियों द्वारा गाई जानेवाली वीर-गाथा है। जब मुहम्मद तुग्लक ने मानसिंह राजा के राज्य पर हमला किया, तब जौहर में हर जाति की नारियां शामिल हैं, सुआटा का गीत उन्हीं वीरांगनाओं केलिए है। लड़कियाँ अपने और अपने वीर भाइयों का नाम इस गीत में जोड़ती हैं।

'रामायन' में हमने पढ़ा है, दशरथ के तीन रानियों को बच्चा नहीं था। इसलिए महाराजा ने पुत्रिष्टि यज्ञ किया और देवताओं से वरदान प्राप्त किया और चार पुत्र भी हुए। यहाँ भुवन के ससुराल में कुंवर अजयसिंह 'पुत्रेष्टि यज्ञ' चला रहा था, पुत्र लाभ केलिए। वहाँ अजयसिंह और विजयसिंह दोनों को पुत्र नहीं थे।

आजकल हमारे समाज में धार्मिक नेताओं से ज़्यादा मनुष्य देवी-देवताएँ हैं। लोग अंधों की तरह शांति, मोक्ष मिलने केलिए अमीर बनने केलिए उनके पीछे दौड़ते हैं। प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका ने ऐसी एक देवी

की कहानी बताई है। कुमुद बचपन से ही अति सुंदरी थी। उसकी सुरक्षा पर शंकित पिता ने कहा उनके घर में देवी मैया का अवतार हुआ, जो उसका अविश्वास करेगा, तीन दिन के अंदर उसका सर्वनाश होगा। कुमुद की एक मूर्ति बनाकर मंदिर में स्थापित कराई गई और उसे ही देवी पूजा केलिए समर्पित किया। विराटा के क्षेत्र में एक बार मुगलों का हमला हुआ और मंदिर और गांववासियों की रक्षा कुमुद पर निर्भर थी, लेकिन बेचारी कुमुद क्या करे? अंत में उसने निर्णय लिया कि बेतवा में जौहर करना बेहतर है। इसी घटना के बाद विराटा के मंदिर सतियों के तीर्थ स्थान के नाम से विख्यात है।

युवन का पति विजयसिंह मर गया। गांव की संस्कृति के अनुसार भुवन को सती बनना चाहिए। सारी तैयारियां हुई। सती-अनुष्ठान के पहले देवी मैया की पूजा केलिए मंदिर गयी भुवन कभी भी वापस नहीं आयी। इसलिए घरवालों ने भुवन का पुतला बनवाकर सुहागिन की तरह सजाकर विजय के पार्थिव शरीर के साथ चिता में समर्पित कर दिया। भुवन पुजारी के रहस्य दरवाज़े द्वारा राजेश और दामिनी की मदद से जंगल बच गयी। सती-प्रथा कानून से बंद किया गया था, लेकिन आज भी यह कुरीति उत्तर भारत के गावों में कहीं कहीं गुप्त रूप से ज़ारी रही है।

गांववालों के सोच में भी नृत्य और संगीत है। हर एक महीने में प्रकृति का रूप विभिन्न होता है। हर ऋतुएँ गांववालों के संबंध में उत्सव के मौके हैं। यहाँ अतरपुर में सावन के महीने में रात-रात भर गीत गाते जाते हैं। सावन में मेंढ़क, पपीहा, मोर आदि की आवाज़ भी सुन सकते हैं।

ख्याली दादू मंझारानी की औखा गाया करते थे, उनके चिकाड़े का स्वर गांव भर सुनते हैं। गजाधर बाबा के ओसारे में बैठकर सब लोग ख्यालीराम के चिकोड़े के ताल के अनुसार गीत गाते हैं।

गांव भर 'चट्टा चौथ' का त्योहार मना रहे हैं। श्रीधर मास्टर के नेतृत्व में स्कूल के बच्चे गांव के घर-घर जा रहे हैं। बच्चों की दो कतारें फूलों की दो लम्बी क्यारियों सी सजती चली आ रही है। सारंग के घर में चंदन नहीं है। फिर भी बच्चों का जुलूस सारंग के घर आए और राजेश और राममूर्ति ने गीत गाये। फिर सारंग हाथ में हल्दी-चावल-दूब सहित थाली सजाकर थानसिंह मास्टर का टीका दिया और गुरुदक्षिणा के साथ उनके पाँवों पर झुक गए।

'करवाचौथ' सुमंगलियों का त्योहार है। गांव की कुम्हारिनें सबेरे से बड़ी बड़ी डालियों में करवे धरकर डोल रही है घर-घर। गांव में जितनी सुहागिनों हैं उतने ही करवे, ढ़क्कन और दिवले। सारंग ब्याह की साड़ी पहनकर पूरी साज-धजकर करवा चौथ का व्रत लेती रहती थी। निर्जला व्रत ले रही है वह। चंद्रमा निकलने से पहले सारंग ने करवे में पानी भरा, दीपक जलाकर रंजीत की प्रतीक्षा में खड़ी रही। उस पानी में पति की छाया देखने के बाद ही व्रत समाप्त होगा। लेकिन सारंग ने रंजीत के बदले श्रीधर मास्टर को देखा उस बार।

करवा चौथ से दीवाली तक पूरे बारह दिन लगेंगे। अतरपुर गांववाले दीवाली मनाने की उमंग में है। घर और आंगन लीपा, चौका-चूल्हा सहेजा और पकवान बना रही थी घरवाली। अमावास की अंधेरी रात

में चंदन तो सुर्री धमक-पटाखे की मस्ती में है। रंजीत तो ताश खेलने की जल्दी में है। उन्होंने श्रीधर मास्टर को अपने त्योहार में भाग लेने के न्योता दिया।

माह मास का त्योहार है 'संक्रांति'। रात के किटकिटाते ठंड में अतरपुर के अमीर गरीब सब करबन नदी के पाट, पर एकत्र होते हैं। शीत हवाओं के मुहूर्त में पुण्य नहान ही 'संक्रांति' की विशेषता है। विश्वास था कि जो संक्रांति न नहाए अगले जन्म में गर्दभ योनि में जन्म लेंगे। पाट पर नहाई भीगी औरतें बेर, तिल, चावल, दाल और नया गुड़ तालियों में भरकर नारियां चरणसिंह बौहरे की प्रतीक्षा में बैठी हैं, वे ही पूजा करवाएँगे।

वसंत पंचमी वसंत ऋतु का त्योहार है। इस शुभ अवसर पर गांववाले सज-धजकर उन्मेष और उल्लास के साथ मेले में भाग लेते। वसंत में फसल की कटाई प्रेमी, गांव भर किसी की कमी न होगी। गांव के सब आदमी-औरत, बच्चे-बूढ़े वसंत-पंचमी की मेले में भाग लेते हैं।

होली का त्योहार खुशी फसल और रंग का त्योहार है। 'चाक' के सबसे दर्दनाक घटना, गुलकंदी, बिसुनदेवा और हरिप्यारी की हत्या इसी होली में हुई थी। होली के अवसर हर घर के आंगन में घर के आंगन में लड़कियाँ घरघुली बना रही हैं। पाँच रंगों पीला, लाल, हरा, नीला और सफ़ेद में उँगली डुबोकर धरती में 'U' की तरह की टिकुली बन जाएगी। ब्याहकर गांव के बाहर भेजी गयी लड़कियाँ होली के अवसर मायके आएगी। इसबार फसल के उत्सव के मुहूर्त में अतरपुर की धरती पर राख उड़ रही है होली और गुलकंदी के घर की राख।

'अक्षय त्रितीया' किसानों केलिए साल का पहला दिन है, गांव भर के किसान उमंग भरे तन-मन से प्रार्थना पूर्ण मन से यह त्योहार मनाते हैं। चार घड़ों में पानी भरकर रखे हैं और नाम भी देते हैं - आषाढ़, सावों, भादों और क्वार। खेत में डालने का बीज कुआँरी कन्या देती है। इसप्रकार किसानी से संबंधित सारे दिन गांववाले मनाते हैं।

"अल्मा कबूतरी' में कबूतरा जनजाति के जीवन-गाथा का याथार्थ चित्रण दिखाई पड़ता है। वे बहिष्कृत हैं, अपराधी हैं, फिर भी हिम्मतवार हैं। वे अपने आपको राणी पद्मिनी की संतान परंपरा मानते हैं। जब कदमबाई के पति जंगलिया की हत्या हुई तब दाहकर्म के अवसर सब बोले कि जंगलिया का मरण नहीं हुआ, वह कभी नहीं मरता। वे आवाज़ देकर नहीं रोते, बदले सामूहिक स्वर में प्रार्थनागीत गाते हैं। यही उनकी संस्कृति है।

कबूतरा वर्ग ज्ञान व शिक्षा से वंचित थे। इसलिए वे अंधविश्वास और अनाचार के शिकार हैं। जब राणा ने जमुनी और उसके पेटवाले बच्चे का लाश देखा तब से उसका मानसिक संतुलन छूट गया था। उन्होंने सोचा, जमुनी का प्रेत उस पर चढ़ा, मंत्र-तंत्र शुरु हुआ, गुनियां ने राणा के सिर पर झाडू मारी। धुआँ और खाँसी से वह काँपने लगा।

कबूतराओं के पूर्वजों की कहानी सिंहलद्वीप के राजा गंधर्वसेन की बेटी पद्मावति की कथा से जुड़ी हुई। सुलतान अलाउद्दीन के कब्जे से बचने केलिए उनको भागना पड़ा साथ में सखियां और कुछ सैनिक भी थे। आगे बढ़ने के बीच उनको हथियार चुराना पड़ा। हत्या करना पड़ा। इसप्रकार यश के बदले अपयश कमाया गया। भूख की तरह काम ही

मिटाना चाहिए, सैनिकों से रानियों को, बाँदियों को रक्कासाओं को गरभ रहे, बालक जन्मे। रानी पद्मिनी की संतान-जंगलों में विचरनेवाली चित्तौड़ से भागी हुई फैजी पीढ़ियाँ हैं।

'फाग' गांव की संस्कृति से जुड़ा है। मैत्रेयीजी के उपन्यास कही ईसुरी फाग' में फगवारा काकार ईसुरी और उनकी प्रेमिका रज्जो की प्रेम कहानी है। गांव में फगवारे तब आते हैं, जब वसंत ऋतु प्रकृति को रूपवती बनाती है। बाग-बगीचे, वन-जंगल फूलकर गमक उठते हैं, अलसी, मटर तक बैंगनी और गुलाबी पूलों से किसान के खेत शोभित हैं। 'फाग' में ईसुरी की प्रेमिका रजऊ का शारीरिक वर्णन है साथ ही साथ गांव का यथार्थ सौंदर्य भी है।

गांव के संस्कार में परस्त्री से मिलना व्यभिचार है। प्रताप की पत्नी रज्जो से ईसुरी को ऐसा कोई संबंध नहीं। वह ही नहीं जानता, अपने मन में जो भावना रज्जो के प्रति है।

फाग तो गांव की संस्कृति का अभिन्न अंग बन पड़ा था। फागुन के महीने में जगह-जगह से फाग में मुकाबला करने केलिए लोकगायक आते थे। गांव-गांव से लोग पूरी रात में वहाँ एकत्रित होने थे। फाग कहनेवाले करुण, वीर और हास्य रस को आधार बनकर फागें रचते थे और मंडलियाँ नवरसों को श्रोताओं के सामने जीवंत रूप से पेश किए थे। फाग एक अनोखा लोक नृत्य रूप है।

संस्कृति तो अलग-अलग गांवों में अलग-अलग गांवों में अलग-अलग होती है। पर्व-त्योहार, रीति-रिवाज़, आचार-विचार आदि संस्कृति

छोड़कर ग्रामवासियां जी नहीं सकते। हर एक महीने में नृत्य-वाद्य-गीत-नाट्य होते हैं गांव में। मैत्रेयीजी अपने कथा साहित्य में ग्रामीण संस्कृति का सच्चा स्पष्टीकरण किया है।

गांव में जागरण

ग्राम्य-जीवन में शोषण के साथ-साथ जागरण भी होता रहता है। शिक्षा के प्रचार-प्रसार के कारण लोग अपने प्रति होनेवाले शोषणों के प्रत जागृत हैं और शोषण के प्रतिरोध भी करने लगे। मैत्रेयीजी ने अपने कथा साहित्य में ग्राम्य-जीवन के जागरण के कारण शिक्षा का प्रचार, विशेषतः नारी-शिक्षा, भूमंडलीकरण, बाज़ारवाद आदि कहा है।

अपने गांव में अथवा अपने घर में औरतों की विडंबनाएँ देखकर उसके विरोध कुछ करने केलिए गिरजा ('बहेलिए') पढ़ने लगी। "शिक्षा और जागरूकता की बातें करने लगी, स्त्री-शोषण के विरुद्ध आवाज़ दे उठीं। रात में सभाएँ करतीं, रात्रि-पाठशाला में ग्रामीण बहनों को जोड़ लेतीं।"[1]

ग्राम्य जीवन में जागरण या विकास लाने केलिए सरकार ने उचित प्रबंध किये हैं। ग्रामीण किसान-महिलाओं की प्रगति केलिए हर-एक गांव में महिला विकास केंद्र की स्थापना हुई है। मैत्रेयीजी ने 'मन नाहिं दस बीस' में वनगांव के एक महिला विकास केंद्र के योगदान की अभिव्यक्ति की है। जिला नियोजन अधिकारी स्वराजवर्मा निरीक्षण केलिए आते समय वहाँ के अधिकारी श्रीमती कल्याणी देवी अपनी संस्था द्वार की गयी परियोजनाओं

---

1. बहेलिए पृ. 39

का स्पष्टीकरण किया है। वैज्ञानिक तरीके से खेती करने पर अनाज में वृद्धि हुई है। विकास केंद्र द्वारा की गयी 'कैश क्रप्स' किसान केलिए वरदान सिद्ध हुई हैं, सोयाबीन की खेती से आर्थिक फायदा मिल गया। गेहूँ, चने की उपज उन्नत खादों से कई गुनी बढ़ गई है। इसप्रकार गांव के आर्थिक स्तर उठाने में गांवों में जागरण लाने में महिला विकास केंद्र का हिस्सा ज़्यादा दिखाई पड़ता है।

'इदन्नमम' में मंदा और महाराज टीकमसिंह ने गांव में जागरण लाने केलिए खूब कोशिश की है। राजनीति के छल समझाकर गांववालों द्वारा चुनाव बहिष्कृत करने की प्रेरणा दी। खेती में विकास लाने केलिए ट्रैक्टर खरीदा। पहाड़ियों में जीवित राउत वर्गों की मदद की। गांव के अस्पताल में डाक्टर को लाने का परिश्रम किया और सफ़लता पाई।

'चाक' में अतरपुर गांव की कहानी है। सन् 1980-90 तक आते आते अतरपुर प्रगति के रास्ते में आ गया। चकरोड़ ने गांव को सड़क से जोड़ दिया, यातायात की सुविधाएँ बढ़ने पर विकास की गति भीतेज़ हुई। ट्यूबवेल के बहाने बिजली आयी। घर घर में बल्ब, पंका, रेड़ियो भी आया। प्रधान के घर में जल्दी ही टेलीविज़न आनेवाला है।

गांव में 'अमर उजाला' अखबार पढ़ने लगा। राजनीति ने लोगों पर उतना प्रभाव डाला कि चुनाव की खबर जानने केलिए सब उत्सुक बने। लेकिन अफ़सोस की बात यह है कि आज यह अखबार छपा ही नहीं।

गांव में विधवा नारी की ज़िंदगी विड़ंबनापर्ण है। 'कस्तूरी कुंडल बसै' में कस्तूरी विधवा बनने पर अपनी छोटी बच्ची लेकर घर के अंधकार

में नहीं रीह। वह पढ़ने केलिए इग्लास गयी। गांव की तमाम नारियों को अनपढ़ ही रहना पड़ा। इसलिए उनका शारीरिक और मानसिक शोषण आज भी ज़ारी है। स्त्री जागृत होने का समय अब ही बीत चुकी है।

ग्रामसेविका के पद पर कस्तूरी की पोस्टिंग खिल्ली में थी। वहाँ उन्होंने प्रौढ़ कक्षा शुरु की। वहाँ सभाएँ आरंभ की और विवाह के आडंबरों और दहेज के विरुद्ध उन्होंने नारियों को जागृत करने की कोशिश की है।

'कही ईसुरी फाग' में लेखिका ने समकालीन व्यवस्था का चित्रण अलग ढंग से किया। गांव आजकल पर्याटकों को आकर्षित करने में बहुत योगदान देता है। गांव के सौंदर्य, वहाँ की कला, परंपरा आदि को आस्वादन केलिए कई पर्यटक फ्रांस, इटली, अमरिका, इग्लैंड जैसे दूसरे देशों से आते रहते हैं। यहाँ 'फाग' देखने सुनने केलिए फ्रांस से एक पार्टी आयी थी। उनको ओच्छा में रजऊ और ईसुरी की प्रेम कहानी सुननी चाहिए। एक हद तक गांव के जागरण में 'टूरिस्म' मददगार है, फिर भी गांव के कलाकारों के शोषण में इसका हाथ है। 'टूरिस्म' के कारण आजकल परम्परागत् कला भी 'व्यापार' बन गयी।

ग्राम्य-जीवन एक हद तक शोषण के अधीन है। मुख्य कारण है ज्ञान की कमी। आजकल भिन्न भिन्न कारणों से गांव विकास की ओर जा रहा है। वहाँ जागरण भी होता है। अपने कथा साहित्य में लेखिका ने ग्राम्य-जीवन के विभिन्न पहलुओं को प्रस्तुत करते हुए आज वहाँ शोषण के खिलाफ़ जो सजगता दिखाई देती है उनका भी खुलासा किया है।

अध्याय-4

मैत्रेयीपुष्पा के कथा-साहित्य में दलित और जनजातियों की अस्मिता

मैत्रेयीपुष्पा के कथा-साहित्य में दलित और जनजातियों की अस्मिता

सभ्य समाज द्वारा उपेक्षित, शोषित, अछूत मानव समाज हमारे देश में आज भी हैं जिन्हें जलित, जनजाति, आदिवासी आदि विशेषणों से पुकारा जाता है। मैत्रेयी अपने उपन्यास और कहानियों में अंबेद्कर के इन प्रियजनों को, गाँधीजी के 'हरिजनों' को कभी भी नहीं भूली। इन दलितों और जनजातियों की जिस व्यथा कथा का यथातथ्य वर्णन मैत्रेयीजी ने अपने कथा साहित्य में किया, वह पाठकों को छूनेवाला है।

भारत के अक्सर तमाम राज्यों में दलित-जनजाति लोग रहते हैं विभिन्न नामों में जैसे चमार, कुम्हारा, खटीक, जाट भील, नाट, कबूतरे, नाई आदि। नाम जो भी हो हर एक विभाग शोषण का शिकार है। प्रारंभकाल से ही दलितों का शारीरिक शोषण एवं उनका अपमान हो रहा था। शिक्षा का असर उनको नहीं दिया जाता था। ज्ञान ओर शिक्षा की कमी उनके शोषण का प्रमुख कारण है। समाज को सिर्फ उनकी शारीरिक क्षमता चाहिए, मेहनत कराने केलिए, बुद्धि की आवश्यकता नहीं। इसलिए समाज उपेक्षा की दृष्टि से दलितों को देखता आ रहा है। गाँधीजी, अंबेदकर, अय्यनकाली जैसे महानुभावों ने शोषण के प्रति विद्रोह प्रकट करने का आह्वान दलित पीडितों को दिया था और उनके बीच शिक्षा के प्रचार केलिए खूब प्रयत्न भी किया था।

समकालीन परिवेश में भी दलितों और जनजातियों का शोषण बडे पैमने पर ही रही है। मैत्रेयी ने अपने उपन्यासों में 'इदन्नमम' 'चाक' 'अल्मा कबूतरी' 'कस्तूरी कुंड़ल बसै' और कई कहानियों द्वारा उपेक्षित, अल्पसंख्यक, शोषित दलित वर्गों और अनुभूतियों जनजातियों के जीवन-संघर्ष का चित्रण किया है। जीवन संघर्ष के साथ-साथ सामाजिक और राजनीतिक शोषण, दलित और जनजातियों की नारियों का शोषण उनकी संस्कृति, सबसे परे शोषण के प्रति उनका विद्रोह स्पष्ट करने में मैत्रेयीजी ने सफ़लता पाई है। उनका कथा साहित्य दलित जीवन का दर्पण है।

दलितों और जनजातियों का जीवन-संघर्ष

दलितों और जनजातियों की ज़िंदगी हर पल संघर्षरत है क्योंकि उनके जीवन और मान केलिए कोई सुरक्षा नहीं है। समाज की धारा में आने का ओर साधारण ज़िंदगी बिताने का हक उनके नहीं है।

'चिह्नार' कथा संग्रह की एक मर्मस्पर्शी कहानी है 'मन नाँहिं दस बीस'। इसका नायक स्वराज वर्मा जो जाति में जाटव था और जिला नियोजन अधिकारी था। जब वह बिरगांव में श्रीमती कल्याणदेवी द्वारा संचालित महिला विकास केन्द्र में अपने बचपन की सहेली चंदना जो सवर्ण लड़की थी, से मिला। उसके मन में चंदना के प्रति दोस्ती से ज़्यादा प्रणय था। स्वराज के मन में बचपन की यादों की बौछार होने लगी। उस समय हरिजन टोले की एक छोटी सी झोंपड़ी में स्वराज और माँ-बाप रहते थे। माँ चंदना के घर की नौकरानी थी। बचपन में स्वराज चंदना का सबसे बड़ा दोस्त था बडे होने पर यह दोस्ती प्यार में परिणित हो गयी। बापू ने स्वराज

को चेतावनी दी कि "बड़ी जाति की है सुराज वह। हम हरिजन चमार ठहरे बेटा! अपनी औकात में ही रहें तब ठीक।"[1] बडी कौम की लड़की को प्यार करने के कारण स्वराज को अपना गांव छोड़कर ग्वालियर जाना पड़ा। एक तरह का 'देश-निकाला है। दलित होने के कारण, सिर्फ उसी कारण शिक्षित होने पर भी स्वराज को चंदना के साथ जी नहीं सकता समाज से विद्रोह करने की ताकत उसमें नहीं थी। चार अक्षर पढ़ने पर भी मन के हीन संस्कार नहीं बदले। दया के पात्र में शिक्षा का दान भरता रहा। दुस्साहस करने का मतलब चंदना को शादी करने का साहस उसमें नहीं था। चंदना को दुःख की गहराई में डुबाकर वह मानसिक पीड़ा का मालिक बन गया।

'फैसला' कहानी 'ललमनियाँ' कहानी-संग्रह में संकलित है, जिसे बाद में 'वसुमती की चिट्टी' नामक टेलिफिल्म बनाया गया। वसुमती गांव की प्रधानित बन गयी। ईसुरिया ने सोचा था कि वसुमती गांव की नारियों की उन्नति केलिए ज़रूर साथ देगी, प्रधानिन होने पर भी पति रनवीर की आज्ञा की सीमा लांघने की हिम्मत उसमें नहीं थी। रामकिसुन एक गरीब दलित आदमी था। उसको न्याय दिलवाने केलिए ईसुरिया वसुमती के पास आयी। बेचारे रामकिसुन ने घर के छत बनाने केलिए अपने बैल को बनीसिंह को बेच डाला। लेकिन बैल से अपनी मांग की पूर्ति के बाद उसे वापस देकर पैसा लौटाने को बनीसिंह रामकिसनु के पास आया। बनीसिंह के इस अन्याय पर सही फैसला लेने केलिए वसुमती असमर्थ थी। रामकिसुन

---

1. मन नाँहि दस बीस (चिह्नार) पृ. 55

कुम्हार था, उसके पास अधिकार नहीं है। इसलिए उसको न्याय नहीं मिला, ईसुरिया भारी कदमों से अपने घर लौट गयी। आजकल न्याय उसीके पक्ष में है, जिसके पास अधिकार है और जाति का महत्व है।

अधिकांश दलितों को अशिक्षित और गरीब होने के कारण किसीके नौकर माने गुलाम बनकर ज़िंदगी बिताना पड़ता था। 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी का केंद्र पात्र कामता गांव के अधिकारी पीतमसिंह का नौकर था। अपने मालिक आज्ञा-पूरण ही उसका मकसद है। एक बार गांव में चुनाव आ रहा था। पीतमसिंह और नत्थुसिंह अपी पार्टी सीट के बारे में चर्चा कर रहे थे। पार्टी की सीट महिला-आरक्षण की है तो उस पर खडे होने केलिए निश्शब्द गऊ जैसी अनपढ़ अज्ञान महिला की आवश्यकता है। क्योंकि अधिकार उनके हाथों से न छूटना चाहिए। इसकेलिए दुरगी, कामता की पत्नी योग्य होगी। हरिजन सीट हो तो कामता खडे रहने केलिए सोचा गया। पतिमसिं की मर्जी के ऊपर कामता को दूसरी राय नहीं थी, नहीं होनी थी। "यह बैठा तो है तुम्हारे सामने हमारा हनुमान। इसीको खड़ा कर देते। हमारा कामता सतजुगी आदमी है। इन कलजुग में बिरथा ही, पैदा हो गया। भाई आज्ञाकारी इतना कि खूँटे पर बँधे धैरे बैल ओर इसमें सत्तीभर भेद नहीं। आदर्श जनसेवक सिद्ध होता। आदर्श इसलिए कि उसे तो ढ़ोरों से काम।"[1] दलितों के सिर मालिकों के पाँव के नीचे हैं। उनकी संघर्ष से भरी ज़िंदगी से वे मज़ा लूटते हैं।

---

1. शतरंज के खिलाड़ी (गोमा हँसती है) पृ. 19

अपनी जाति या बिरादरी के नाम पर और अपने परम्परागत काम पर दलित जातियों को अपमान झेलना पड़ा। 'चाक' उपन्यास के श्रीधर प्रजापति को जो जाति में कुम्हार था स्कूल मास्टर होने पर भई ज़िंदगी के हर एक मोड़ में घोर अपमान भोगना पड़ा। अतरपुर गांव के प्रधानजी ने व्यंग्य करते हुए श्रीधर से पूछा कि 'प्रजापति' किस जाति का है। व्यंग्य समझकर उसने उत्तर दिया कि किसानों के घर की पूर्ति केलिए चाक चलाकर बर्तन बताने वाला कुम्हार है। श्रीप्रसाद मास्टर के यहाँ नौकरी करके वह पढ़ता था, क्योंकि बचपन से उसकी माँ मर गयी थी। 'बेचारे ने गो-मूत धोकर पढ़ा हैं। यह शहदत उसे जहर जैसा लगता था। इसप्रकार अपने नीच कौम के कारण श्रीधर मास्टर को झेलनेवाले अपमान का हिसाब ही नहीं है।

गुलकंदी हरिप्यारी नाइन की बेटी थी, जिसका प्रणय भिखारी बिसुनदेवा के साथ था। बिसुनदेवा जाति में खटीक था। वह गांव के घर-घर जाकर राधा से संबन्धित तुकबंदी गाकर अफना रोज़ाना चलाता था। वह बचपन में ही घर से भागा था। उसके पिता गांव के साहूकार के घोडे की टाँगों की मालिश करते थे। साथ ही साथ उसके कर्जदार भी थे। सादूकार से क्रूर अवहेलना पाकर गंगाघाट से गांव आए साधुओं के साथ भाग गया। उसने मुंड़न, कनछेदन महूरत संस्कार खूब किए, पैसेकमाकर सादूकार के ऋण अदा कर दिये। लेगों से पाखंड़ी, ढ़ोंगी, कठोर दिलवाले, माँ-बाप का कपूत आदि कई विशेषण दिये थे, लेकिन वह न हिल उठा। एक दलित होने के कारण बिसुनदेवा को बचपन में और भविष्य में भी

शोषण भोगना पड़ा। जाति के नाम पर अंत में उसको अपना प्राण-बलि भी देना पड़ा, सिर्फ अपना नहीं पत्नी गुलकंदी और सास हरिप्यारी का भी।

'इदन्नमम' मंदा की कहानी है, गांव के किसानों की जीवनी है, साथ ही साथ क्रेशर में पत्थर तोड़नेवाले राऊत नामक भील जाति के भुख-मरी ज़िंदगी का सच्चा आविष्कार भी है। अपनी बिडंबनाजन्य जिंदगी के एक मोड़ में मंदा बऊ के साथ सोनपुरा लौट आयी थी। खेत-जायदादें नष्ट होने पर रामायण बांचकर रोज़ाना चलाने केलिए आस पास के गांवों जैसे गोपालपुरा, नरसिंहगढ़ आदि आती जाती थी। इसी यात्रा के बीच उसका ध्यान सोनपुरा के चारों ओर के ऊँचे पहाड़ों में रहकर क्रेशर में जी-तोड़ मेहनत करनेवाले भील जाति राऊतों पर पड़ा। राऊत जन जाति, वे टपरियों में रहते थे, ढ़ाई फुट ऊँचाई की दीवारें और गोबर से लिपी ढ़लवाँ छतें। टपरियों का द्वार इतना संकरा था कि लेट-बैठकर ही अंदर प्रवेश कर सके। अलमोनियम के दो-चार टूटे पूटे बर्तनों के अलावा उस घर में कुछ भी नहीं हैं। ये अलपसंख्यक शोषित जनजाति राऊतों की संघर्षमय ज़िंदगी समझकर मंदा भी चौकने लगी। मानव की प्राथमिक आवश्यकताओं से भी वंचित, क्रेशर-मालिकों द्वारा पीड़ित इस भील जाति की कथा अत्यंत मर्मभरी और दर्दभरी है।

ये राऊत-सहारिया जाति के लोग लिलतपुर, सागर, गुना, टीकमगढ़, छतरपुर आदि जिलों के वनप्रांतों से आकर इन पहाडों में बसे थे। यहाँ वे मोटा पत्थर तोड़ने का काम करते हैं, पहाड़ फोड़कर रोटी कमाते हैं। काम करने के बीच कोई खतरा हुआ तो क्रैशर-मालिक मुड़कर ही नहीं देखते,

इलाज केलिए पैसे नहीं देते। बीमारी के कारण एक दिन भी काम पर हाज़िर न होना चाहिए नहीं तो दंड मिलेगा उनको। एक बार रतिया के पति के गोड़े पर भारी बोल्डर गिर गया। क्रेशरवाले ने पट्टी करवाने को एक पैसा तक नहीं दिया। अज्ञान, असुविधा, कमार-तोड़के काम, अँधविश्वास, अनाचार आदमी की खेती है इन आदिवासियों की ज़िंदगी। धन, सफ़ाई, और पोषक भोजन की कमी के कारण कभी कभी राऊतों के बीच खतरनाक बीमारियाँ भी फैलने लगीं। एक बार बारात में एक जहरीले जंतु के मांस परोसने के कारण हैजा फैलने लगी।

राऊत महिलाओं को क्रैशर मालिकों के शारीरिक शोषण के शिकार भी बनना पड़ा। अपनी बेटी जैसी उम्रवाली अहल्या पर जगेसर काका को मोह हुआ और उसके शारीरिक शोषण करके उसका तपेदिक की रोगिणी बना दी।

राऊत भील की जात है। इनके पूर्वज वनों में लकड़ी काटने का काम करते थे वन-कटाई बढ़ने के कारण इनकी नौकरी भी कम होती गयी। जीविका चलाने केलिए और एक मार्ग इनको ढूँढ़ना पड़ा। इसप्रकार वे नरसिंहगढ़ और गोपालपुरा के बीच के पहाड़ी प्रदेशों में आकर गरीबी, बीमारी, भूख से पूर्ण संघर्षमय ज़िंदगी बिता रहे थे।

'अलमा कबूतरी' कबूतरा नामक अल्पसंख्यक जनजाति की जिजीविषा और जीवन संघर्ष, शोषण, उत्पीड़न और अंतहीन यातना की यथार्थ कहानी है। कबूतरा जनजाति की ज़िंदगी और समाज से उनकी टकराहट को दिखाकर मैत्रेयीजी हमारे सामने यह प्रश्न उठाती हैं कि क्या

वे गणतंत्र भारत की प्रजा नहीं है? लेखिका यह भी सोचने की प्रेरणा देती हैं कि हम किसी भी दलित या जनजाति को 'अपराधी' करार देने का क्या अधिकार है? कबूतरा जनजाति मुगलों और अंग्रेज़ों के ज़माने में तो 'अपराधी' मानी जाती थी और आज भी वैसा ही जारी रहती है। ये लोग सभ्य (कज्जा) समाज द्वारा शोषित और पीड़ित हैं। ये अपनी जीविका चलाने केलिए चोरी, डकैती, लूटमार करते हैं। इनके स्थायी निवास स्थान जेल या जंगल है। कबूतरियां कज्जा पुरुषों के हाथों की कठपुतली हैं। उनकेलिए मद और मदिरा देना कबूतरियों की ज़िंदगी का मकसद है। सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक शोषण के शिकार हैं कबूतरा लोग।

मड़ोरा खुर्द के कज्जा मंसाराम के पच्चास बीघे खेत के दो बीघे में कबूतरा जनजाति निवास करती है। रोज़ाना चलाने केलिए वे यूट-मार करते हैं, कज्जा समाज अपनी स्वार्थ पूर्ति केलिए उनसे हथियार बनाकर लुटाई और कत्ल कराते हैं। मंसा की प्रेरणा से जंगलिया लल्लूराजा के घर से हनुमान की सोने की मूर्ति लूट ली थी। सच में कबूतराओं को सजने सँवारने केलिए भी सोने की आवश्यकता नहीं, उनको सिर्फ रोटी चाहिए। जंगलिया हनुमान की मूर्ति लेकर कदमबाई के पास आये तो उसने कहा, यह सोना एक लोहे के समान है, इसे बेचकर एक हैंडपैप लगा देना चाहिए। उनको सोना -चाँदी, रुपया-धन नहीं चाहिए, बस ज़िंदगी बनी रहना ही काफ़ी है।

मंसा के मन में कदमबाई के प्रति मोह हुआ। कबूतरियों को अपना शरीर कभी कभी शाप होगा। मंसा ने जंगलिया की प्रतीक्षा में खेत

में खड़ी कदम का बलात्कार किया और साथ ही उस रात ही अपने आदमियों से जंगलिया मार डाला गया। मारा हुआ व्यक्ति 'कबूतरा' होने के कारण कोई खोज-बीन नहीं होगा। कदम ने मंसा के बच्चे को जन्म दिया। राणा के खून में कबूतरापन से ज़्यादा कज्जापन है। उसको पढ़ना पसंद है। लेकिन स्कूल में उसको बैठने केलिए बेंच और पीने केलिए पानी भी नहीं मिला, उसको क्रूर अवहेलना और अपमान भोगना पड़ा। अंत में पढ़ाई छोडनी पड़ी। अपनी परंपरा के अनसार राणा को भी लूट केलिए जाना पड़ा। कबूतराओं का विश्वास है कि शिकार नहीं करेगा तो शिकार हो जाएगा।

लूट-मार आदि अपराधों के अलावा कबूतरा लोग दारु बनाकर बिक्री करते थे। मड़ोराकुर्द में आकर रहते समय भी वे यह काम करते रहे थे। कज्जा लोग मद और मदिरा केलिए कबूतरा बस्ती में आते जाते थे। अन्न और आदमी का बड़ा संबंध है। अन्न मिलने केलिए वे लोग अपनी औरतों का शरीर और दारु बेचने को मज़बूर हो गये हैं। दारु बेचने केलिए उनके पास लैसेंस नहीं है। एक बार गोरामछिया से सरमन का बहनोई बाबू आया था ओर खबर दी, अबकी बार लैंससशुदा ठेकेदार कबूतरा बस्ती में एक कज्जे भी आने न देंगे। साथ ही साथ बस्ती में उनका हमला भी हो जाएगा। अचानक लैंससशुदा ठेकेदार आए। सब कहीं भगदड़ मच गयी। दूलन सरपट भागा, खुरदा बूढ़ा मुट्ठी बाँधकर दौड़ा। भजनी,सरमर, संतोले, रूपसिंह, हरदेव सब भाग रहे थे। मर्द खेतों द्वारा जंगलों में भाग गए। जमुनी और पेटवाला बच्चा खेतों में मारा गया। कई घायल हो गए।

भूरी कबूतरी और पति वीरसिंह अपनी परंपरा के विरुद्ध सोचने लगे। कज्जा के वस्त्र पहनकर उन्होंने झांसी जाकर नेहरुजी का भाषण सुना। एक बार भूरी का भाई डकैती में जेल गया। लेकिन वह उस समय वीरसिंह के साथ था। इसलिए वीरसिंह अर्जी लिखवाकर बेकसूर को बेकसूर साबित कराना चाहता था। वीरसिंह ने न्यायलय के विरुद्ध आवाज़ उठायी। पुलिस ने उसे मार डाला। भूरी ज़िंदगी में अकेली बन गयी, फिर भी वह अपनी हिम्मत न हारी। पति से प्यार मन में रखते हुए, उसकी इच्छा की पूर्ति केलिए भूरी ने अपने बेटे को पढ़ाना तय किया पैसा कमाने केलिए उसको अपना शरीर बेचना पड़ा। "जिस दिन रामसिंह ने बाप का लाल खून नीली स्याही में बदलकर अपने हक में चार आँक लिख लिए, समझँगी मुझमें राई भर कलंक नहीं। विद्यारतन के आगे देह का खजाना कुछ भी नहीं.....।"[1]

भूरी से प्रेरणा पाकर कदमबाई ने अपने बेटा राणा को पढ़ाने का निर्णय लिया। इसकेलिए वह दिन-रात काम करती रही। गाय-भैंसों का गोबर चोरी-चोरी बटोरकर सुखा लेती, क्योंकि बस्ती में ईंधन के रूप में सब कंडे का इस्तेमाल करते हैं। चतुराई से ज़िंदगी की गाड़ी चलाने केलिए उसने खूब परिश्रम किया। कबूतरा होने के कारण स्कूल की पीड़ा न सहकर कराहे हुए राणा को माँ ने सलाह दिया "पिटना-पीटना, मरना-मारना हमारी ज़िंदगी है। गुनियाँ, ओझा, मुखिया और पुलिस हमारे भगवान है। कज्जा लोग भाई-बाप और मालिक। भूख-प्यास हमारी गुंइया है। देह गर्मी

---

1. अल्मा कबूतरी पृ. 81

से जलने लगीा है, हम चोरी से तालाब में नहा लेते हैं। जाड़े में हड्डियाँ चटकने लगती हैं, जंगल में से ईंधन चुराकर देह सेक लेते हैं। सब लोग हमें माफ़ कर दें, बस इतना ही हम चाहते हैं।"[1] सच्चे अर्थ में यही है कबूतराओं की ज़िंदगी।

भूरी का बेटा रामसिंह पढ़े-लिखे होकर मास्टर बन गया, वैद्य बन गया। लेकिन वह अपने समाज केलिए कुछ नहीं कर सकता। क्योंकि उसको अपनी ज़िंदगी पुलिस को गिरवी रखनी पड़ी। उसको अपनी पत्नी और बच्चे की हत्या अपनी आँखों से देखनी पड़ी। बेटी अलमा की रक्षा केलिए वह अपने समाज के विरुद्ध पुलि का दलाल बनना पड़ा। फिर भी उसको बेटेसिंह नामक एक डाकू के नाम पर जीवत्याग करना पड़ा। अल्मा ज़िंदगी में अकेली बन गयी। पहले ही रामसिंह राणा को पढ़ाने केलिए गोरमछिया ले आया था। उसके मन में अल्मा के प्रति प्यार हुआ और वह गर्भवती भी बन गयी। जब राणा ने रामसिंह को पुलिस के दलाल समझा तब वह मडोराखुर्द की ओर भागा। रामसिंह की मृत्यु के बाद अल्मा को कई पुरुषों के बलात्कार का शिकार बनना पड़ा और उसके पेट का बच्चा भी मर गया।

इसप्रकार मैत्रेयीजी के उपन्यासों और कहानियों में दलित वर्गों के जीवन-संघर्ष के मार्मिक प्रसंग दिखाई पड़ते हैं। जिस तरह लेखिका ने ग्राम्य-जीवन पर ध्यान दिया उसी तरह वहाँ के दलितों और जनजातियों

---

1. अल्मा कबूतरी पृ. 99

संघर्ष पूर्ण जीवन पर भी प्रकाश डाला। 'कबूतरा' वर्ग की संघर्ष पूर्ण ज़िंदगी हमारे मन में अपराधबोध ज़रूर उत्पन्न करेगी।

दलित और जनजातियों का शोषण

दलित और जनजाति वर्ग के लोग अपनी ज़िंदगी में कई प्रकार के शोषण के शिकार बन रहे हैं। पहले से ही वे भूमि से वंचित हैं, फिर भोजन, वस्त्र, प्यार, शांतिपूर्ण, जिंदगी अच्छी नौकरी, सुख-सुविधाएँ जो दूसरे लोग खुशी से भोगते हैं, उनसे भी वंचित है। अपने को 'सभ्य' मानकर, 'सभ्यता' के नाम पर डींक हाँकनेवाले उच्चवर्ग दलितों और जनजातियों को अपने पैरों के नीचे दबाते हैं, पालतू जानवर जैसे वे जीते हैं। सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक, शैक्षिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, मानसिक, शारीरिक आदि कई तरह के शोषण भोगकर वे लोग हमारे देश में ज़िंदगी बिताते हैं। मैत्रेयीजी ने अपने उपन्यासों और कहानियों में दलित-शोषण एक प्रमुख समस्या के रूप में उभारा है। 'मन नाहिं दस बीस' के स्वराज वर्मा जिला नियोजन अधिकारी बनने पर ज़िंदगी में सफलता नहीं पायी। वह दलित होने के कारण उच्च जातिवाली चंदना से शादी नहीं कर सका। चंदना से प्यार करने के कारण उसको अपना गांव छोड़कर, घर और माता-पिताओं को छोड़कर एकांतवास अनुभव करना पड़ा।

'इदन्नमम' उपन्यास में लेखिका ने राऊत-भील-वर्गों पर क्रैशर मालिकों के शोषण का मार्मिक चित्रण किया है। वे पहले लकड़ी का काम करते थे। जंगल सरकारी हो गये तो नौकरी के साथ उनको वासस्थान भी नष्ट हो गया और ठेकेदारों के यहाँ मज़ूरी करने आये थे पत्थर तोड़ने की

मज़ूरी। ठेकेदार उनसे गुलाम जैसे काम करवाते थे। राऊत लोग पहाड़ियों में टपरिया बनाकर रहते थे। भूख और बीमारी के कारण, मालिकों की पीड़ा के कारण वे शोषित थे। साथ साथ बरसात, बाढ़ जैसे प्रकृति-क्षोभ भी उन्हें तरसते थे। रहन-सहन और अस्पताल का प्रबंध मालिकों ने इन आदिवासियों केलिए नहीं किया था। इसलिए घोर बरसात के समय इन लोगों को फतिंगे जैसे मृत्यु वरण-करना पड़ा। जल ही जीवन है, लेकिन यहाँ जल ही मरण है राउत बच्चे मुर्गियों की तरह ही जल-समाधि ले जाते थे। ज़िंदा रहनेवालों के पेट में भूख की ज्वाला भडक उठती थी।

'चाक' उपन्यास में मैत्रेयीजी ने श्रीधर प्रजापति का पात्र-योजना एक अलग ढंग से की है। मस्टर श्रीधर-प्रजापति जाति में कुम्हार होने के कारण ज़िंदगी में बहुत पीड़ाएं झेलनी पड़ीं। गांव के उच्चवर्ग के लोगों ने चील की तरह उसका शिकार किया। उन्होंने मास्टर का बदनामी फैला दी "गू-मूत धोकर पढ़ाई की है। आधे पेट खाकर सोया है। बड़ी उन्नति की। भगवान घूरे की भी सुनता है एक दिन। बारह वर्ष बाद दरिद्री के भी दिन फिरते हैं।"[1] ये बातें उनके दिल में हथौड़ा सी बजती हैं, वे सो नहीं सकते।

कुम्हार श्रीधर मास्टर बनकर गांव के स्कूल में आ गया। इसपर उच्च वर्गों के मन में विद्रोह था। मास्टर थानसिंह स्कूल में बहुत अधिक हेर-फेर किया करते थे। श्रीधरजी ने उसके विरुद्ध आवाज़ उठाने पर रात को किसी ने उसे बुरी तरह पीटा। हमलेवालों को मास्टर पहचान ही नहीं सका।

---

1. चाक पृ. 170

वे अंधेरा करके आए थे। लेलटेन और बल्ब तोड़ डाला, चेहरे ढ़के हुए थे। वह बुरी तरह घायल हो गया।

खटीक दलित जाति के बिसुनदेव गुलकंदी को लेकर गांव से भाग गया। इस घटना पर गांव में खूब हलचल मच गई। होली के अवसर वे गांव लौट आए और उन्होंने उत्सव में भाग लिया। उस रात हरिप्यारी के घर को किसी ने आग लगा दी। हरिप्यारी, बेटी गुलकंदी और बिसुनदेवा, तीनों लाश बन गए। हत्या के पीछे गांव के उन्नत लोग थे कारण यह है कि बिसुनदेवा जाति में दलित है। प्रधानजी ने बयान दिया कि होली के अवसर पर ऐसी घटना दुर्घटना के रूप में होना स्वाभाविक है। होली में आदमी होलिका मइया का प्रसाद जलते लुगरा-लेकर भागने लगे। हरिप्यारी के हाथ से आग पकड़ गयी होगी। सच्चाई और कुछ है बयान और कुछ। मरनेवाले दलित हो तो कोई खोज-बीन, केस-मामला कुछ नहीं होगा, क्योंकि अन्यायी होने पर भी न्याय अधिकारी वर्ग के पक्ष में होगा। दलितों को आम जनता का अधिकार कभी नहीं भोगना पड़ेगा।

'अलमा कबूतरी' जमजाति शोषण का सच्चा दस्तावेज है सबसे पहले कबूतराओं को 'अपराधि' बनाकर शोषण किया गया था, उन्हें कभी समाज की मुख्य धारा में आकर कोई नौकरी करके शांति-पूर्ण ज़िंदगी बिताने का नहीं देता। वे कज्जाओं के गुलाम हैं। गुस्सा आने पर वे भद्दी से भद्दी गालियाँ देते हैं। खेतों में बसे कबूतराओं को छोटी-सी गलती पर मारने लगते हैं। लेकिन बेचारे कबूतरा सारी क्रूरताओं को पानी की तरह पी जाते हैं ऊपर से कबूतरियाँ पाँव पकड़ लेतीं।

मंसाराम के मन में लल्लूराजा के प्रति विरोध था और कदमबाई के प्रति मोह भी था। ये दोनों सफल बनने केलिए उसने एक उपाय सूझा। जंगलिया के द्वारा लल्लूराजा के घर से हनुमान के सोने की एक मूर्ति की लूटा की गई। फिर एक दिन कुछ लोगों ने मौका पाकर मंसाराम के खेत में ही जंगलिया को घेर लिया। उसे गोली लगाकर मार डाला। सच में कत्ल मंसा ने कराया लेकिन लोग सोचेंगे लल्लुराजा ने कराया। जंगलिया की हत्या द्वारा मंसा के दो उद्देश्य सफ़ल हो गये-लल्लूराजा से बदला करना और जंगलिया की विधवा कदमबाई को प्राप्त करना। जंगलिया की प्रतीक्षा में मंसा के खेत में खड़ी रही कदमबाई के साथ मंसा का शारीरिक संबंध हुआ।

अगले दिन जंगलिया का लाश मंसा के खेत से मिला। जंगलिया की यादों ने कदम के दिल में सुराख कर डाला। वह सारे दुःख दिल में समेट गयी। जंगलिया की हत्या पर कोई खोज-बीन नहीं हुआ क्योंकि मरनेवाला एक 'कबूतरा' था, जो मानव समाज में नगण्य है। तदवसर कदम को अपने भाई सुमेर की हत्या की याद आयी। सुमेर के गुल्ले चलाते समय चलती से एक मोर मर गया। मोर देवताओं की सवारी, सुमेर नीच कबूतरा। गांववालों ने लाठियों से उसका सिर फोड़ दिया और मोर के बराबर गाड दिया।

कभी कभी कबूतरा बस्ती में लैसंसशुदा ठेकेदारों का हमला हो रहा था, क्योंकि दारु पीने केलिए ज़्यादा लोग कबूतरा बस्ती में जा रहे थे। एक बार हुए हमले में जमुनी और उसके पेट के बच्चे की हत्या हुई। राणा

भीखम के साथ खेत में भागा। कदम किसी तरह ठेकेदारों के चंगुल से बचकर डेरे में आ गयी। मलिया काका स्वयं शिकार बनकर पुलिस से या लैसंसशुदा ठेकेदारों से पिटने केलिए डेरों पर रह जाता है। वह अपने को पुलिस के आगे फेंकने केलिए रोटी का टुकड़ा मानता था। सिपाहियों को थाने में लेने केलिए मुजरिम चाहिए। अपनी जनता को बचने केलिए मलिया काका स्वयं पीड़ा भोगने केलिए तैयार रहा था। इसप्रकार 'कबूतरे' एक पल भी चैन से न रह सकते। कबूतराओं पर हमला करना, कभी कभी उनको पीड़ा देना सभ्य समाज का 'होबी' (शगल) है। वे इससे मज़ा लूटते हैं।

भूरी कबूतरी और उसके पति वीरसिंह बहादूर थे। वे एक बार कज्जे की वर्दी पहनकर शहर गये, नेहरुजी का भाषण सुनने केलिए। नेहरुजी के भाषण से प्रेरणा पाकर मातृभूमि के स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने केलिए वरिसिंह पल्टन में भर्ती होने केलिए गया और पकड़ा गया। अपनी जाति 'कबूतरा' लिखाते समय किसी ने कान पकड़कर उसे बाहर कर दिया, वे सोचते थे, वीरसिंह हथियार चुराने आया है। न्यायालय के विरुद्ध आवाज़ उठाने के कारण पुलिस ने उसे गोली मारा। अपने पति की मृत्यु पर भूरी की आँखों में आँसू न थे, धुआँ था। उसके मन में वीरसिंह की कही गयी एक बात थी "पढ़े-लिखे अनपढ़ों की किस्मत लिखें तो अनपढ़ क्या पाएँ।"[1] अपने वर्ग के शोषण का कारण अशिक्षा समझकर भूरी ने अपने बेटे रामसिंह को पढ़ने केलिए भेजा। रामसिंह की पढ़ाई केलिए पैसा कमाने को उसको अपना शरीर बेचना पड़ा।

---

1. अल्मा कबूतरी पृ. 74

कदमबाई का बेटा राणा मंस का औलाद था, इसलिए ही उसमें कबूतरों से ज़्यादा कज्जे का स्वभाव दिखाई पड़ता था। अपनी उम्र के दूसरे बच्चों की तरह वह स्कूल जाकर पढ़ना चाहता था। भूरी से प्रेरणा पाकर कदम ने राणा को स्कूल भेज दिया। लेकिन स्कूल में राणा की अवस्था अत्यंत शोचनीय थी। स्कूल के बच्चों ने राणा का बस्ता पीपल पर टाँग दिया। एक विश्वास था कि कबूतराओं के छूने से पीपल, तुलसी जैसे पेड़, जहाँ देवता का वास है जल जाते हैं या कज्जा लोगों को श्राप दे डालते हैं। राणा बस्ता लेने केलिए पीपल पर चढ़ते समय मास्टरजी ने उसके कमर पर कोड़ा मारा। मास्टरजी ने उसे आज्ञा दी कि नल के पास न जाना चाहिए। पानी तालाब में से पीना है जहाँ कज्जा लोगों के बच्चे टट्टी-पेशाब फेंकते हैं, औरतों-आदमी शौचते हैं। यह बात जाननेवाला राणा ने चोरी से नल चलाकर पानी पिया। समाज ही कबुतराओं को चोर बनाता है, वे जन्म से चोर नहीं थे।

एक बार मंसा की पत्नी आनंदी ने राणा के साथ क्रूर व्यवहार किया। एक दिन वह घर से लौटते समय एक बड़ा-सा काला कुत्ता उस पर झपट पड़ा। उसका भयानक पैने दाँत खुले थे और जीभ लपलपाई थी। किचकिचाकर दोनों पंजे उसकी छाती पर टिकाकर चढ़नेलगा। नकीले नाखूनों का ज़ोरदार आक्रमण हुआ। जहाँ कुत्ते के नुकीले दाँत गड़े, वहीं से मांस फट गया। राणा दर्द से ज़ोर ज़ोर से रो रहा था।

राणा के प्रति जो शोषण उसके अध्यापक और आनंदी ने किया उस पर प्रश्न उठाने केलिए कदम या दूसरे कबूतरे नहीं गये, नहीं जा सकते

क्योंकि वे कज्जा के गुलाम हैं। गुलाम को मालिक की अनुमति के बिना आवाज़ नहीं उठानी है। राणा के प्रति चल रहे शोषण के चित्रण करने केलिए लेखिका ने सशक्त और मार्मिक भाषा का प्रयोग किया है।

भूरी को यह इच्छा थी कि अपना समाज शिक्षा प्राप्त कर गुलामी से मुक्त होना अनिवार्य है। है। इसकेलिए उसने बेटे रामसिंह को पढ़ने केलिए भेजा। लेकिन भूरी का लक्ष्य असफ़ल हुआ। कज्जा समाज और दारोगा वर्ग ने रामसिंह को दलाल बना दिया। उसके सामने कोई और चारा नहीं था क्योंकि बच्ची बीमार थी, पत्नी गर्भ से हैं। पुलिसवाले ने धमकी दी कि पत्नी को बलात्कार करेगा यह तो हमारी समाज नीति है आज भी। किसी मुजरिम के खोजार्थ घर-घर में खुसकर वहाँ की नारियों का अपमान करना, आदमियों को मारना, उन्हें जेल ले जाना ये सब सिर्फ आतंकवादियों नहीं आज के अधिकारी वर्ग भी कर रहे हैं। बड़े लोग कबूतराओं को भलाई के रास्ते पर चल नहीं देते। रामसिंह को जानबूझकर अपनी ज़िंदगी बेचनी पड़ी। क्योंकि भूख के कारण घरवाली ने मरे बच्चे को जन्म दिया। खुद भी उसी के साथ मर गयी। कमज़ोरी की मारी देह दर्द तक नहीं झेल पाई। रामसिंह ने भी अपनी ज़िद को पत्नी की चिता के साथ फूँक दिया और अपनी बेटी अल्मा को पालने केलिए पुलिस का दलाल बनाया।

रामसिंह का अंत अत्यंत दयनीय था। बेटासिंह नामक एक बड़े डाकू के नाम पर उसकी हत्या हुई। खबर फैला कि बेटासिंह मारा गया। लाश का एक ज़िंदा आदमी की तरह खड़ा होना विचित्र लग रहा था। चेहरा सीताफ़ल जैसा फुसफुसा रहा, आँख-नाक और मुँह-माथे की उठान-ढ़लान

गायब है। गोलियों से छना हुआ सुराख से भरा नीला बदनुमा मुंह रामसिंह का बेटासिंह नाम का वह लाश बीभत्स था।

मडोराखुर्द की इस अपराधि जाति में केवल दो ही पढ़े थे रामसिंह और राणा। दोनों की ज़िंदगी कज्जा लोगों ने बरबाद कर दिया। उनके द्वारा पूरी कबूतरी जाति की प्रगति रोक ली गई।

नेहरुजी ने (एक्स क्रिमिनल ट्रैब्स आफ इंड़िया) में उल्लेख किया है कि "किसी भी जनजाति को 'अपराधि' करार नहीं दिया जा सकता। यह सिद्धांत न्याय और अपराधियों से निपटने किसी भी सभ्य सिद्धांत से मेल नहीं खाता।"[1] लेकिन आज भी कबूतरा जनजाति 'अपराधि' विशेषण ढ़ोकर समाज के हाशिये पर ज़िंदगी से लड़ते रहते हैं। उनके चारों ओर शोषण का किला खड़ा है। किले से बाहर आना उनके संबंध बहुत दुष्कर है। लेकिन वे प्रयत्न कर रहे हैं।

'कस्तूरी कुंडल बसै' में मैत्रेयी के सहपाठी एदल्ला एक दलित लड़का था। वे दोनों घनिष्ट मित्र थे। मैत्रेयी की माँ कस्तूरी के कानों में यह बात आयी थी कि लड़की पढ़ने नहीं जाती, कुछ लड़कों के साथ आम के पेड़ की छाया में बैठी रहती है। मैत्रेयी के मन में एदल्ला के प्रति सहानुभूति थी, क्योंकि स्कूल में उसको बहुत पीड़ाएँ झेलनी पड़ती है।

स्कूल में एदल्ला ने अपना नाम एदल्लासिंह लिखा है। चमार होने पर 'सिंह' नाम पर जाटों के सारे लड़के उसके प्रति गुस्सा था। एदल्ला का

---

1. अल्मा कबूतरी पृ. 7

'सिंह' कटाने की आज्ञा दी गई, क्योंकि सिंह मतलब है ठाकुर या जाट। सारे जाट और बनिया लड़कों ने बारी बारी उसका कान उमेंठा, उसने ऊपर धूल डाल देते थे, उसके बाल खींचते थे, उसने सारी पीड़ाएँ चुपचाप सह ली विद्रोह ही नहीं किया क्योंकि उसे विद्रोह करने का हक नहीं है।

एकबार स्कूल से लौटते समय सबको प्यास लगी। लड़के अपने-अपने बस्ते खेत की मेंड पर रखकर रहट के पास चले। एदल्ला को बस्तों के पास छोड़ा गया, चमार होने के कारण वह सबसे पीछे पानी पिएगा। फिर साहूकार के लडके की मर्जी से सारे लड़कों ने अपने-अपने बस्ते एदल्ला के सिर पर लाद दिया, क्योंकि इसका तो काम ही है बोझ उठाना। एदल्ला का बाप इन लड़कों के घर के जानवरों का गोबरा उठाता था और मरे ढ़ोरों की चमड़ी खींचकर 'पुर' (पानी भरने का बड़ा झोला) बनाता था।

इसप्रकार दलित वर्गों और जनजातियों के शोषण के कई उदाहरण मैत्रेयीजी की रचनाओं में मिलते हैं। उच्चवर्ग के लोगों का विश्वास था कि शोषण करना उनका अधिकार है। आजकर दलित विद्रोह का स्वर इधर-उधर गूँजने लगा।

राजनीतिक क्षेत्र में दलितों और जनजातियों का शोषण

मैत्रेयीजी के उपन्यासों और कहानियों में दलित और जनजाति वर्गों के विभिन्न प्रकार के शोषण का चित्रण हम देख सकते हैं। उनमें प्रमुख और गंभीर है राजनैतिक शोषण। भारत की राजनीति आजकल भ्रष्टाचार का अखाड़ा बन गई है। हत्या, लूट, छल आदि की भरमार इस क्षेत्र में दिखाई पड़ती है। दलित और जानजाति वर्गो के लोगों को राजनीति में

प्रतिनिधित्व बहुत थोडा ही मिलता है और नारियों को इस धारा में आने ही नहीं देते अथवा यदि वे आयी तो उनका घोर शोषण किया जाएगा। चुनाव के संदर्भ छोड़कर कोई राजनीतिक दल निम्न वर्ग के डेरों में नहीं जाता। राहत की बात है कि उनको मत दान का अधिकार है। इसलिए चुनाव के अवसर पर उनको कुछ मान्यता मिलेगी। सत्ताधारी-उच्च वर्गों के हाथों की कठपुतली है दलित लोग। इसका सही मिसाल मैत्रेयी की कथा साहित्य में दिखाई पडता है।

'गोमा हँसती है' कहानी संग्रह की एक प्रासंगिक कहानी है 'शतरंज के खिलाड़ी'। यहाँ मालिक वर्ग के प्रतिनिधि पीतमसिंह और नत्थुसिंह चुनाव में पार्टी सीट में चुनाव लड़ने केलिए एक दलित आदमी या महिला की खोज की चर्चा में थे। पीतमसिंह के मत में "राजनीति में आदमी को अपने सिवा अपनी छाया पर भी भरोसा नहीं करनी चाहिए। अंधेरे में ससुरी वह भी साथ छोड़ जाती है।"[1] पीतमसिंह का नौकर कामता दलित था, वह हमेशा आज्ञानुवर्ती बनकर उसके पैरों पर नीचे खडा होता है। पीतमसिंह का शक यह था कि पार्टी सीट इस बार हरिजन आरक्षण हो तो कौन खडा होगा? नत्थुसिंह का जवाब यह था कि कामता कलियुग में वृथा ही पैदा हो गया है, खूँट पर बँधे बैल और कामता में रत्ती भर भेद नहीं है। इसे चुनाव में उम्मीदवार बनाए तो आदर्श जनसेवक सिद्ध होगा। क्योंकि रोटी और नींद के अलावा उसे तीसरा चिन्ता नहीं है। बेचारा संत भाव से नया-पुराना, फटा-चिथड़ा कपड़ा स्वीकार कर लेता है। इसलिए प्रतिनिधि कामता होने

---

1. शतरंज के खिलाडी (गोमा हँसती है) पृ. 17

पर अधिकार अपने हाथों में सुरक्षित रहेगा। नाम दलित का होगा, सत्ता उच्चवर्ग का होगा, यही राजनीति आज कल चल रही है। पार्टी सीट महिला आरक्षण है तो कामता की पत्नी दुरगी को उम्मीदवार बनने का निर्णय लिया गया।

कबूतरा वर्ग अपराधि है, बहिष्कृत है, फिर भी वे वोटर है, उनके मतदान का अधिकार है लेकिन अपनी मर्जी के अनुसार नहीं, उनके मालिकों के इच्छानुसार उनको वोट करना पडता है। 'अल्मा कबूतरी' के मंसाराम ने चुनाव में कबूतराओं को अपने इच्छानुसार इस्तेमाल करने का निर्णय लिया गया। अठाईस वर्षो की उम्र में उसके सामने एक नई चुनौती आगयी। अब तक गुन्नीसिंह प्रधान पद पर निर्विरोध आसीन होते रहे। अब की बार लल्लू राजा उठ खड़ा हुआ जो मंसा के सहपाठी होने पर दुश्मन भी था। इसलिए इस पर ज़रूर प्रधान बनना उसके संबंध में मान का प्रश्न है। गरीबों को कर्ज बाँटने का निश्चय किया गया क्योंकि गांव की आबादी में ज़्यादा वे होते हैं इसलिए निर्णायक वोट गरीबों के ही होते हैं। प्रत्युत्पन्नमति मंसाराम को अचानक कबूतराओं की याद आयी। गांव के लोग लल्लूराजा के पक्षपाति हो तो कबूतरा उनका गुलाम है। बहिष्कृत है तो कोई बात नहीं, वे वोटर हैं। वे चाहें तो उनके दम पर ज़रूर प्रधान बन सकते हैं। मंसाराम को यकायक महसूस हुआ कि उनके खेत में कबूतरा नहीं वोटों की फसल लहलहा रही है। राजनीति में दलित और जनजाति वर्ग का कर्तव्य है तो उच्चवर्ग की लक्ष्यप्राप्ति का माध्यम बनना, उनका अपना अस्तित्व नहीं दिखा सकते।

आज कल की राजनीति में पुलिस व सेना विभागों का दायित्व गुंडा लोग, अपराधि लोग व आतंकवादियाँ करते रहते हैं। मन्त्रियों और राजनीति में उच्चपद में विराजमान सत्ताधारियों के सुरक्षा दल में भी उनको स्थान मिला होगा। अक्सर सत्ताधारियाँ राजनीति में आने के पहले किसी जुर्म की सज़ा भोगने में जेल में पड़ा था, या कोई डाकू भी था। शिबु सोरन, फूलनदेवी आदि इसके सच्चे मिसाल हैं।

पुलिस दल के एस.पी. को भी अपने सिपाहियों पर आस्था नहीं है। उन्होंने दारोगा साहब से कहा संसद के चुनाव में पिछली बार 20 डाकुओं की गारद भेजी थी क्योंकि रक्षा मंत्री को पुलिस सिपाहियों की कामयाबी पर विश्वास नहीं था। सत्ताधारियों और अफ़सर वर्ग ही यहाँ डाकुओं तथा अपराधियों का पालन पोषण करते हैं।

बेटा सिंह गांव का भयानक डाकू था जो गोरामछिया में रामसिंह के घर आया, अकेले नहीं पुलिस अधिकारियों और दलालों के साथ। डाकू बेटासिंह की सारी मदद उन्होंने ही की है। बेटासिंह को इस बार के चुनाव में खड़ा होना चाहिए। बी.जे.पी और कांग्रेस से गुपचाप निमंत्रण है कि सभी पार्टियों को ऐसे लोगों की तलाश है जो हौसलेमंद, सामर्थ्यवान और पैसे को मिट्टी समझनेवाला आदमी कहाँ से मिलेगा। पार्टियों को बेटासिंह को चाहिए और बेटासिंह को पार्टी सीट मिले तो सारे कत्ल और डकैती के केस से बचने का मौका मिलेगा। रामसिंह को उसने आज्ञा दी कि उसके समान रूपवाले कबूतरा को चुन लो, इसलिए कि बेटासिंह के नाम पर उसे मारें तो उसका रास्ता साफ हो जाएगा। लोग सोचेंगे डाकू बेटासिंह मारे गए, लेकिन बेटासिंह मन्त्रि बन सकता है।

अंत में खबर फैली कि बेटासिंह मारा गया, लेकिन बेटासिंह के लाश के स्थान पर रामसिंह का लाश। पुलिस और डाकुओं की मदद करके, अपने वर्गों को मौत के मुख में फेंकनेवाला रामसिंह भी राजनैतिक शोषण का शिकार बन पड़ा। उसकी बेटी अल्मा इस जगत में अकेली बन गयी।

अल्मा पढी-लिखी थी। अपनी अंतिम यात्रा के पहले रामसिंह ने उसे अपने दोस्त दूलन के घर भेजा। रामसिंह की मृत्यु के बाद दूलन ने अल्मा को सूरजभान (एम.एल.ए) को बेच दिया। उसके यहाँ अल्मा को मानसिक और शारीरिक पीड़ाएं भोगनी पड़ीं। धीरज की मदद से वहाँ से बाहर निकली अल्मा जन-कल्याण मन्त्री श्रीराम शास्त्री जो पहले डाकू था, के चंगुल में पड़ गयी और उसने राजनीति का कराल मुख देखा और अनुभव किया संयोगवश अल्मा 'कबूतरी' अल्मा 'शास्त्री' बन गयी और श्रीरामशास्त्री की मृत्यु के बाद मंत्री पद पर नियुक्त हो गई।

'चाक' की पृष्ठभूमि अतरपुर गांव है। राजनीतिक भ्रष्टाचार वहाँ भी कम नहीं है। श्रीधर प्रजापति मास्टर बनकर अतरपुर के स्कूल में आया जो जाति में कुम्हार था। इसलिए तो उसे 'मास्टर' के रूपमें स्वीकार करना वहाँ के प्रधान फत्तेसिंह और उसके भाई थानसिंह, नम्बरदार आदि को बहुत मुश्किल लगा। श्रीधर को गांव से भगाने केलिए कई बार उसका अपमान किया गया। एक बार बुरी तरह मारा पीटा। लेकिन वह पीछे न मुड़। हरिप्यारी, गुलकंन्दी और बिसुनदेवा को आग लगाकर हत्या करने के बाद उसकी ज़िम्मेदारी श्रीधर के ऊपर डालने की कोशिश की गई है। सारंग

और श्रीधर के रिश्ते के नाम पर रंजीत को प्रकोपित कर उसे शराबी बनाकर उसका पारिवारिक जीवन की शांति नष्ट कर दी गई। श्रीधर मास्टर दलित था, इसलिए उसको कई प्रकार के कष्टों को भोगना पड़ा।

बिसुनदेवा जाति में खटीक था, जो भिखारी भी था। वह हरिप्यारी नाइन की बेटी गुलकंदी को लेकर गांव से भाग गया। एक होली के अवसर पर गांव आए उनकी हत्या हरप्रसाद ने घर को आग लगाकर की है जो चुनाव में खडे होनेवाला था। प्रधान ने बयान दिया कि यह हत्या नहीं सिर्फ एक दुर्घटना है। यही राज-अनीति हमारे समाज में ज़ारी रही है।

अखबार लेकर पढ़ें तो हर कहीं अत्याचार, हत्या, लूट-पाट, बम्ब विस्फोट आदि चल रहे हैं, उनके मूल खोजें तो समझ पाएगा कि इनके पीछे कोई-न-कोई राजनीतिक मकसद होगा। राजनीतिक क्षेत्र में दलितों और जनजातियों का शोषण आसान होगा क्योंकि सबसे पहले वे अनपढ़ थे और उनके मालिक वे स्वयं नहीं उच्चवर्ग के सत्ताधारियाँ हैं।

'इदन्नमम' में पहाड़ी क्रेशर में गुलाम जैसे काम-करनेवाले भीलजाति-राऊत वर्ग के शोषण की कहानी लेखिका ने अत्यंत प्रभावी ढंग से की है। अभिलाखसिंह जैसे क्रेशर ठेकेदार किसी राजनीतिक दल के पक्षपाति थे। वे लोग राऊत वर्ग के स्त्री पुरुषों द्वारा कठिन काम कराने पर भी वेतन, भोजन और रहने केलिए प्रबंध नहीं देते थे। भूख और हैजे जैसे बीमारी के कारण उनकी स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। सिर चुनाव के वक्त राजनीतिक लोग उनके पास आते होंगे, वोट पकड़ने केलिए।

सोनपुरा के अस्पताल में डाक्टर लाने केलिए और क्रेशर ठेकेदारों को पहाड़ियों से बाहर निकालने केलिए मंदा ने खूब कोशिश की। फायदा नहीं मिला। चुनाव के समय उसने सोनपुरा और आसपास के गांववालों तथा राऊतों को आह्वान दिया कि वोट बहिष्कार कर दो। यह बात जानकर वहाँ के सत्ताधारियों ने अस्पताल में डॉ. इन्द्रमणिसिंह को भेजा और राऊत वर्ग की सुरक्षित ज़िंदगी का प्रबंध भी किया।

मैत्रेयीजी ने अपने कथा साहित्य में दलित और जनजाति वर्ग के शोषण की यथार्थ अभिव्यक्ति करने केलिए बहुत सारी कोशिश की है और उन्होंने आह्वान भी दिया कि शोषण के प्रति विद्रोह प्रकट करना अनिवार्य भी है।

दलित और जनजाति वर्ग की नारियों का शोषण

दलित शोषण सबसे ज़्यादा नारियों में होता रहता है। क्योंकि उनमें विद्रोह करने की भावना बहुत कम ही होती है। अधिकांश दलित नारियां मेहनत करके घर चलाती हैं वह अपराध करके हो, पहाड़ तोड़कर हो, कृषि और कोई नौकरी करके हो। नौकीर के क्षेत्र में मालिक वर्ग उनका शारीरिक शोषण करते हैं। दलित और जनजाति वर्गअछूत है, बहिष्कृत है, लेकिन उनकी स्त्रियों का शरीर 'अछूत' नहीं है; उच्चवर्ग के आदमी बेहिचक उनके सुगढ़ शरीर का आस्वादन करते हैं। बीमारी, भूख और शारीरिक पीड़ा से तड़पनेवाली दलित नारी अपने बच्चों और घरवालों को पालने में तरह रही है। दिन-रात जी-तोड़ मेहनत करती है। पुरुषवर्चस्व समाज में उच्चवर्ग की नारियाँ भी सुरक्षित नहीं, तब दलित नारियों की बात क्यों कहना?

'इदन्नमम' में क्रेशर में काम करनेवाली राऊत नारियों की दशा देखकर हमें लगता है कि इनकी ज़िंदगी का मकसद ही शोषण सहना है। एक बार मंदा परबतिया राउतिन की टपरिया पर गयी, वहाँ का दृश्य हृदय-भेदक था उखड़ी हुई सास ने भीषण रूप धारण होने पर परबतिया कुछ बोल नहीं सकती। लछो ने उसे पीने केलिए पानी दिया, तीन-चार घूँट ही निगलने के बाद रोती हुई बोली "लछो, भूखे पेट पानी भी नहीं सुहा रहा। कड़वा लगता है मिचली-सी उठ रही है भीतर से।"[1]

मालिक लोगों का लक्ष्य है कमाई में वृद्धि करना। क्रैशर में काम करनेवाले निस्सहाय जनजाति लोगों की भूख, बीमारी, मृत्यु आदि उनके संबंध में एक मामूली विषय ही नहीं है। जिंदगी के अंतिम दम तक उनसे नौकरी करवाते हैं, नारियों पर सहानुभूति का एक अंश भी नहीं दिखा देते।

परबतिया ने मंदा से अपनी अति दारुण नियति के बारे में कहा है सारी रात ज्वर के कारण नहीं सो पाए इसलिए खदान में ठीक समय पर नहीं पहुँच पाए। मालिक उसकी टपरिया में आया। उसे देखकर शरीर काँपने लगा। भूख और रोग के कारण वह अच्छी तरह खड़ी हो नहीं सकती। उसकी अवस्था देखकर मालिक ने शराब का एक बोतल उसको दिया। उसे पीकर ताकत पाकर जल्दी खदान आने की आज्ञा दी गाई। परबतिया ने मंदा से कहा पापी पेट बुरी चीज़ है। यह देह से न लगा होता तो आदमी संत-धर्मात्मा होता। भूख से नहीं जीत पाए। कल की इच्छा में हारी-बीमारी का भी ख्याल बिसरा दिया। उनके आगे और कोई रास्ता नहीं। मनुष्य की सबसे भयानक अवस्था तो भूख है, भूख मिटाने केलिए इस

---

1. इदन्नमम पृ. 228

दुनिया के सब लोग काम करते हैं। लेकिन ये बेचारे राऊत वर्ग दिन-रात काम करने पर भी भूख नहीं मिटा सकते। केशरवाली उनको भोजन और पैसा दोनों नहीं देते।

अवधा राऊतिन के बेटे की शादी होनेवाली है। कोई कमाई उसके पास नहीं है। उसने दिन-रात का भेद त्याग कर काम किया। लू-लपट और जलती दोपहर में वह पत्थर तोड़ती रही। रात के अंधेरे में वह काम करती रही। हारी-बीमारी तक में टपरिया में बैठना और सोना उस ने गुनाह समझा। इतने दिन तक मालिक से उसने कोई पैसा नहीं मांगा।

शादी की चिट्टी दिखाते समय मालिक ने आठ दिन पहले पैसा देने का वादा दिया। तब पूछने पर चार दिन पहले दे देने को कहा गया। लेकिन उसने पैसा नहीं दिया। अवधा को अपनी पिछली ज़िंदगी याद आयी। वे भील की जात शिकार के धनी माने जाते थे। औरों के यहाँ ब्याह-बारात में बड़ी रौनक लगती थी। लेकिन उनके आवासस्थान सरकार ने अपना लिया और उन्हें जंगल से कुत्ते की तरह भगाया। अब तो मेहनत-मसक्कत के बाद भी भूखे ही रहने पडे। शादी में दावत देने केलिए उनके पास पैसे नहीं थे। इसलिए उन्होंने किसी जंतु (जो जहरीला था) को परोसा। पहाड़ी टपरियों में भयानक हैजा फैल गया। कलवाला उत्सवी समूह दस्त, उल्टी, मूर्छा, बीमारी और मौत के शिकंजे में जकडा गया। सिरोदेवी, बलदेव, अवधा आदि कई राऊत की मृत्यु भी हो गयी।

अहिल्या चौदह-पंद्रह वर्षीय साँवली राऊतिन लड़की थी। भूख मिटाने केलिए वह चपिया लेकर घर-घर जाती थीं। एक दिन वह जगेसर

कक्का के घर आयी। अपनी बेटी की उम्रवाली अहिल्या के शरीर पर उसको मोह हुआ। जगेसर ने अपना खेत बेच डाला और पहाड़िया खरीदकर वहाँ एक टपरिया बनायी। अहिल्या को साड़ी, रेश्मी ब्लाऊस देकर, अच्छे भोजन देकर अपने जाल में फँसाया और उसका शरीर अपना लिया। जगेसर का छोटा भाई पहाड़ पर आया और अहिल्या को मारा-पीटा। अंत में जगेसर से अहिल्या को तपेदिक की बीमारी लग गयी। राऊतों की बस्ती से दूर बनी टपरिया में कोई बचाने छुडाने भी नहीं आया। अहिल्या जगेसर के पैरों पर पड़ी। लेकिन रोगिणी अहिल्या को जूठन की तरह फेंककर चार बच्चों के पिता जगेसर वहाँ से हमेशा केलिए चला गया। उस भील युवति की ज़िंदगी कीचड़ में फँस गयी।

'अलमा कबूतरी' जनजाति शोषण का इतिहास है। यहाँ पुरुष और स्त्री दोनों समान रूप से शोषित है। मंसाराम ने घर का मोह जगाकर जंगलिया से चोरी, कत्ल आदि अपराध करवाया। उसकी आंखों में जंगलिया की पत्नी कदम का शरीर झिलमिलाता रहा। पुलिस के भय से जंगलिया को वन जाना पड़ा। एक रात जंगलिया की प्रतीक्षा में खेत में खड़ी रही कदमबाई का बलात्कार मंसा ने किया था। जंगलिया को मार डाला। कदम को अपना पति नष्ट हो गया। विद्रोह करने का अधिकार नहीं है। जंगलिया 'अपराधि' हो तो कोई केस-खोज नहीं हुआ। कदम ने मंसा के बेटे को जनम दिया - वह तो न कज्जा है और न कबूतरा। गर्भ के दिनों की पीड़ाएं कदम को आगे भी शिकार करती थी। भारी पेट लेकर मोंठ महुआ लाना आसान नहीं था, पर रोज़ी-रोटी का सवाल था, दो जीवों का आहार जुटाना था। एक बार बस में चढ़ने से आवाज़ें उठीं "कबूतरी है,

कबूतरी! गाड़ी में बच्चा पैदा कर देगी। बच्चा साला रोएगा नहीं, जेबें झाड़ेगा। अरे नहीं, नहीं सब ढोंग है। घाघरा खुलवाओ। पेट पर कपड़ा बाँध रखा होगा। बड़ी-प्रपंचिन औरतें होती है ये।"[1]

एक बार लाइसंसशुदा ठेकेदारों का हमला कबूतरा बस्ती में हुआ। क्योंकि कज्जे लोग मदिरा पीने केलिए कबूतरा बस्ती में आते थे। कबूतरे चारों ओर भाग गए पूर्णगर्भिणी जमुनी भी प्राण-रक्षा केलिए भाग रही थी खेत की ओर। उसके पीछे ठेकेदारों के आदमी थे। उन्होंने उस पेटवाली को पकड़ने का आक्रोश दिया। अरहर की पत्तियां हरी से लाल हो गई। सरमन की औरत रो भी न सकी। डंडेवाला पीछे था, जाँघों में डंडा घुसाने लगा।

ठेकेदारों के जाने के बाद राणा और भीखम ने खेत में एक भयानक दृश्य देखा। नारी शोषण का इतना क्रूर मिसाल और कहीं देखा नहीं जा सकता। जमुनी काली मिट्टी के दलदल में चित्त पड़ी थी। आँखों के शीशे पत्थर की तरह ठहरे हुए थे। हाथ-पावों में कीचड़ लिथड़ा हुआ था। नंगी जाँघों पर खूनी धब्बे। उसके बीच बच्चा पड़ा है। जन्म से ही वह मर गया। सरमन की औरत और कदमबाई जमुनी को खेत से खींच लाई थी। राणा की बाँहों में मरा हुआ बच्चा पड़ा था। जनजाति नारियों की यह दुरवस्था आज भी समाज में कायम हैं।

कबूतरा बस्ती की विद्रोहिणी औरत थी भूरी कबूतरी। वह अपने बेटे रामसिंह को पढ़ाना चाहती थी। लेकिन पैसा नहीं था। अपने मरे हुए

---

1. अल्मा कबूतरी पृ. 32

पति वीरसिंह की याद मन में रखकर अपने शरीर बेचकर उसने अपने बेटे की पढ़ाई केलिए पैसा कमाया।

पढ़े लिखे होकर अपने समाज को उद्धार करने का अवसर रामसिंह को नहीं मिला। उसको पुलिस का दलाल बनना पडा और डाकू बेटासिंह के नाम पर मारना पड़ा।

रामसिंह की मृत्यु के बाद उसके दोस्त दूलन ने बेटी अल्मा को सूरजभान को बेच दिया। सूरजभान के यहाँ बँधी अल्मा का पहरावा करने केलिए धीरज आया। पहली बार अल्मा की अवस्था देखकर वह चौंक गया। सत्रह अठारह वर्ष की लड़की खटिया से बँधी हुई लेटी है। अल्मा के बाँहों में लिखी है 'अल्मा कबूतरी।' अल्मा की बाँह का गुदना तो यही सिद्ध करा है कि इसे कबूतरी जानकर लोग दूनी ताकत से हमला करने को तैयार हो जाएँगे। धीरज की मदद से अल्मा वहाँ से बच गयी। कुछ महीनों के बाद अखबार में यह खबर आयी कि 'अल्मा और जनकल्याण मंत्री (जो पहले डाकू था) की शादी होनेवाली है'।

लेकिन सूरजभान की कोठरी से शास्त्रीजी के मकान तक अल्मा की यात्रा शोषण के रास्ता द्वारा थी। जब पिता का कत्ल हुआ तब अल्मा के पेट में राणा के चार महीने का बच्चा था। दारू के नशे में लड़खड़ाते सूरजभान ने ऐसी ताकत से भोग-संभोग किया कि अल्मा खून की पोखर हो गई। सिर्फ सूरजभान नहीं, उसके तीन चार दोस्तों ने भी उसका बलात्कार किया। अल्मा किसी तरह सूरज भान के चंगुल से बच गयी लेकिन वह श्रीराम शास्त्री के हाथ आ गयी, वह सूरजभान से भिन्न नहीं था।

एक बलिष्ठ आदमी अल्मा की कुर्ती का जगला पकड़कर श्रीरामशास्त्री के आगे खींच लाया। उनके पि.ए संतोले की बहू ने रेडियो फुल पर कर दिया था। "अल्मा सीधी देख रही थी। श्रीराम शास्त्री के चेहरे में बेटासिंह का चेहरा! सूरजभान का चेहरा! परसराम का चेहरा! सब चेहरे गड़मड। और सबके पीछे से झाँकता पिता का चेहरा।"[1] अल्मा पढ़ी-लिखी थी, एक मास्टर की बेटी थी। फिर भी उसको कई तरह का शोषण भोगना पड़ा, क्योंकि अल्मा 'कबूतरी' है जनजाति। अंत में अल्मा मंत्री बनी, अपने इच्छानुसार नहीं, राजनीति के अधिकार वर्ग के इच्छानुसार। बेचारी अल्मा को माता-पिता, प्रियतम, बच्चा सब नष्ट हो गये।

'कस्तूरी कुंडल बसै' कस्तुरी और बेटी मैत्रेयी की अपनी कहानी है। मैत्रेयी की शादी होनेवाली है। गाँव की नारियाँ घर में इकट्ठी हो गयी गाना गाती रही, दावत खाती रही। लेकिन बर्तन माँजने, कपड़े धोने और चूल्हे करने केलिए कोई नहीं है। उस समय कस्तूरी ने देखा कि हबीबन बाहर खड़ी है, जो जाति में सक्किन है, दलित। कस्तूरी ने बर्तन माँजने का दायित्व उस पर सौंपा। किसीने आकर बात लैंगसिरी बीबी से कही। उसने एक लात हबीबन की पीठ पर जड़ दी। ब्राह्मणियों ने कहा इसे बाहर न निकालें ते वे विवाह का बहिष्कार करेंगी। गांव की ब्राह्मणियों ने इकट्ठा होकर बेचारी हबीबन को गलियां ही गालियां देकर घर से बाहर निकाल दिया।

मैत्रेयीजी ने सशक्त भाषा द्वारा दलित और जनजाति नारी-शोषण का यथार्थ रूप की अभिव्यक्ति अपने कथासाहित्य में की है।

---

1. अल्मा कबूतरी पृ. 361

दलितों और जनजातियों की संस्कृति

प्रत्येक जाति और जनजाति को अपनी निजी संस्कृति होती है। अपनी संस्कृति, जो अंधविश्वास से जुडा हो, या ज़िंदगी से संबंधित हो वे उस पर गर्व करते हैं। भारत की संस्कृति इतिहास-काल पुराना है और धर्म तथा मूल्यों पर आधारित है। दलित और जनजाति वर्गों को अपनी अलग संस्कृति है, वह ज़्यादातर उनके आचार-विचार, आस्था, कला, त्योहार, सभ्यता आदि पर आधारित है।

'इदन्नमम' में लेखिका ने राऊत जनजाति की संस्कृति पर प्रकाश डाला है। 'बाल विवाह' कानून से निषेध किया गया है। लेकिन भूख, गरीबी, और पीड़ा की ज़िन्दगी बितानेवाली भील-जाति को अपने परंपरागत विश्वास, आचार-विचार सब कानून के परे हैं। जब मंदा पहाड़िया गयी तब अवधा राऊतिन अपने बच्चे लेकर उसके सामने आयी मंदा का आशिष मागने केलिए। बच्चे का सज-धज एक यथार्थ वर जैसा था। उनको खाने केलिए भेजन नहीं है, रहने केलिए घर नहीं है, चारों और बीमारी का तूफ़ान है। फिर भी आचार अनुष्ठान में कोई कमी नहीं है।

'अल्मा कबूतरी' में कबूतरों के 'दहनकर्म' की खासियत जंगलिया के अंतिम कर्म के समय लेखिका ने अभिव्यक्त किया है। कुआरी लड़की से चबूतरा लिपवाया गया। अगरबत्ती जलाई गयी। लोगों के हाथ में बलि का बकरा काटनेवाला चाकू था। वे देवी के चबूतरे पर कट्टस (x) का निशान बनाते है। उनके मत में जंगलिया की मृत्यु नहीं हुई। कबूतरा कभी नहीं मरता। रानी पद्मिनी की संतान खत्म नहीं होती। चिता जलते समय

कबूतरियों ने गीत गाया। दाहकर्म के समय वे रोते नहीं। पुराने ज़माने में सती होने का चलन था, लेकिन आज नहीं।

होली फसलों का उत्सव है। भारत के अधिकांश लोग होली मनाते हैं। कबूतरा लोग भी। अपने संघर्ष भरी ज़िंदगी में त्योहार त्याज्य नहीं। 'चार चाँद' जैसे होली वे उत्साह से मनाते हैं। तदवसर अपनी बीमारी, भूख शोषण आदी शारीरिक पीड़ाएँ वे भूल जाते हैं।

त्योहार का उत्साह जल्दी ही खत्म हो चुकी, ठेकेदारों के हमले में जमुनी और उसके पेट के बच्चे की हत्या हुई। जमुनी के लाश देखकर राणा डर गया और वह बीमार हो गया। अंधविश्वास और अनाचार उनकी संस्कृति का अभिन्न अंग है। बीमारी का कारण 'जमुनी का प्रेत' समझकर राणा को बीच में बिठाकर मंत्र-तंत्र करने लगा। वीरदेवता उनका देव है। गुनियाँ ने वीरदेवता की मूर्ति की स्थापना की। लिपे हुए चबूतरे पर बेर के पत्ते, पान का पत्ता, गुड़ और बकरी का खून चढ़ाया। रोटी का चूरमा और लाल कपड़ा मद और तेल पास में रखा। गुनियाँ ने कर्म प्रारंभ किया। राणा बीमारी से बेहाल सिर झुए बैठा है। गुनियाँ ने राणा को ज़ोर से झाड़ू मारा। वह काँपने लगा। लेकिन रोकने केलिए कोई आगे नहीं बढ़ा। उनका विश्वास था कि मंत्र-तंत्र में रुकावट आये तो देवता का शाप होगा।

कबूतरा परंपरागत रूप से 'अपराधि' है। हर एक कबूतरा बच्चे को बड़े होने पर 'अपराध' करना चाहिए। राणा का अवसर आया वह चोरी केलिए जा रहा था। उसके मन में भय था, वह स्कूल जाना चाहता था। चोरी करना उसनी पाप समझा, लेकिन अपनी जाति की संस्कृति के निषेध करने

का साहस उसमें नहीं था। राणा को चोरी पर भेजने केलिए पूरी बस्ती भाग लेती है। रात ही रात खरा की गुली और मद की धार छोडी गयी। राणा के सिर पर बेर के पत्ते, फूल, दूब धरकर वीरदेव का जयकारा बोला सबने। कदमबाई ने बच्चे के शीश पर हाथ धरकर आशीष दिया। भजनी काकी ने पंचामृत प्रसाद की तरह गुली और मद बाँटा।

कबूतरा-बिरादरी का पूर्व संबंध इतिहास और मिथक से जुड़ा है। राणी पद्मिनी की कहानी, महाबली भीम का पुत्र बर्बरीक की कहानी, गंधर्व सेन और राणी पद्मिनी की कहानी इनकी संस्कृति से जुड़ा है।

दलित और जनजाति वर्ग अपनी संस्कृति को ज़्यादा महत्व देते हैं। क्योंकि उनकी ज़िंदगी में खुशी का अवसर बहुत कम ही है।

दलित और जनजाति शोषण के प्रति विद्रोह

'दलित' और 'जनजाति' होने पर भी वे मनुष्य हैं। विद्रोह की भावना मनुष्य को जन्म से ही प्राप्त है। अपनी जाति के नाम पर ज़िंदगी के हर पहलु में वे शोषण के शिकार हैं। शोषण का परिणाम एक हद तक वे भोगते है; लेकिन सीमा पार करें तो ज़रूर विद्रोह प्रकट करते हैं। मैत्रेयीजी के कथा-साहित्य के दलित पात्र कभी कभी शोषण के प्रि अपना विरोध प्रकट करने में सक्षम है।

'फैसला' कहानी की ईसुरिया, गड़रिया की पत्नी है, दलित है। फिर भी वह प्रधानिन वसुमति से ज़्यादा साहस दिखाती है। जब वसुमती प्रधान-पद के चुनाव में जीत गयी, तब ईसुरिया ने कहा, "बराबरी का ज़माना आ गया। अब ठठरी बँधे मरद मराकूटी करें, गारी-गरौज दें, मायके

न भेजें, पीहर से रुपइया पइसा मँगवावें, क्या कहते हैं कि दायजे के पीछे सतावें तो बैन सूधी चली जाना बसुमती के ढ़िंग।"[1]

ईसुरिया का चित्रण लेखिका ने अलग ढ़ंग से किया है। अपने आगे कोई भी हो, वह जवाब देगी, उसके मन में किसी के प्रति भय नहीं है और वह किसीका गुलाम नहीं था। वह घूँघट नहीं डालती। गांव के गरीबों की समस्याओं पर दाखिल करती थी। हरदेई और रामकिसुन की समस्या का समाधान केलिए वह प्रयत्न करती थी लेकिन असफ़ल हो गयी। ईसुरिया से प्रेरणा पाकर वसुमती ने अपने पति रणवीर को वोट नहीं दिया और एक वोट की कमी के कारण प्रमुख के चुनाव में वह हार गया।

'शतरंज के खिलाड़ी' नामक कहानी में कामता की पत्नी दुरगी उच्चवर्ग के विरुद्ध अपना विद्रोह प्रकट करती है। नत्थुसिंह के अज्ञानुसार चुनाव में उम्मीदवार बनने केलिए कामता दुरगी को लेने आयी थी, उसने जवाब दिया कि कभी भी उनके चरणों में पड़ने केलिए वह नहीं आएगी। उनकी तो रीति ही ऐसी चली आ रही है कि पुकारो तो गालियों देकर, दुत्कारो तो गालियों के संग हत्यारे हमारी दलित जाति को उघाड़-खोलकर धरते हैं। दुरगी उनके फंदे में अपना गर्दन रखने केलिए तैयार नहीं हो उठी। दुरगी की प्रतिक्रिया देखकर-सुनकर जिस रास्ते से कामता आया उसी रास्ते से जल्दी ही जल्दी लौट गया।

'इदन्नमम' में राउतिन तुलसिन का विद्रोह कटु-स्वरों में लेखिका ने अभिव्यक्त किया है।तुलसिन की बेटी अहिल्या का शारीरिक शोषण उसके

---

1. 'फैसला' (ललमनिया) - पृ. 8

पिता जैसे उम्रवाले जगेसर कक्का ने किया। उससे अहिलया को तपेदिक की बीमारी लग गयी। अपनी बेटी की दुरवस्था पर क्रुद्ध होकर तुलसिन ने उसपर आक्रोश प्रकट किया। उनके पेट भरने केलिए दिन भर पत्थर तोड़ना है और रात को शरीर बेचना है। अहिल्या को डाक्टर के पास लेने केलिए पैसा चाहिए। लेकिन जगेसर उसे छोड़कर जल्दी चले गये।

'चाक' उपन्यास का श्रीधर प्रजापति दलित-वर्ग का 'मास्टर' प्रतिनिधि है। वह जाति में कुम्हार था, फिर भी वह किसी का गुलाम बनना नहीं चाहता था। प्रधानजी रोज़ निगराने केलिए स्कूल आते थे। एक दिन वे स्कूल आते वक्त श्रीधर ने उसे रोका और कहा कक्षा लगते समय स्कूल में आना अच्छा नहीं है। गांव के लोगों को स्कूल में जुटाने का हक अध्यापक के अलावा और किसी को नहीं है।

श्रीधरजी दलित शोषण के विरुद्ध अपना आक्रोश प्रकट करना चाहता है। उन्होंने उसकेलिए एक उचित रास्ता अपना लिया। उसने सारंग की मदद से 'एकलव्य की कहानी' की पटकथा लिखवायी और बच्चों द्वारा मंचन कराया। अध्यापक सरकारी शिकंजे में जकड़ा हुआ है, उसको प्रतिक्रिया करने का और कोई अवसर नहीं मिला। नाटक के हर एक अंक में विद्रोह की चिनगारियां दिखाई दी।

गांव के प्रधानजी और रंजीत जैसे लोगों ने स्कूल में नया बिल्डिंग बनवाने के नाम पर सरकार से पैसा वसूल करने का निश्चय किया। पैसा मिलने केलिए कागज़ात पर श्रीधरजी का हस्ताक्षर चाहिए। कितनी धमकी होने पर भी वह हस्ताक्षर करने केलिए तैयार नहीं था।

'अल्मा कबूतरी' में जांलिया की हत्या पर क्रुद्ध होकर सरमन मंसा के विरुद्ध आवाज़ उठाने का साहस दिखाया। कदम ने मंसा के बच्चे को जन्म दिया। बच्चे के जश्न के अवसर मंसा ने दो बोरे चावल और एक पालना भेज दिया। जश्न के बाद कदम ने उन्हें वापस भेज दिया। उसने अपना विद्रोह इसप्रकार प्रकट किया।

भूरी कबूतरी एक विद्रोहिणी कबूतरी थी, वह अपने पति के साथ कज्जा लोगों के वेष धारण कर नेहरुजी के भाषण सुनने केलिए झाँसी गयी। बाद में पुलिस द्वारा वीरसिंह मारा गया। उसके इच्छानुसार उसने अपने बेटे रामसिंह को पढ़ाने का निर्णय लिया। वह उसे पढ़ा-लिखाकर कचहरी के दरवाज़े पर खड़ा करना चाहती थी। बाद में रामसिंह ने राणा को गोरामछिया लेकर पढ़ाने लगा और अपनी बेटी अल्मा का दायित्व उस पर सौंपना चाहा। लेकिन उसे पुलिस का दलाल समझकर अपनी जाति की रक्षा केलिए राणा अल्मा को छोड़कर वहाँ से भाग गया।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह विदित होता है कि दलितों का स्थान अब भी हाशिए पर है। वे अपनी अस्मिता केलिए थोड़ा संघर्ष करने लगे। लेकिन मुख्यधारा की ओर ले जाने केलिए संपूर्ण जनता को एकसाथ लड़ना पड़ेगा। उन्हें मुख्यधारा की ओर ले जाने का दायित्व संपूर्ण राष्ट्र का है। यहाँ जन्म लेनेवाले प्रत्येक नागरिक को सभी-प्रकार के स्वातंत्र्य के साथ जीने का अधिकार है। कुछ लोगों को अपराधि कहकर, कुछ को दलित कहकर शोषण करने की जो प्रवृत्ति है वह सदा उपेक्षणीय है। इस सत्य का खुलासा मैत्रेयी पुष्पा ने अपने कथा-साहित्य के द्वारा किया है।

अध्याय-5

मैत्रेयीपुष्पा के कथा-साहित्य में शिल्प का नया आयाम

मैत्रेयीपुष्पा के कथा-साहित्य में शिल्प का नया आयाम

कथासाहित्य का शिल्प

शिल्प यह तत्व है जिसके द्वारा रचना की विशिष्टता का उद्‌घाटन होता है। लेखक जिन-जिन तत्वों से विषयवस्तु तैयार करता है उन सबका समावेश शिल्प में होना चाहिए। कथाकार रचनाकार के साथ शिल्प भी है। समाज में साधारण प्रतीत होनेवाली घटनाएँ, संवेदना और कल्पना के संस्पर्श द्‌वारा प्रभावी ढंग से नवीनतम सौंदर्य देकर पाठकों के हृदय तक पहुँचाने में कथाकार की सफ़लता है। कथ्य, पात्र-परिकल्पना, थल-काल, संवाद, भाषा और शैली को शिल्प-पक्ष के प्रमुख अंग माने जाते हैं।

कथ्य

कथ्य कथासाहित्य की आधारशिला है। कथासाहित्य का कथ्य पाठकों की बिखरी हुई भावनाओं को एकत्रित करके अपने उद्‌देश्य की ओर ले जाने में सक्षम है। कथाकार कई उपकथाओं और प्रासंगिक कथाओं का आयोजन मुख्य कथा के साथ समर्थ रूप से आदि से अंत तक ले जाने का प्रयास करता है। कथ्य को उचित ढंग से प्रस्तुत करने का रचना-कौशल लेखक की खासियत है। कथ्य की रोचकता, संबंधता सच्चाई और प्रासंगिकता प्रत्येक कथा का वैशिष्ट्य है।

पात्र-परिकल्पना

कथा के विकास केलिए योग्य पात्र-परिकल्पना का विशेष महत्व है। किसी भी रचना में पात्र-नियोजन पात्रों के चरित्र के निर्वाह पर निर्भर करता है। कहानी में प्रमुख पात्रों की संख्या एक या दो होती हैं, परंतु सहायक पात्रों का नियोजन भी होता है। उपन्यास में भी प्रमुख पात्रों की संख्या कम होती है और उपकथाओं द्वारा सहायक पात्रों का नियोजन ज्यादा ही होता है। उपन्यास संम्राट प्रेमचंद के अनुसार उपन्यास में चरित्र-चित्रण की प्रमुखता है। कथासाहित्य को मनोवैज्ञानिक बनाने में पात्रों की भूमिका उल्लेखनीय है।

थल-काल

कथा-साहित्य के प्रारंभ से ही थल और काल के चित्रण का महत्व अनिषेध्य रूप से बना हुआ है। समाज के आचरण, रूढ़ियां, परंपराएँ, खान-पान, पोशाक, रहन-सहन, खेती-बाड़ी, व्यवसाय आदि की समकालीन स्थिति का बोध साहित्य के माध्यम से होता है तो यह केवल थल-काल के समन्वय से संभव हो सकता है।

संवाद

कथा के विकास, पात्रों के चरित्र-चित्रण, वातावरण सृष्टि तथा उद्देशय की पूर्ति केलिए संवाद का महत्व विशेष उल्लेखनीय हैं। संवाद से पात्रों की मानसिक स्थितियों का विवेचन और उसका संप्रेक्षण तथा कथा-गति साध्य होते हैं। पात्रों के विचारों और भावों की अभिव्यक्ति अत्यन्त

स्वाभाविक ढंग से होना अनिवार्य है। संक्षिप्त और मार्मिक संवाद में निर्भर है रचनाओं की सफलता। कथा-वस्तु और कथा-गति के संबंद्ध में पाठकों की उत्सुकता बढ़ाने में संवाद सक्षम है।

भाषा और शैली

भाषा के बिना साहित्य संभव नहीं होता। जिसप्रकार लयात्मक संगीत में स्वर का समुचित संयोग हो रहा है उसीप्रकार कथा साहित्य में परिवेश के अनुकूल उचित भाषा का प्रयोग होना चाहिए। भाषा में भावों की अभिव्यक्ति और विचारों की संप्रेषणीयता सरल रूप में निहित है। भाषा को परिप्रेक्ष्यानुकूल और पात्रानुकूल होना चाहिए। कथा साहित्य की भाषा में प्रभावात्मकता, सांकेतिकता, चित्रात्मकता, भावात्मकता, नाटकीयता, व्यंग्यात्मकता और स्थानीयता के गुण सम्मिलित होना चाहिए।

साहित्य में रोचकता और संप्रेषणीयता लाने में शैली का प्रयोग साहित्यकार करता है। हर एक लेखक की अपनी अपनी शैली होती है। शैली कई प्रकार की होती है - वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, आत्मकथात्मक, नाटकीय, डायरी, पत्र, स्वप्न, काव्यात्मक, पूर्व-दीप्ति, मनोवश्लेषणात्मक आदि। कथाकार इन शैलियों का यथोचित प्रयोग करता है।

मैत्रेयीजी की कहानियों में शिल्प का नया आयाम

कथ्य

कथानक कहानी का मूलतत्व है। कहानी में मैत्रेयीजी ने एक या दो घटनाओं के आधार पर कलात्मक ढंग से, कल्पना की सहायता से

नारियों तथा उपेक्षितों के यथार्थ जीवन का चित्रण किया है। सुसंगठित कथ्य द्वारा मैत्रेयीजी आसानी से अपने लक्ष्य पर पहुँचती हैं। कथ्य की रोचकता, संक्षिप्तता और भावुकता की दृष्टि से लेखिका की कहानियों का शिल्प-पक्ष उच्च कोटि पर है।

मैत्रेयीजी ने नारी शोषण और शोषण के प्रति विद्रोह को कहानी के केंद्र में रखकर रचना की है। 'अपने-अपने आकाश' नामक कहानी में परिवार में शोषित एक वृद्ध माँ की ज़िंदगी को कथ्य के रूप में स्वीकार किया गया है। उसका शोषण करनेवाले उसके बेटे और बहुएँ हैं, जिन्होंने उनकी घर-जायदाद जबरदस्ती से हस्ताक्षर कराकर हड़प लिया है। और एक बेटे के यहाँ चार महीने तक रहने की शर्त में उसे दिल्ली ले गया। आखिर बेटों ने उसे बंग्लौर के एक आश्रम भेजने का प्रबंध किया।

एक माँ की शोषण कहनेवाली और एक कहानी है 'चिह्नार'। इसकी नायिका सरजू को अपनी बेटी की नौकरानी बननी पड़ी। बेटी का अधिकार विद्या जिज्जी ने छीन लिया। अकेली ओर पति द्वारा उपेक्षित सरजू की कहानी द्वारा लेखिका ने माँ के अधिकार से भी वंचित अनपढ़ ग्रामीण नारियों की विडंबनाओं का चित्रण किया है।

अधिकांश ग्रामीण नारियाँ अनपढ़ है, पराए घर की अमानत समझकर नारियों को पढाना बेकार माना जाता है। 'बेटी' कहानी की मुन्नी पाँचों भाइयों की एकमात्र बहन होने पर भी शिक्षा से वंचित थी। लड़की पराए घर के दलिद्दर है, तो लड़के बुढ़ापे की लाठी है। लेकिन कहानी के

अंत में पाँचों भाई पढ़े लिखे होकर घर छोडकर चले गये। माँ के संरक्षण केलिए मुन्नी अपनी बेटी को लेकर आयी।

मुन्नी इसलिए शिक्षा से वंचित थी क्योंकि वह लड़की थी। लेखिका ने अभिव्यक्त किया है कि लडकियों का शोषण माँ की कोख से प्रारंभ होता है। 'पगला गई है भगवती' में भागो की दीदी की पुत्री अनसूया लडकी होने कारण माँ के प्यार से वंचित थी, इसलिए भागो ने उसका पालन-पोषण किया। उसी तरह 'तुम किसकी हो बिन्नी?' की बिन्नी माँ का तीसरा बच्चा है। पहले दोनों लड़कियाँ होने के कारण बिन्नी को स्वीकार करना माँ के लिए असाध्य था। अनसूया और बिन्नी एक ही कारण से उपेक्षिता बन गई है लेकिन कथ्य में लेखिका ने अंतर प्रकट किया है।

सिर्फ परिवार में ही नहीं वैवाहिक जीवन में भी नारी शोषण की शिकार बन पड़ी है। मानसिक शारीरिक और आर्थिक तौर से उसको पीड़ाएँ भोगनी पड़ी। 'सहचर' के कथ्य में लेखिका ने छवीली की कहानी बतायी है। नृत्य में निपुण छवीली की शादी बंशी के साथ हुई थी। परंतु पाँव में गेंगरीन होने के कारण उसको एक पाँव काटना पड़ा। साँस ने उसे मायके छोड़ने का सलाह दिया क्योंकि आगे वह घर का काम संभाल नहीं सकेगी। वैवाहिक जीवन में प्रवेश करने पर नारी को अपना व्यक्तित्व नष्ट हो जाएगा। वह सिर्फ पति के गुलाम रखकर पतिव्रता होकर घर के चार दीवारी के अंदर रहना पुरुष वर्चस्व समाज की माँग है। 'मन नाहिं दस बीस' कहानी में लेखिका ने इस कथ्य को केन्द्र में रखकर चंदना की विड़ंबना जन्य ज़िंदगी का चित्रण किया है। चंदना उच्च जाति की लडकी थी और

शादी के पहले वह स्वराज वर्मा को प्यार करती थी। स्वराज दलित होने के कारण परिवार वालों ने उसे गाँव से झाँसी भेज दिया। चन्दना की शादी के बाद स्वराज के नाम पति को शक लगा। बाद में देवर के निरंतर बलात्कार से से रक्षा केलिए उसने भोजन में जहर मिलाकर उसको दिया और वही भोजन खाकर पति भी मर गया, चंदना जेल गयी। लेखिका ने एक बात अभिव्यक्त करने में भूल नहीं गयी कि चंदना जेल से बाहर आकर श्रीमती कल्याणीदेवी द्वारा संचालित महिला विकास केन्द्र में काम करने लगी।

'कृतज्ञ' कहानी का कथ्य तो दूसरों से भिन्न शहर में रहनेवाले अनुपम और पत्नी वसुधा के आपसी द्वन्द्व है। शहर में रहनेवाले और पढे लिखे अनुपम ने पत्नी को गुलाम माना। वसुधा के गाँव की पड़ोसवाली नानी, जो शहर के अस्पताल में इलाज के लिए आयी थी, को देखने केलिए अनुपम ने उसे नहीं भेजा। शहरवालों की स्वार्थपरता और गांववालों का भोलेपन यहाँ स्पष्ट हैं। नानी के बेटा मुरली ने बरसों बाद बैंक से लॉन मिलाने केलिए अनुपम की मदद की। शहर के परिप्रेक्ष्य में लिखी गयी 'बोझ' कहानी के तीन वर्षीय बालक अक्षय अपने बाल-सुलभ क्रीडाओं से वंचित था, क्योंकि माँ-बाप काम पर जाते समय उसे डे-केयर में भेजेगा वहाँ से उसको पीड़ाएँ सहनी पड़ी।

समाज में नारी का शोषण के विभिन्न तरीके हमारे सामने लाने में मैत्रेयीजी की कहानियाँ सक्षम दिखाई पड़ती हैं। 'आक्षेप' कहानी की रमिया, 'सिस्टर' कहानी की सिस्टर डोरोथी डिसूसा की ज़िंदगी इसका मिसाल है। 'आक्षेप' का कथ्य तो अनब्याही और अनाथ रमिया का विद्रोह

है। गांव के दुखितों और बच्चों की मदद केलिए वह हमेशा हाज़िर है। समाज में उसकी बदनामी फैलने लगी। लेकिन आक्षेप की तीर की उसने परवाह ही नहीं की। 'सिस्टर' कहानी का कथ्य तो ए अकेली अविवाहिता समाज सेविका की ज़िंदगी पर आधारित है। उसने अपने परिवार का सारा बोझ कंधों पर उठाकर ज़िंदगी के सारे सुख का त्याग दिया। फिर भी उम्र पार करने पर, अविवाहिता रहने के कारण कोई बंधु-बल न होने के कारण समाज ने उसने अकेला ही छोड़ दिया। 'सेंध' कहानी में ग्रामीण किसानों के जीवन संघर्ष और समाजसेविका तथा ग्रामसेविका कलावति के शोषण की अभिव्यक्ति है कलावति ग्रामसेविका का काम त्यागकर पूरी तरह समाज सेविका बन गयी। भूदान यज्ञ के प्रचारर में भाग लिया। चकबंदी के खिलाफ़ प्रयास किया। परंतु अंत में 'गांव के गरीबों से रिश्वत मांगकर इमारत बननेवाली' का अपयश प्राप्त किया।

आजकल नारीशोषण शैक्षिक क्षेत्र में कम नहीं है। अध्यापकों द्वारा लड़की का अपमान और शारीरिक शोषण से संबंधित कई घटनाएँ आज रिपोर्ट की जा रही हैं। शारीरिक शोषण सिर्फ कोलेजों में नहीं 'किन्टर गार्टन' से ही शुरू होता है, हमारे पुरुष वर्ग का नैतिक स्तर की बिगड़पन दिखाने केलिए लेखिका ने 'आज फूल नहीं खिलते' कहानी लिखई है। विद्या मंदिर के छात्रा झरना की कॉपी बुक में अश्लील शब्द लिखनेवाले गुप्तासार और एक्स्ट्रा क्लास के नाम पर उसे बलात्कार करनेवाले प्रिन्सिपल साब समकालीनता के प्रतिनिधि पात्र है।

औरत का संरक्षण, सुरक्षा और समान की ज़िंदगी पुरुष देता हे तो निश्चित ही किसी न किसी रूप में वह अपने दिये हुए का बदला चाहता है। अर्थात् पुरुष वर्चस्व का स्त्री जीवन पर आधिपत्य। 'रायप्रवीण' में लेखिका ने ऐतिहासिक और समसामयिक संदर्भों का मिश्रण कर यह प्रकट किया है। रायप्रवीण, जिसके बचपन का नाम सावित्री था, ओच्छा नरेश के अंतपुर वेश्या ने अपने राज्य की रक्षा केलिए मुगल सम्राट अकबर का आमंत्रण स्वीकार किया मगर हमारे राजनैतिक मददगार सरकारी सहायता के नाम पर ऐसी मनमानी करते हैं, जैसे कि रायप्रवीण के भोग की इच्छा रखनेवाला मुगल सम्राट अकबर तक न कर पाया। मुगलों की अपेक्षा आज के प्रजातांत्रिक नेताओं से व्यवहार में बर्बरता का बोलबाला था।

राजनैतिक क्षेत्र में नारियों और दलितों का शोषण, उनकी गैरहाज़िरी एक नई बात नहीं। यह तथ्य प्रकट करने केलिए लेखिका ने राजनैतिकता में प्रवेश कर अपमान भोगनेवाली नारियों की कथा विभिन्न कहानियों में कथ्य के रूप में स्वीकार की है। 'बहेलिए', 'फैसला' 'सेंध' 'शतरंज के खिलाड़ी' 'प्रेम भाई एण्ड पार्टी' इसके उदाहरण है।

'बहेलिये' की गिरिजा चुनाव में उम्मीदवार बनी थी और नारी होने के कारण प्रस्तुत क्षेत्र में उसको कई समस्याएँ झेलनी पड़ीं। 'फैसला' कहानी की वसुमति प्रधानिन होने पर भी पति का गुलाम था। 'सेंध' की कलावति को दिन रात भूदान-प्रस्थान और किसानों केलिए प्रयत्नरत होने पर भी बदनामी के शिकार बन पड़ी। 'शतरंज के खिलाडी' में दलित नारी को अपने स्वार्थता और अधिकार केलिए इस्तेमाल करनेवाले उच्चवर्ग की

कथा है और 'प्रेम भाई एण्ड पार्टी' में एक शादी में आने के रिश्वत मांगनेवाला एक्स. एम.एल.ए. सुजानसिंह की कहानी है।

उपयुक्त विषयों के अलावा लेखिका ने 'हवा बदल चुकी है' में एक गांधीवादी प्रवर्तक सुजानसिंह की कहानी बतायी है तो "सफर के बीच में गिरिराज के प्रशासनिक सेवा के पदवी की दुरुपयोग करनेवाले बंधुजनों के कौशल का वर्णन किया है। 'केतकी' का कथ्य तो अपने बलात्कार करनेवाले ग्रामप्रमुख गन्धर्व सिंह के विरुद्ध ललकार करनेवाली केतकी की कथा है। 'ललमनियाँ' में बारातों में ललमनियाँ नृत्य करके ज़िंदगी बितानेवाली पति-उपेक्षिता मोहरो और बेटी पिंडकुल की कथा है। आध्यात्मिकता के नाम पर खोखले सन्यास ग्रहण करनेवाले स्वामी वर्ग के प्रतिनिधि है 'बिछुडे हुए' का शतानंद। सांप्रदायिकता से उत्पन्न आतंकवाद के बुरे प्रभाव और धार्मिक एकता के भले प्रभाव का चित्रण 'छाँह' का कथ्य है तो 'साँप सीढ़ी' राजन रिश्वत देकर नौकरी पाने में संकोच न दिखानेवाली नयी पीढ़ी का प्रतिनिधि पात्र है। ग्रामीण संस्कृति का चित्रण 'रास' का कथ्य है तो 'उज़्रदारी' और 'गोमा हँसती है' में कथ्य के केन्द्र में नारी समस्याएँ है।

पात्र परिकल्पना

कहानी लघु आकार वाली रचना होने के कारण उसमें ज़्यादा पात्रों का नियोजन नहीं होता। कहानी में प्रमुख पात्र तो एक या दो ही होते हैं। लेकिन सहायक पात्रों का नियोजन भी प्रमुख पात्रों के चारित्रिक विकास केलिए होता है। मैत्रेयीजी की कहानियों में समकालीन यथार्थ और उपेक्षित,

पीडित लोगों और नारियों की विडंबनाओं और शोषण के चित्रण और साथ ही साथ विद्रोह भी दिखाई पड़ते हैं।

'अपना अपना आकाश' में लेखिका ने कैलाशोदेवी के प्रस्तुतीकरण द्वारा वर्तमान जिंदगी में एक अनपढ़ विधवा माँ का शोषण के साथ पिछली पीढ़ी की एक ग्रामीण बहु की सफ़ल ज़िंदगी का चित्रण किया है। कहानी के अंत में उसने दिल्ली से भागकार अपने गांव आयी और बेटों के शोषण से मुक्ति पाई। 'उज्रदारी' भी विधवा नारी की कहानी है। बचपन में विधवा बन गयी नारी है 'पगला गयी है भगवती' की भागो। अपनी बेटी को तिरस्कार करनेवाले परिवार के विरुद्ध बेटे की शादी के अवसर पर वह पत्थर कंकड़ फेंकती थी। सच में वह पागल नहीं थी, लेकिन अमने मन में दमित विद्रोह का प्रकटीकरण ही उसने किया था। 'बहेलिये' की नायिका गिरजा का विवाह कच्ची उम्र में एक विधुर पेश्कार के साथ हुआ और एक बरसात के अवसर उसके ऊपर पेड़ गिरा और वह मर गया। बाद में गिरजा ने स्वयं पढ़ी राजनीति में एक पद भी प्राप्त किया। गिरजा के पात्र-चित्रण द्वारा लेखिका ने अभिव्यक्त किया है कि नारी की कामयाबी शिक्षा में है और विधवा बनने पर घर के अंदर बैठकर ज़िंदगी बरबाद करने की आवश्यकता नहीं है।

वैवाहिक जीवन में शोषण भोगनेवाली नारियों की समस्याएँ स्पष्ट करने केलिए मैत्रेयीजी ने अपनी कहानियों द्वा खूब प्रयत्न किया।

'सहचर' कहानी में लेखिका ने छवीली को नायिका बना है। गांव की लड़कियों को ज़्यादातर रूप से अनपढ़ ही रहना पड़ा। लेकिन छवीली

को नृत्य पढ़ने का अवसर ही मिला। बाद में वह बंशी की पत्नी बन गयी। पैर में गेंगरीन होने के कारण उसका एक पाँव काटना पड़ा और ससुरालवाले ने उसे मायके छोड़ दिया, क्योंकि घर के काम संभालने के आगे वह असफल रहेगी। ससुराल में लड़की का स्थान सिर्फ एक नौकरानी का है।

चंदना 'मन नाहिं दस बीस' की नायिका है। वह स्वराज वर्मा से प्यार करी थी। स्वराज दलित होने के कारण उसे गांव से निकाल दिया गया और चंदना की शादी जल्दी से करायी गई। लेकिन पति के मन में उसके पहले प्यार के बारे में शक था। उसका देवर न शारीरिक शोषण भी करने लगा। एक दिन उसने भोजन में जहर मिलाकर उसे मार डाला, पति भी साथ भोजन खाने के कारण मर गया। आत्म रक्षा और मान की रक्षा केलिए उसकी हत्या करनी पड़ी। सज़ा समाप्त होने पर वह श्रीमती कल्याणीदेवी द्वारा संचलित महिला विकास केंद्र में काम करने लगी। चंदना के पात्र-चित्रीकरण द्वारा लेखिका का उद्देश्य यह है कि ऐसी कोई स्थिति में नारी ज़रूर अपराध बोध से बाहर आकार कामयाबी रहनी ही बेहत्तर है।

वसुधा का चरित्र-चित्रण द्वारा मैत्रेयी ने यह बात ही अभिव्यक्त की कि नारी पढ़ी-लिखी होने पर भी, शहर में रहने पर भी आर्थिक स्वतंत्रता न होने पर पति का गुलाम रहेगी। पुरुष केंद्रीय समाज में परिवार का गढ़न उसके सुख-साज के अनुसार होगा। नारी पढी-लिखी होने पर भी उसका स्थान दोयम-दर्जे का है। वहाँ नारी का हिस्सा अपनी आज़ादी और व्यक्तित्व खोकर पुरुषों की नौकरानी बनकर जीने का है। अपनी पड़ोसवाली चाची गांव से शहर के एक अस्पताल, जो वसुधा के घर के पास है, इलजा केलिए आने पर उसको देखने की अनुमति अनुपम ने उसे नहीं दी।

'फैसला' कहानी की वसुमती भी पति का गुलाम थी। गांव की प्रधानित होने पर भी रनवीर ने उसे घर के बाहर जाने नहीं दिया। ईसुरिया जो गड़रिया की पत्नी थी उसको भी उससे ज़्यादा आत्मविश्वास और आज़ादी थी। ईसरिया की प्रेरणा पाकर वसुमती ने एक बार पति का विरोध किया। प्रमुख के चुनाव में उसने अपना वोट रनवीर को नहीं दिया और एक वोट की कमी पर रनवीर हार गया।

'रायप्रवीण' में लेखिका ने रायप्रवीण का पात्र इतिहास से लिया और गृहस्थ स्त्रियों की अपेक्षा वे स्त्रियां ज़्यादा स्वतंत्र होता है जो न सुरक्षा चाहती हैं, न संरक्षण की मोहताज होती हैं। ऐसी स्त्रियों में "वेश्या' प्रमुख रूप में आती है, जो अपने शरीर और समय का अपनी तरह से इस्तेमाल होने देती है। रायप्रवीण, जिसका बचपन का नाम सावित्री था, ओच्छा नरेश के दरबार की राजनर्तकी थी। अपने राज्य की रक्षा केलिए 'वेश्या' होना स्वीकार करते हुए अकबर का निमंत्रण स्वीकार किया। समय के स्तर पर सराहनीय होने केलिए आज के राजनैतिक भ्रष्टाचार की खुलासा 'सावित्री' के चित्रण द्वारा किया गया है। एक बाढ़ के अवसर पर अपने गांववालों केलिए अन्न माँगने केलिए राहत कैंप गयी सावित्री को अन्न के बदले वहाँ के अफ़सरों को अपना शरीर देना पड़ा। मुगलों की अपेक्षा आजके प्रजातांत्रिक नेताओं के व्यवहार में बर्बरता का बोलबाला गौरतलब है।

माँ के प्यार से वंचित रहनेवाली लड़कियों की पीड़ाएं दिखाने केलिए मैत्रेयीजी ने बिन्नी ('तुम किसकी हो बिन्नी?') अनसूया ('पागल गयी है भगवती') मुन्नी ('बेटी') आदि पात्रों का रचना की।

'भँवर' कहानी की विरमा पति केशव द्वारा उपेक्षित नारी थी। केशव ने उसे छोड़कर दूसरीर शादी की। 'ललमनियाँ' की मोहरो की नियति भी विरमा से भिन्न नहीं थी। विरमा और मोहरो को अपनी नियति का गुलाम रहना पड़ा।

समाज द्वारा शोषित नारियों की समस्याएँ दिखाने केलिए लेखिका ने कई पात्रों का चित्रण किया है। शोषण के साथ उनका विद्रोह का खुलासा भी किया गया। 'आक्षेप' कहानी की रमिया, 'सिस्टर' कहानी की डोरोथी डिसूसा, 'सेंध' कहानी की कलावती, 'आज फूल नहीं खिलते' की झरना, 'केतकी' कहानी की केतकी आदि पात्र इसके उदाहरण है।

'हवा बदल चुकी' में लेखिका ने सुजानसिंह का पात्र गाँधीवाद विचारधारा पर आस्था रखनेवालों का प्रतीक है। सामसामयिक वातावरण में गाँधीवादी चिंताधारा कभी नहीं जीत पाएगा। इसलिए सुजानसिंह समाज द्वारा दमित और पीड़ित रहा। 'सफर के बीच' का गिरिराज ने अश्रांत परिश्रम करके प्रशासनिक सेवा में उच्च पद प्राप्त किया। लेकिन बिरजू भैया उसके नाम पर कई बार सुविधाएँ अपनाने लगा और गिरराज का अपमान भी। आजकल हमारे समाज में बिरजु भैया जैसे पात्र दिखाई पड़ते हैं।

'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी का पीतमसिंह और 'प्रेम बाई आण्ड पार्टी' का सौदान सिंह समकालीन सत्ताधारियों का प्रतीक है। 'साँप-सीढ़ी' कहानी के राजन की पात्र-रचना रिश्वत देकर नौकरी पाने में संकोच ने दिखानेवाली नई-पीढ़ी को सूचित करने केलिए की गई है।

कामता और दुर्गो, ('शतरंज के खिलाड़ी') दलित होने के कारम ज़मींदार वर्ग के गुलाम बनना पड़ा। सुजानसिंह दलित होने के कारण चंदन की शादी नहीं कर सकता (मन नाहिं दस बीस)। दलितों के प्रति समाज का शोषण अभिव्यक्त करने केलिए लेखिका ने उपर्युक्त पात्रों की सृष्टि की।

लेखिका ने अपने नारी पात्रों के चरित्र-चित्रण द्वारा यह आह्वान दिया है कि नारी किसी का गुलाम नहीं है। यह पुरुष के समकक्ष है। आज समाज में कायम रहनेवाली नारी-पुरुष संबंधी धारणा के पीछे पुरुषाधिपत्य मन ज़रूर दिखाई पड़ता है। केतकी, रमिया, चंदना, झरना, ईसुरिया, भागो, दुर्गो, रायप्रवीण आदि नारी पात्रों के चित्रण द्वारा लेखिका का उद्देश्य है कि ज़िंदगी में चुनौतियों के सामना करने पर आत्मविश्वास न खोकर आगे बढ़ने का सलाह देना।

'छाँह' कहानी में लेखिका ने बत्तासो, सन्नोफकीर और ददुआ के चित्रण द्वारा धार्मिक एकता की भावना दिखाने की कोशिश की है। 'बिछुडे हुए' का स्वामी शतानंद आध्यात्मिकता के नाम पर खोखले सन्यास ग्रहण करनेवाले झूठे खामियों का प्रतीक है जो आज के समाज में ज़्यादातर दिखाई पड़ते हैं।

मैत्रेयी जी की कहानियों में समकालीन परिप्रेक्षय की समस्याओं जैसे नारी शोषण, दलित शोषण, राजनैतिक क्षेत्र के भ्रष्टाचार, आदि के पक्षधर केलिए और इनके विरुद्ध विद्रोह दिखाने के समुचित पात्रों की सृष्टि हुई है।

थल-काल

थल-काल के बिना एक घटना नहीं घटित होती। मनुष्य जिस माहौल में रहता है उस माहौल का प्रभाव उस पर होना स्वाभाविक है। कोई व्यक्ति या पात्र अपने परिवेश से बिछुड़कर नहीं रह सकता। 'थल' माने कहानी की पृष्ठभूमि है तो 'काल' माने समय है। मैत्रेयीजी ज़्यादातर कहानियों की पृष्ठभूमि तो गांव है। प्रकृति से मिल-जुलकर रहनेवाले यथार्थ भारतीय का चित्रण करने में लेखिका ने समुचित परिवेश ही चुन लिया है।

मैत्रेयीजी की कहानियों की खासियत है कि उनका ग्रामीण परिप्रेक्ष्य और घटनाओं की प्रासंगिकता। आजकल के पढ़े-लिखे लोग नौकरी की खोज में अपने गांव छोड़कर मुंबई, दिल्ली जैसे शहरों में जाते हैं और परिवार के साथ वहाँ रहते हैं। उनके संबंध गांव, घर, रिश्तेदार को कोई गरिमा नहीं है। घर के बुजुर्ग लोग-बोझ जैसा है। इसलिए वृद्ध माँ-बाप को कोई नायिका बनाकर लेखिका ने 'अपना अपना आकाश' कहानी की रचना की, जिसमें ग्रामीण परिवेश के साथ शहरीय वातावरण का चित्रण भी लेखिका ने किया है।

गांव में विधवा नारी की स्थिति अत्यंत शोचनीय है। उसे लोग पति की मृत्यु का अपराधी मानकर अपमानित करते हैं और कोई शुभ अवसर में भाग लेने की अनुमति ही नहीं देते हैं। शहरों में नारियों की इस अवस्था में परिवर्तन आयी है। लेकिन गांव में विधवा की अवस्था दयनीय है। लेखिका ने 'बहेलिया', 'भँवर' 'पगला गयी है भगवती' 'उज़्रदारी' आदि

कहानियों में ग्रामीण वातावरण में विधवा नारियों की विडंबनाओं का उल्लेख किया है।

दाम्पत्य जीवन में पुरुष की स्वार्थता और ही प्रकट होते हैं। उनके विश्वास और विचार के अनुसार अधिकांश नारियां गुलामी के शिकार हैं। विवाह से पुरुष को एक स्थिर नौकरानी मिलती है। अपने घर के सारे काम करने केलिए और अपनी कामोच्छा की पूर्ति केलिए वह नारी का इस्तेमाल करता है। अपनी इच्छा की पूर्ति करके वह उसे रास्ते में छोड़कर दूसरी की खोज में निकलेगा। 'भँवर' कहानी की विरमा और 'ललमनियाँ' कहानी की मोहरो पति द्वारा उपेक्षित नारियाँ हैं। ललमतियाँ ग्रामीण संस्कृति का एक रोचक अंग है जो शादी के अवसर पर किये जानेवाला नृत्य-रूप है।

समाजा में नारी की अवस्था एक गुलाम जैसी है। उनको अपना व्यक्तित्व और आवाज़ नहीं होनी चाहिए। अथवा शोषण और अपमान के प्रति विद्रोह करें तो ज़रूर अपय सुनना पड़ेगा। 'आक्षेप' 'सिस्टर' 'सेंध' 'आज फूल नहीं खिलते' 'रायप्रवीण' 'केतकी' नामक कहानियों में जिन नारियों का चित्रण लेखिका ने किया है उसका अकेलापन, बदनामी और शारीरिक शोषण भोगना पड़ा। 'आक्षेप' कहानी रमिया और सेंध' कहानी की कलावति, दोनों को अपने समाज की सेवा करने पर भी बदनामी सुननी पड़ी। 'आज फूल नहीं खिलते की झरना का अपमान उसके गुरुजनों ने किया। आजकल अध्यापकों द्वारा छात्रों का शारीरिक शोषण के कई घटनाएँ हम देखते हैं। 'रायप्रवीण' की सावित्री का शारीरिक शोषण सरकारी अफ़सरों ने और केतकी का बलात्कार गांव के प्रधान, पिता के

समउम्रवाले गंधर्वसिंह ने किया। मैत्रेयी जी ने अपने पात्रों द्वारार जो शोषण की कहानी कही है, यह तो कल्पना से ओतप्रोत नहीं, समाज की असलीयत है।

अब गांव राजनीतिक भ्रष्टाचार की उर्वर भूमि है। क्योंकि वहाँ के अधिकांश निवासी अनपढ़ थे। उनको राजनीति के चंगुल फँसना आसान है। वे प्रतिक्रिया नहीं करेंगे, सत्ताधारियों उनके संबंध में ईश्वर समान है। 'शतरंज के खिलाड़ी' 'फैसला' 'प्रेम भाई आण्ड पार्टी' 'हवा बदल चुकी है' आदि मैत्रेयीजी की कहानियाँ इसके सच्चे मिसाल हैं।

गांव की संस्कृति की अभिव्यक्ति के उपलब्ध में लेखिका ने 'ललमनियाँ' और 'रास' की रचना की। 'बोझ' और 'कृतज्ञ' में शहरी वातावरण लाया गया है। फिर भी उनमें ग्राम की गंध भी है।

मैत्रेयीजी की कहानियाँ में प्रस्तुत पात्र उनकी ज़िंदगी से लिए गए थे, इसलिए उनमें दूसरे कहानीकारों से ज़्यादा और चेतना ज़रूर दिखाई पड़ते हैं। कथ्य के अनुसार वातावरण की सृष्टि में लेखिका ने अधिक ध्यान दिया है और थल और काल का उचित और समन्वय से मैत्रेयीजी की कहानियों देश काल की सीमा को कभी कभी अतिक्रमण करती है।

संवाद

व्यावहारिक जीवन में विचारों और भावों की अभिव्यक्ति केलिए संवाद अनिवार्य तत्व है। कहानी में विस्तृत कथोपकथन या संवाद की आवश्यकता ही नहीं। इसलिए तो संक्षिप्त और मार्मिक संवाद मैत्रेयीजी की कहानियों की विशेषता है। पात्रों से चरित्र स्पष्ट करने में संवाद से ज़्यादा

और कोई अभिव्यक्ति पक्ष नहीं है। सिर्फ वर्णनात्मकता से कहानी में भाषा का स्वाभाविक प्रभाव में रुकावट आ जाएगी। इसलिए लेखिका ने पात्रों की भावाभिव्यक्ति और कथागति के सुगम प्रवाह के लिए उचित संवाद का समावेश कहानियों में किया है।

साधारण जीवन में हम जो बातचीत करते हैं उसमें हमारे मनोभाव व चारित्रिक विशेषताएँ तो प्रकट होती ही है। मैत्रेयीजी ने संवादों का व्यवहार पात्रों के चरित्र-निर्माण में योग देने केलिए किया है।

नारी शोषण के यथावथ्य की खुलासा केलिए लिखी गयी मैत्रेयीजी की कहानियों में पात्रों का जीवन संघर्ष का चित्रण उन्होंने संवाद के द्वारा अनायास ही किया था। 'अपना अपना आकाश' कहानी में कैलाशोदेवी और बेटे के संवाद से पूरे वृद्ध-समाज का शोषण की अभिव्यक्ति है।

"अब जाय रहयौ हूँ अम्माजी, कछू कहनी तौ नाँय?"

"का कहनी है रे मोय अब।"

"बैसें अब तौ तुम बंगलौर जाय रही हौ-सो खूब बजइयौ घंटरिया और खूब मनइयौ अपने ठाकुर जी। भजन-कीर्तन की पूरी छूट है, वहाँ कोई न रोकै तुम्हें।"

"कहाँ रे.... कहाँ की बात कहि रहयौ है?

"मई बंगलौर की, तुम्हें नाय पतौ सो? राति दोऊ भइया बात करि रहे कि बौहत परेसान करन लगी है अम्मा। सब बहुएँ दुखी है गयी हैं इनते, सो इन्हें मईं करि आओ। खच्चा की बात है सो भेजत रहिंगे। आसरम में

जाऔगी अम्मा जी तुम। मैं ने सबरी बात सोनू भइया तो पूछि लई। परि अकेली परी-परी अकुताई जाऔगी। वहाँ न कोई अपनौ न जामि-पहचानि कौ।"

"लल्लू, आज मति जाय बेटा.... मेरी अकीरी विनती सुन सौ" एक दिन की केवल एक दिन... बस्स।"[1]

संवादों के द्वारा कथा में चुस्ती व सजीवता उत्पन्न होती है, इसलिए मैत्रेयीजी उनका समुचित व्यवहार करती हैं।

'मन नॉहि दस-बीस' कहानी में चंदना और स्वराज की संवाद से समझते हैं कि दोनों में सामाजिक शोषण से लडने की ताकत थी साथ ही साथ ज़िंदगी के दूसरे तौर पर वे फिर एकत्रित हो गए और यह अंदाज़ा भी होकी कि दोनों एक साथ जीने का निर्णय भी लिया है।

"चंदना! जो कुछ भी हुआ उसकेलिए अपराधी.... तुमसे क्षमा माँगने का अधिकारी भी नहीं हूँ।"

"क्षमा किसलिए स्वराज! वह तो हमारी अपनी-अपनी जंग थी... जो तुम्हारी थी, तुमने लड़ी और जो मेरे हिस्से आई, उसे मुझे ही तो लड़ना था, स्वराज! घायल कौन कितना हुआ, जंग में इसका हिसाब होता ही कहाँ है!"

"अब सारे युद्ध समाप्त हो गए चंदना!"[2]

---

1. अपना अपना आकाश (चिह्नार) पृ. 18, 19
2. मन नाहिं दस बीस (चिह्नार) पृ. 65

पात्रानुकूल भाषा द्वारा लेखिका ने जो संक्षिप्त संवाद प्रस्तुत किया है उससे पात्रों के आत्मचरित्र के उद्घाटन की अपेक्षा दूसरे पात्रों के चरित्र के उद्घाटन की प्रवृत्ति अधिक लक्षित होती है। सांप्रदायिकता से उत्पन्न आतंकवाद की परिणति आज हम अनुभव कर रहे हैं। लेखिका ने 'छाँह' कहानी में धार्मिक एकता की भावना स्पष्ट करने केलिए मुस्लीम विधवा बत्तासो और ज़मींदार ददुआ के बीच का संवाद सहायक है।

"ददुआ! तुम्हें तो बुखार..... कछु चाह, पानी.... और जि वेद्व! चों रोय रहयौ है? भूखौ है का?"

वे चुप पड़े रहे।

'ददुआ, तुम मति खाऔ, परि जि बिच्चा! जि का जाने जाति-पाँति' ऊँच-नीच? जाकि अवाज सुनिकें ही, ददुआ, मैं रोटी ले आयी हूँ।

"ददुआ, तुम्हारे ही नाज की रोटी हैं। सब तुम्हारी ही दुआ-असीस।"

धर्म के नाम पर मार-काट और बंब विस्फोट होनेवाले हमारे दिशा में बत्तासो का यह संवाद ज़रूर संदर्भोचित है। मनोभावों व विह्वलता को प्रकट करने वाले धार्मिक और प्रभावशाली संवादों की योजना करने में मैत्रेयीजी की लेखनी सर्वाधिक सशक्त है। उनकी कहानियों में संवादों की योजना जानबूझकर नहीं हुई। स्वाभाविकता से अभिव्यक्त संवाद अनायास ही कथा को गति देने मे समर्थ हुए हैं।

भाषा और शैली

अपनी कहानी जनसाधारण तक पहुँचाने के लक्ष्य में मैत्रेयीजी ने सरल, स्वाभाविक, व्यवहारिक भाषा का प्रयोग किया है। इसमें दुरूहता और क्लिष्टता बिलकुल नहीं दिखाई पड़ती। सांकेतिक, प्रतीकात्मक, बिंबात्मक और चित्रात्मक भाषा के प्रयोग में वे सिद्धहस्त हैं। भाषा की सुगमता और सुबोधता केलिए लेखिका ने थल-काल के अनुसार संस्कृत, उर्दु, अंग्रेज़ी शब्दों का इस्तेमाल किया है।

कथ्य रोचक और संप्रेषणीय बनाने केलिए लेखिका ने अपनी कहानियों में विभिन्न शैली का प्रयोग किया है। आत्मकथात्मक, वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, डायरी, पत्र, नाटकीय आदि तमाम शैलिाों का प्रयोग करके लेखिका ने सफल कहानियों की रचना की। अधिकांश कहानियों की पृष्ठभूमि गांव होने के कारण स्थानीय भाषा का इस्तेमाल लेखिका ने किया है।

संदर्भानुसार संस्कृत, अंग्रेज़ी, उर्दु शब्दों के साथ पात्रानुकूल लेखिका ने कई देहाती शब्दों का प्रयोग किया है। उन्होंने भाषा का प्रभाव बढ़ाने के लिए मुहावरे और कहावतों का प्रयोग भी किया है जिनसे भाषा के सौंदर्य एवं संदर्भ की गहनता पुष्ट होती है।

'बुढ़ापे की लाठी'[1], 'पराए घर का दलिद्दर'[2], अपार अरमानों का सागर'[3], 'मर्मभेदी शर-संधान'[4] जैसे संदर्भोचित प्रयोग प्राप्त है।

---

1. चिह्नार पृ. [1]21, [2]22, [3]30, [4]38

ग्रामीण पात्रों केलिए स्थानीय बोली और पढे-लिखे पात्रों केलिए अंग्रेज़ी और संस्कृत मिश्रित परिमार्जित भाषा का प्रयोग किया गया है। ग्रामीणों की बोलचाल की भाषा का यथातथ्य प्रयोग से मैत्रेयीजी का लक्ष्य तो उनकी संस्कृति और सभ्यता का यथार्थ चित्रण है।

'अपना अपना आकाश' 'बोझ' 'रायप्रवीण' 'अब फूल नहीं खिलते' 'कृतज्ञ' 'सफ़र कि बीच' आदि कहानियों गाँव के साथ शहरीय वातावरण का सामंजस्य भी है। इसलिए प्रस्तुत कहानियों में प्रयुक्त भाषा में अंग्रेज़ी और आधुनिक भाषा का प्रयोग किया गया है। 'बहेलिए', 'मत नाँहि दस बीस' 'आक्षेप' 'फैसला' 'सिस्टर' 'तुम किसकी हो बिन्नी' 'ताला खुला है पापा' 'साँप सीढ़ी' आदि कहानियों में पढ़े-लिखे पात्र हो तो भाषा में भी पात्रानुकूल परिवर्तन लेखिका लायी है। समय के साथ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं धार्मिक परिस्थितियाँ बदलती हैं। लेखिका इन बदलती परिस्थितियों एवं प्रवृत्तियों के चित्रण केलिए नवीन भाषा और शैली का प्रयोग करती हैं। अपनी कहानियों में लेखिका ने ग्रामीण जीवन के संघर्ष के साथ आधुनिक शहरी जीवन की यांत्रिकता खोखलापन आदि के चित्रण केलिए स्थानीय या बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है तो दूसरी तरफ़ विश्लेषणात्मक, आत्मनेपदीय, चेतना-प्रवाह, पूर्वदीप्ति, व्यंग्यात्मक, वर्णनात्मक, संस्मरणीय, पात्रात्मक, डायरी आदि शैलियों को ज़्यादा महत्व दिया है। इन शैलियों को ग्रामीण जीवन की यथार्थता, समकालीन समस्याएं, आधुनिक युग की यांत्रिकता, जड़ता एवं नये जीवन शैली को अभिव्यक्त करने केलिए अपनाया गया है। मैत्रेयीजी ने मन के आंतरिक भावों एवं

बदलते जीवन परिवेश की अभिव्यक्ति केलिए रचना-विधान और भाषा-शैली को उनके अनुरूप ढ़ाला है।

वर्णनात्मक शैली तो पहले से ही प्रयोग करते आ रही है। पात्रों के बाह्य रूप मनो विकार और घटनाओं का सटीक चित्रण इसके द्वारा हुआ है। इससे पात्रों का चरित्र और दृष्टिकोण स्पष्ट होते हैं। रचना का मूल तत्व एवं घटनाओं की अभिव्यक्ति इस शैली के प्रयोग से आकर्षक ढंग से होती है।

"लखिया कैसा अलहड़ बछेडा-सा मिल था उन्हें, इधर-उधर उजबक-सा फिरता, पाँवों पर ओक बहाए। आँखों में कीचड़ और दाँतों पर पीलेपन की परत.....। कुछ दिन तो लिहाज में चुप ही रही थीं उम्र में छोटा है तो क्या, है तो देवर ही। पर उसकी बावरी वेश-भूषा और गंदेलापन वे ज़्यादा दिन बर्दाश्त नहीं कर पाई थीं।"[1]

'अपना अपना आकाश' 'पगला गयी है भगवती' 'ललमनियाँ' 'बिछुड़े हुए', 'रास' आदि कहानियों में वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया गया है।

'कृतज्ञ' 'भँवर', 'सिस्टर', 'रिज़क', 'बोझ', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'राय प्रवीण', आदि कहानियों का प्रस्तुतीकरण लेखिका ने विश्लेषणात्मक शैली में किया है। 'राहत कैंप है, हर किसी को राहत चाहिए। अन्न वालों को अन्न, गोश्त वालों को गोश्त। गाँव में तो वैसे ही अदला-बदली की रिवाज़ होती है चावल-चीनी, गुड़-तेल सब अनाज के बदले।

---

1. अपना अपना आकाश पृ. 11

सावित्री आगे बढ़ती चली गई।

राय प्रवीण सोचती है, इस दरबार में कवित्त, दोहे और छन्द काम आनेवाले नहीं, क्योंकि यहाँ कोई यवन बादशाह अकबर नहीं। ये जूठन खानेवाले पंडित जूठन की भी जूठन पचा जाएँ।"[1]

विश्लेषणात्मक शैली में लिखित उपर्युक्त कहानियों में विचारों के विवेचन और विश्लेषण को महला दी जाती है। इसमें चरित्र-चित्रण और वातावरण के जगह विचारों और सिद्धान्तों की व्याखया की प्रमुखता है।

आत्मनेपदीय शैली तो आधुनिक युग में उत्पन्न नवीन शैली है। इसका प्रयोग लेखिका ने अपनी अधिकांश कहानियों में किया है। प्रथम पुरुष में प्रस्तुत की जानेवाली यह शैली आत्मकथात्मक शैली कहलाती है। इसमें लेखिका अपने आपको एक पात्र के रूप में प्रस्तुत कर भोक्ता के रूप में सभी घटनाओं का विवरण देता है। 'बेटी' 'सहचर' 'मन नाँहि दस बीस' 'हवा बदल चुकी है' 'आक्षेप' 'केतनी' 'चिह्नार' 'उज्रदारी' आदि कहानियाँ इस शैली के उदाहरण हैं।

किसी वर्तमान घटना या प्रसंग-विशेष में जब कोई पात्र अपने अतीत का अवलोकन करते हुए उसे जोडने जाता है, वहाँ पूर्वदीप्ति शैली परिलक्षित होती है। इसके फलस्वरूप विगत जीवन फिर से प्रत्यक्ष आता है और पाठक भी उसका साक्षात्कार कर लेता है। "हवा बदल चुकी है" कहानी में सुजानसिंह के महत्व के प्रतिपाद्य करने केलिए लेखिका ने भारत-

---

1. राय प्रवीण (गोमा हँसती है) - पृ 44

पाकिस्तान विभाजन का संदर्भ याद किया है "सुजान ने सारे मुसलमानों के नाम बदल डाले थे। अब्दुल, शेरखाँ और नवाब खाँ-गोपाल, हरि और अयोध्या बन गए थे कुछ समय केलिए और जमे रहे थे सिर पर दस-बीस बालों की चोटी उगाकर।"[1]

पूर्वदीप्ति या फ्लैशबैक शैली द्वारा अतीत की बातों की प्रस्तुति सफ़ल ढंग से की जा सकती है 'हवा बदल चुकी है' के अलावा 'आक्षेप' 'केतकी' 'चिह्नार' 'छाँह' 'प्रेम भाई आण्ड पार्टी' आदि कहानियों में और 'सेंध' 'अब फूल नहीं खिलते' 'तुम किसकी हो बिन्नी' 'साप-सीढ़ी' में लेखिका ने पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग किया है।

पात्रात्मक शैली में लिखित उनकी कहानी 'फैसला' 'डायरी' शैली में लिखित 'ताला खुला है पापा' और संवाद शैली में लिखित 'बारहवीं रात' में लेखिका ने शिल्प पक्ष का नयापन लाने का प्रयत्न किया है।

शिल्प पक्ष की दृष्टि से मैत्रेयीजी के तीनों कहानी संग्रह की कहानियाँ सफलता की उच्च कोटि पर है। साधारण लोगों की भाषा में लिखित उनकी कहानियाँ में भारत के साधारण लोगों की कहानी है।

मैत्रेयीजी के उपन्यासों में शिल्प-पक्ष

शिल्प-पक्ष की दृष्टि से मैत्रेयीजी के उपन्यास साहित्य-जगत में विशेष स्थान प्राप्त किया है। उनमें सबसे उल्लेखनीय है उनकी ग्राम्य चेतना।

---

1. हवा बदल चुकी है पृ. 66

कथ्य : मैत्रेयी का प्रथम और छोटा उपन्यास है 'स्मृतिदंश'। इसका कथ्य तो चंदर की स्मृति के रूप में हमारे सामने उभरता है। रिश्ते में चंदर की मौसी थी भुवन मोहिनी जो नाना के संरक्षण में थी। घरवालों ने अनाथ भुवन की शादी विराटा के कुंवर अजयसिंह के भाई विजयसिंह के साथ करायी जो पागल था। पति-सेवा अपना कर्तव्य मानकर उसने पति की सेवा-शुश्रूषा कर अपनी नियति को स्वीकार किया। लेकिन जेष्ठ पत्नी कुसुम के हाथों से उसकी मृत्यु हुई।

लेकिन मैत्रेयी जी ने 'अगनपाखी' नामक उपन्यास में इसी भुवन को नायिका बनायी। 'स्मृतिदंश' की भूवन और चंदर के बीच जो रिश्ता था उससे भिन्न यहाँ दोनों के बीच शारीरिक संबंध हुआ। जिस परिवेश और परिस्थिति में चंदर और भुवन पल बढ़कर उम्र के ऐसे दौर में पहुँचते थे उसमें यह सब होना स्वाभाविक नहीं है तो असंभव भी नहीं है। 'स्मृतिदंश' में भुवन की मृत्यु के बाद विजय की बीमारी दूर होकर वह ठीक हो गया। लेकिन 'यहाँ' विजय की मृत्यु हुई और भुवन को 'सति' बनने के लिए तैयार हो उठना पड़ा। विराटा के मंदिर की पुजारी की मदद से वह बच गयी और कई वर्षों के अज्ञातवास के बाद अजयसिंह के नाम पर बंटवारे के लिए उसने अर्जी दी। अपनी पीड़ादायक ज़िंदगी से ताकत पाकर भुवन चंड़िका का अवतार बन गयी, नारी-विद्रोह का प्रतीक बन गई। 'स्मृतिदंश' की भुवन परिवार और वैवाहिक जीवन में पीड़ित और शोषित है लेकिन 'अगनपाखी' की भुवन शोषित है फिर भी शोषण को विरुद्ध विद्रोह प्रकट करनेवाली हैं। यह उपन्यास बुंदेलखंड में प्रचलित भुवनमोहिनी की कथा

को आधार बनाकर रचित है। लोक संस्कृति और उससे जुड़े जनश्रुतियों बिखरे इतिहास को उठाया गया है।

बेतवा नदी के किनारे स्थित सिरसा, चिरगांव, राजगिरि, चांदपुर आदि गांवों के निवासियों की ज़िंदगी के चित्रण के साथ साथ परिवार और वैवाहिक जीवन में शोषित उर्वशी की शापग्रस्त ज़िंदगी भी 'बेतवा बहती रही' का कथ्य है। 'स्मृतिदंश' और 'अगनपाखी' की तरह उर्वशी भी अनपढ़ थी, इसलिए शोषण के शिकार बन पड़ी। उर्वशी की शादी घरवालों के संबंध में भारी पत्थर-सा बोझ थी। राजगिरि का वकील सर्वदमन ने उर्वशी का ब्याह किया और उसको एक बेटा भी हुआ। 'अगनपाखी' में चंदर के पिता ने पैसा मांगकर भुवन की शादी पागल विजयसिंह के साथ करायी और वह पैसा रिश्वत देकर चंदर को नौकरी मिला दी। यहाँ अजीत की प्रेरणा से उर्वशी को अपने बेटे देवेश को सिरसा छोड़ना पड़ा। अपने नाम पर ज़मीन लिखवाकर मीरा के पिता बरजोरसिंह को अजीत ने उर्वशी को ब्याह कराया। काफ़ी दिनों तक पति द्वारा भेजे गए वैद्य के दवा के निरंतर प्रयोग से उर्वशी की दोनों किड्नी खराब हो गयी और मृत्यु भी हो गयी। 'स्मृतिदंश' की भुवन और 'बेतवा बहती रही' की उर्वशी वैवाहिक जीवन के शिकार बन गयी। लेकिन 'अगनपाखी' की भुवन को शोषकों के प्रति अपना विद्रोह प्रकट करने केलिए अवसर मिला।

'इदन्नमम' मैत्रेयीजी के औपन्यासिक व्यक्तित्व का पहली पहचान है। सोनपुरा और श्यामली नामक दो गांवों में होनेवाली तीन पीढ़ियों की बेहद और सहज तथा संवेदनशील कथा है। 'इदन्नमम' की अनुभाव और

विचार से भरे इस उपन्यास में बऊ, प्रेम और मंदा की कहानियाँ समांतर रूप से अंत तक पहुँचती हैं। बऊ युवावस्था में विधवा हो गयी। बेटा महेंदर की हत्या राजनीतिक दंगे में हुई, बहु रत्नसिंह यादव के साथ भाग गयी, पोती मंदा का भार उस पर पड़ा। वहाँ से उनको समथर ओरछा और बिरगांव जाना पड़ा। बिरगांव में कैलास मास्टर ने मंदा का बलात्कार किया। समाज में नारी का शारीरिक शोषण दिखाने केलिए 'बेतवा बहती रही' में उर्वशी का बलात्कार मीरा के पिता ने विवाह के पहले करने की कोशिश की।

कथ्या के दूसरे चरण में बऊ और मंदा सोनपुरा लौट आयीं और समझ गयीं सारी संपत्ति दादा के भाई द्वारा हड़प गयी। मंदा गांव के किसानों और मज़दूरों केलिए टीकमसिंह के साथ प्रयत्न करने लगी। उसने क्रेशर मालिकों के विरुद्ध आंदोलन चलायी। गांव के अस्पताल में डाक्टर और कंपाउंडर का प्रबंध किया गया। अंत में मंदा की संघर्षमय जीवन-यात्रा सफलता बन गयी।

'इदन्नमम' का कथ्य तो श्यामली, सोनपुरा जैसे कई गांवों के निवासियों की जीवन गाथा है। वहाँ मंदा की सहायता केलिए टीकमसिंह महाराज भी था। 'चाक' के कथ्य में सिर्फ एक गाां का चित्रण है - अलीगढ़ जिले की अतरपुर गांव का। यह मैत्रेयीजी का सशक्त उपन्यास है जिसमें नारी अपनी स्वतंत्र राजनैतिक परिस्थितियों में कथा का उतार-चढ़ाव देखा जा सकता है। पतिव्रता धर्म तोड़नेवाली रेशम को जिस समाज में सामंती व्यवस्था कायम है उस समाज ने मृत्यु का दण्ड दिया। सारंग, रेशम के

हत्यारे को कानून के आगे लाने केलिए विद्रोह करने लगी। पति से और गांव के सत्ताधारियों से तिरस्कृत होने पर उसने स्कूल के मास्टर श्रीधर प्रजापति को अपना आश्रय माना और उनसे शारीरिक संबंध भी हुआ। यहाँ सारंग ने एक ग्रामीण कुलवधु होने पर भी अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाने की हिम्मत दिखायी। सारंग और रेशम की कहानी के साथ साथ कई समांतर कहानियाँ भी उपन्यास में है।

'झूलानट' में गांव की संस्कृति और आचार-विचार के प्रति चुनौती देनेवाली शीलों की ज़िंदगी लेखिका ने कथ्य के रूप में स्वीकार की है। शीलो की शादी सुमेर के साथ हुई, लेकिन वह उसे छोड़कर शहर गया और उसने एक शहरी औरत से शादी की। सात वर्ष तक पति की प्रतीक्षा में ससुराल रहकर अंत में सुमेर के भाई बालकिशन की पत्नी बन गयी। बालकिशन की पत्नी के रूप में शीलो को मानने केलिए गांव में 'बछिया' अनिवार्य है, लेकिन शीलो तैयार नहीं थी। शीलो के मादकरूप ने बालकिशन को कामांधता की गहराई में डुबोया। अपनी बीमारी, शीलो और माँ की लड़ाई, शीलो के प्रति शारीरिक आकर्षण, सुमेर से भय आदि के कारण बालु का मन-संतुलन छूट गया। एक बार वह शीलो समझकर माँ के साथ सेक्स करने लगा। अंत में घर से भागकर उसको सन्यासी बनना पड़ा, फिर भी उसको सफ़लता नहीं मीली। 'स्मृतिदंश' और 'अगनपाखी' की तरह 'झूलानट' भी एक पात्र के स्मृति द्वारा अभिव्यक्त किया गया है।

'अल्मा कबूतरी' के कथ्य के रूप में मैत्रेयीजी ने 'कबूतरा' नामक अपराधि जन-जाति के जीवन संघर्ष को चुन लिया है। कज्जा और कबूतरा

के आपसी द्वन्द्व और कबूतरा वर्ग के शोषण, उनकी संस्कृति, शोषण के प्रति उनका विद्रोह, जनजाति नारी शोषण आदि का चित्रण लेखिका ने प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार एक तरह की जनजाति का जीवन संघर्ष उन्होंने 'इदन्नमम' में किया है भील-राऊत जाति का।

दूसरे उपन्यासों से अलग 'विज़न' का माहौल शहरीय है और इसकी दो नायिकायें पढ़ी-लिखी हैं नौकरीपेशा भी है नेत्र चिकित्सक। प्रस्तुत उपन्यास द्वारा लेखिका ने साबित किया है कि नारी-जीवन का संघर्ष केवल गँवई अशिक्षित महिलाओं को नहीं शहरीय पढ़ी-लिखी कामकाजी महिलाओं को भी झेलना पड़ता है। डॉ. आभा और डॉ. नेहा की ज़िंदगी के शोषण और विद्रोह, पारिवारिक और नौकरी के क्षेत्र में सामना करनेवाली समस्याओं की कहानी है 'विज़न'।

'कस्तूरी कुंडल बसै' ने उपन्यास और आत्मकथा का तत्व समान रूप से प्रस्तुत है। मैत्रेयी और उसकी माँ कस्तूरी का अनोखा रिश्ता और मैत्रेयी की शादी तक उन दोनों को झलनेवाली समस्याओं का यथार्थ-चित्रण 'कस्तूरी कुंडल बसै' की कहानी है।

लोकसाहित्य को छोड़कर साहित्य ज़रूर अपूर्ण लगेगा। इसलिए लेखिका ने लोक कथा को केंद्र में रखकर 'कही ईसुरी फाग' की रचना की। लोकसाहित्य के महान कवि ईसुरी का रजऊ से प्रेम और लोक साहित्य केलिए उनका योगदान के साथ प्रस्तुत विषय पर शोध करनेवाली ऋतु, नाटक के रूप में यह प्रस्तुत करनेवाली भजन मंडली, ऋतु का प्रेमी माधव

और ईसुरी के संबंध 'मटीरियल्स कलेक्शन' में सहायता देनेवाली गांव की बुजुर्ग नारियां, मीरासिंह आदि की कहानी इसमें निहित हैं।

मैत्रेयीजी के हर एक उपन्यास के कथ्य में भिन्नता होने पर भी हर एक कथ्य के केन्द्र में शोषित नारी और उपेक्षित वर्ग जरूर दिखाई पड़ते हैं। इसप्रकार मैत्रेयीजी ने ग्राम्यजीवन लोकजीवन और लोककथाओं को अपने उपन्यास के विषय बनाए हैं

पात्र परिकल्पना उपन्यास में

परिवार और वैवाहिक जीवन के शोषण भोगनेवाली नारियों को केंद्र में रखकर ही मैत्रेयीजी ने अपने उपन्यासों की रचना की।

'स्मृतिदंश' और 'अगनपाखी' की नायिका भुवनमोहिनी होशियार होने पर भी उसको पढ़ने का अवसर नहीं मिला। 'स्मृतिदंश' में भुवन की शादी पागल विजयसिंह के साथ करायी गयी। लड़की होने के काण वह परिवार के लिए एक बोझ थी। परिवार का शोषण वैवाहिक जीवन में ज़ारी रहा और कुसुम के हाथ से उसकी मृत्यु हुई। 'स्मृतिदंश' की भुवन पूरी ज़िंदगी में शोषण भोगती थी, प्रतिक्रिया केलिए उसको कोई अवसर ही नहीं मिला। भुवन और चंदर के बीच प्रणय था। लेकिन चंदर के पिता को अपने इंजिनीयर पुत्र को एक गरीब गंवई लडकी नहीं चाहिए। वैवाहिक जीवन में भुवन का स्थान एक नौकरानी का था। रोगी विजय की सेवा-शुश्रूषा करनेवाली नौकरानी।

'स्मृतिदंश' की भुवन से भिन्न 'अगनपाखी' की भुवन जुझारु थी। वहाँ शादी के पहले उसका शारीरिक संबंध चंदर के साथ हुआ। लेकिन अपने बेटे को बदनामी से बचाने केलिए चंदर के पिता ने अजयसिंह से एक बड़ी रकम माँगकर भुवन की शादी विजय के साथ करायी और वह रकम रिश्वत देकर चंदर को नौकरी मिलवायी। भुवन ने चंदर की मदद से विजय की इलाज केलिए प्रयत्न किया था, लेकिन वह मर गया। 'सती' बनने से भुवन बच गयी और कई बरसों के अज्ञातवास के बाद उसने अपने पति का हिस्सा मिलने केलिए कोर्ट में केस फाइल किया।

'बेतवा बहती रही' में नायिका उर्वशी परिवार में और वैवाहिक जीवन में शोषित थी। उर्वशी अपने दादा के संरक्षण में थी। उसको औपचारिक शिक्षा नहीं मिली थी, फिर पढ़ना-लिखना आता था। सर्वदमन के साथ उर्वशी की शादी हुई और वह खुशी में रही, बेटे देवेश की माँ बन गयी। दुर्भाग्य की बात है कि एक दुर्घटना में सर्वदमन की मृत्यु हुई। 'अगनपाखी' की भुवन और 'बेतवा बहुत रही' की उर्वशी दोनों को विधवा जीवन की विडंबनाएँ भोगनी पडी थी। उर्वशी का शोषण उसके भाई अजीत ने किया। उसने अपने नाम पर ज़मीन लिखवाकर उर्वशी को बरजोरसिंह की दूसरी पत्नी बना दी। बरजोरसिंह उर्वशी की सहेली मीरा के पिता थे। उर्वशी को अपने बेटे देवेश को सिरसा छोड़ना पड़ा। अपमान और पीड़ा न सहने पर वह बेतवा में ज़िंदगी समाज करने केलिए कूद पड़ी, लेकिन एक मल्लाह ने उसे बचाया।

भुवन ('स्मृतिदंश') की मृत्यु ससुराल में हुई थी। इसी प्रकार उर्वशी की मृत्यु भी वहाँ हुई थी। काफ़ी दिनों तक बरजोरसिंह द्वारा भेजे

गए वैद्य के दवा के निरंतर प्रयोग से उसके दोनों किड्नी खराब हो गयी। उर्वशी की कथा सिर्फ उर्वशी की नहीं अनेक ग्रामीण नारियों की कथा है।

'बेतवा बहती रही' की मीरा ने कॉलेज में पढ़ा था। उर्वशी के बचपन की सहेली थी। उसकी यादों द्वारा उर्वशी की कहानी लेखिका ने कही है। मीरा के पिता की दूसरी पत्नी बनकर उर्वशी के आते वक्त अपनी सौतेली माँ के रूप में मीरा उसे स्वीकार नहीं कर सकती। विजय की मृत्यु के बाद उदय की शादी उर्वशी की प्रेरणा से विजय की विधवा बहु के साथ हुई। मीरा की शादी भी हो चुकी है। अंत में मीरा को उर्वशी के अंतिम दिनों का साक्ष्य बन पड़ा।

'स्मृतिदंश' 'अगनपाखी' 'बेतवा बहती रही' आदि उपन्यासों की नायिकाएँ शादीशुदा थी। लेकिन एक अविवाहित नायिका मंदाकिनी की कहानी है 'इदन्नमम'। मंदा की पात्र-रचना एक सशक्त विद्रोहिणी औरत के रूप में की गई है। उपन्यास के आरंभ में तेरह वर्षीय बालिका के रूप में मंदा की प्रस्तुति की गई है। अनाथ मंदा बऊ के संरक्षण में थी। पिता महेंदरसिंह मारे गए और माँ प्रेम रतनसिंह यादव के साथ भाग गयी। फिर मंदा से मिलने केलिए केस भी फाइल किया गया। मंदा की सुरक्षा केलिए बऊ उसे लेकर सोनपुरा छोड़कर श्यामली में पंचमसिंह दादा के यहाँ आया। वहाँ से उनको समथर, बिरगांव, ओरछा आदि स्थानों में जाना पड़ा। बिरगांव तक केलासमास्टर ने उसका बलात्कार किया। कुसुमा भाभी के सलाह से वह अपराध बोध से बाहर आयी। श्यामली में उसकी सगाई

मकरंद के साथ हुई और बाद में उसके माता-पिता की अनिच्छा के कारण वह रिश्ता छूट गया।

सोनपुरा लौट आने पर समझ गयी उसके सारी संपत्ति गोविंदसिंह ने अभिलाख को बेच दिया। यहाँ तक मंदा का पात्र एक साधारण ग्रामीण लड़की जैसी थी। लेकिन सोनपुरा लौट आने पर वह रोज़ाना चलाने केलिए रामायण बाँचने के घर-घर जा रही थी। अपने गांव की प्रकृति को और गरीब किसानों को क्रेशर मालिकों के शोषण से मुक्त कराने केलिए कायला के महाराज के साथ प्रयत्न किया गया। अपने पिता के स्वप्न-गांव के अस्पताल में डाक्टर लाने की सफलता केलिए झांसी के सी एम.ओ. आफ़ीस जाने पर उसको अपमान ही भोगना पड़ा। क्रेशरों में काम करनेवाली राऊत जनजाति की प्रगति केलिए, उनके बच्चों को पढ़ाने केलिए भी मंदा प्रयत्न करती थी। सिर्फ पाँचवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त मंदा की भूमिका समाज, प्रकृति और राजनीतिक शोषण के विरुद्ध आंदोलन चलानेवाली एक सामाजिक सेविका के रूप में लेखिका ने चित्रित किया।

बऊ और प्रेम दो पीढ़ियों की प्रतिनिधि है। बऊ विधवा होने पर भी अपने बेटे के पालन-पोषण पर ध्यान देकर जाती थी। लेकिन प्रेम विधवा बनने पर अपनी बेटी को छोड़कर दूरी ज़िंदगी केलिए रतनयादव के साथ भाग गयी। मंदा के संरक्षण केलिए बऊ को बहुत अधिक तकलीफ़ झेलना पड़ा। लेकिन प्रेम का दूसरा वैवाहिक जीवन शांतिपूर्ण नहीं था, एक बच्चा भी हुआ और रतनयादव के गुलामी न सहने पर वह अपने बेटे को लेकर मंदा के पास वापस आयी।

बऊ ने मंदा केलिए सारा सहयोग दिया और अपनी और पोती की मान-रक्षा केलिए आद्यंत प्रयत्नरत थी। अपनी बेटी को छोड़कर चली गयी बहु प्रेम को माफ़ी देने केलिए वह कभी भी तैयार नहीं हो उठी।

'इदन्नमम' की कथा में एक प्रमुख मोड़ लानेवाला व्यक्तित्व टीकमसिंह का है। वे कायला के महाराज के रूप में मंदा के सामने आए थे। लेकिन पारीछा के ग्राम प्रधानवाला और एक व्यक्तित्व भी उसको था। उनके नेतृत्व में पारीछा थर्मल प्लाट के विरुद्ध आंदोलन चलाया गया। उनसे प्रेरणा पाकर ही मंदा क्रेशर मालिकों के विरुद्ध आंदोलन चलाने में ऊर्जा पाई है। टीकमसिंह और मंदा बाबा आते और मेधा पड़कर की याद दिलाती है। टीकमसिंह ने ही मंदा को 'इदन्नमम' का मंत्रोपदेश दिया था

टीकमसिंह ने जो योगदान गांव की प्रगति में दिया है। जो प्रेरणा मंदा को दी है करीब वही कर्तव्य 'चाक' के श्रीधरप्रजापति ने किया है। उनकी प्रेरणा से सारंगने अपने जुझारु व्यक्तित्व में स्फूर्ति लाकर रेशम के हत्यारों को कानून के आगे लाने में प्रयत्न किया था। सारंग ने लड़कियों के गुरुकुल में ग्यारहवीं कक्षा तक पढ़ा था। रेशम की हत्या पर अपना विद्रोह प्रकट करने केलिए उसने केस फाइल किया। डोरिया से चेतावनी मिलने पर वह तनिक भी पीछे न मुडी। पति से उपेक्षा मिलने पर उसने श्रीधर प्रजापति के साथ सामाजिक शोषण के विरुद्ध विद्रोह किया। श्रीधर के साथ उसके मन में लगाव और शारीरिक संबंध भी हुआ। पति के रखते हुए भी एक अन्य पुरुष से दोस्ती करने में उसने कोई गलती नहीं देखी। पुरुष का

परस्त्री संसर्ग समाज केलिए विषय नहीं था, फिर स्त्री ऐसा क्यों नहीं करेगी। श्रीधर की प्रेरणा से वह राजनीतिक क्षेत्र में उभरी और चुनाव में उम्मीदवार बन गयी।

रंजीत का पात्र आज के पति वर्ग का प्रतिनिधित्व है। एम.एस.सी. अग्रीकल्चर तक पढ़नेवाले रंजीत ने एक साधारण पति की तरह पत्नी को सिर्फ एक गुलाम माना। सत्ताधारियों और शराब के चंगुल में पड़कर उसने अपनी और पूरे परिवार की शांति नष्ट करा दी।

श्रीधर प्रजापति जाति में कुम्हार होने पर भी मास्टर था। अपमानित होने पर भी वे हार मानने केलिए तैयार नहीं था। अतरपुर के सत्ताधारियों के प्रति अपना विद्रोह प्रकट करने केलिए उसने सारंग की मदद से खूब प्रयत्न किया।

'अल्मा कबूतरी' की कदमबाई पूरे कबूतरा वर्ग का प्रतिनिधि पात्र है। उसके पति जंगलिया की हत्या मंसाराम ने करायी और उसका बलात्कार भी किया। बेटा राणा को कज्जा बनने की कोशिश उसने की लेकिन सफ़ल नहीं हुआ। कदमबाई में लेखिका ने स्वतंत्रता और जुझारुपन की भावना का आरोप किया। लेकिन अल्मा पढ़ी-लिखी होने पर भी कबूतरी होने के कारण शोषण का शिकार बन पड़ी। पिता की मृत्यु के बाद सूरजभान और दोस्तों के बलात्कार के शिकार बनकर उसका गर्भपात भी हुआ। अंत में श्रीरामशास्त्री की विधवा बन गयी।

'झूलानट' की शीलो में विद्रोही भावना भरी थी। वैवाहिक जीवन में पति द्वारा उपेक्षित शीलो देवर की पत्नी बन गयी।

सात वर्ष तक शादीशुदा होने पर भी उसको अनब्याही रहनी पड़ी। लेकिन बालकिशन की पत्नी बनने पर गांव की मर्यादा 'बछिया' मानने केलिए तैयार नहीं थी।

दो नेत्रचिकित्सक डाक्टरों के शोषण की कहानी है विज़न। दोनों अपने वैवाहिक जीवन में शोषित थी। डॉ. नेहा, डॉ. अजय की पत्नी और शरण आई सेंटर के मालिक डॉ. शरण की बहु भी है। डाक्टर परिवार की बहु होने पर भी वह ससुर और पति के गुलाम थी।

डॉ. आभा, डॉ. मुकुल की पत्नी है और शहर के एक नेत्रचिकित्सालय के ज़िम्मेदार डाक्टर भी है। लेकिन उसके ससुरालवालों ने उसे एक साधारण ग्रामीण बहु समझकर अपने घर ठहरने को ज़िद किया है। मुकुल ने भी उसका सहयोग नहीं दिया और अंत में उसने तलाक ले लिया।

'कस्तूरी कुंडल बसै' के कस्तूरी और मैत्रेयी दोनों पात्रों में आपसी द्वद्व है। कस्तूरी शादी करना नहीं चाहती थी, परिवार के दबाव से उसे शादी करनी पड़ी। मैत्रेयी की माँ अपनी बेटी को शादी कराना नहीं चाहती थी लेकिन मैत्रेयी की अपनी मर्जी से उसकी शादी हो चुकी है। कस्तूरी जब विधवा बन गई तब अपनी अठारह माह उम्रवाली बेटी को लेकर ही पढ़ने गयी और ग्रामसेविका बन गयी। मैत्रेयीजी ने उससे प्रेरणा पा ली। फिर भी समकालीन समाज का शोषण उसको अनुभव करना पड़ा।

अपने दूसरे उपन्यासों से भिन्न 'कही ईसुरी फाग' में मैत्रेयीजी ने लोक साहित्य और समकालीन वातावरण का सम्मिश्रण किया है। लोकसाहित्य के महान कवि थे ईसुरी और उसके फाग में प्रेमिका रजऊ का वर्णन दिखाई पड़ता है। ईसुरी और रजऊ की कहानी के समांतर रूप में ऋतु नामक शोध छात्रा की कहानी है, जो 'ईसुरी का बुंदेलखंडी को योगदान' विषय पर शोध करती है। उसके शोध प्रबंध की प्रामाणिकता पर शक होने के कारण उसका गइड डॉ. प्रमोदकुमार पाण्डेय ने तिरस्कृत किया। माधव उसका सहपाठी और प्रेमी था।

ग्रामीण नारी होने पर विद्रोह प्रकटनेवाली काई पात्रों का चित्रण मैत्रेयीजी ने किया है जैसे भुवनमोहिनी (अगनपाखी), मंदाकिनी (इदन्नमम) सारंग, रेशम (चाक), कस्तूरी (कस्तूरी कुंडल बसै) कदमबाई, भुरी (अल्मा कबूतरी) शीलो (झूलानट)। शिक्षित होने पर भी शोषण के शिकार बननेवाली नारियाँ हैं मैत्रेयी, अल्मा आदि। जाति के नाम पर शोषण भोगनेवाले पात्र हैं - श्रीधरप्रजापति, गुलकंदी, बिसुनदेवा, एदल्ला, हबीबन, पूरे कबूतरा वर्ग, राऊतवर्ग आदि।

बलात्कार और शारीरिक शोषण के शिकार बननेवाली, मंदा, सुगुना, जमुना, मैत्रेयी, कदमबाई, रेशम आदि कई प्रकार के पात्रों का चित्रण मैत्रेयीजी के उपन्यासों की खासियत है।

थल-काल - मैत्रेयी के उपन्यासों थलकाल ग्राम केंद्रित है। 'स्मृतिदंश' का वातावरण ग्राम था। बऊआसागर जहाँ चंदर के घर था, शीतलगढ़ी,

चाँदपुर आदि ग्राम्य जीवन का परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत उपन्यास की पृष्ठभूमि बना। यहाँ भुवन का शोषण पहले परिवारवाले ने किया है। पैसे की इच्छा में लड़की का ब्याह किसी रोगी या पागल आदमी के साथ करनेवाले परिवार समकालीन समाज में कम नहीं है। 'अगनपाखी' उपन्यास की पृष्ठभूमि भी 'स्मृतिदंश' से अलग नहीं है।

'बेतवा बहती रही' उपन्यास की कथा राजगिरि, चंदनपुर और सिरसा में चलती है और कथा का केंद्रबिंदु बेतवा नदी है। उर्वशी की युवावस्था से मृत्यु तक की घटनाओं का वर्णन कालक्रमानुसार ही हुआ है। राजगिरि में उर्वशी का जन्म और परवरिश हुआ था। सिरसा में उसकी शादी हुई और चांदपुर में मीरा के घर था जहाँ उसकी दूसरी शादी हुई थी। परिवारवालों द्वारा शोषित उर्वशी जैसी नारी आज भी हमारे समाज में ज़रूर देख सकते हैं।

समकालीन समस्याओं में सबसे प्रमुख पर्यावरण प्रदूषण और किसानों और मज़दूरों का शोषण हैं। प्रस्तुत समस्या पर आधारित लिखा गया उपन्यास है मैत्रेयीजी का 'इदन्नमम'। कथा के प्रारंभ में श्यामली नामक सुंदर गांव हमारे सामने है। वहाँ के ग्रामीण परिदृश्य, संस्कृति, आचार-विचार, रहन-सहन सब समुचित ढंग से लेखिका ने यहाँ समाहित किया ह। श्यामली के बाद सोनपुरा के समकालीन वातावरण, क्रेशर के संचालन के कारण बिगड़ती हुई खेती-बारी नौकरी नष्ट होनेवाले किसान, पर्यावरण प्रदूषण के कारण अगली पीढ़ियों में फैली बीमारियां आदि का चित्रण

प्रासंगिकता से किया गया है। फिर बिरगांव का वन सौंदर्य, समथर, गोपालपुरा के पहाडी-प्रदेश आदि की अभिव्यक्ति द्वारा मैत्रेयीजी ने शोषणग्रस्त गांवों और ग्रामीणों का संघर्ष मार्मिक ढंग से स्पष्ट किया है। करीब दस-पच्चीस वर्षों के अंतराल में 'इदन्नमम' की कथा चलती रहती थी। 'चाक' उपन्यास की पूरी कथा अतरपुर गांव में हो रही है। आज के समाज और राजनैतिक क्षेत्र में चल रहे भ्रष्टाचार का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत उपन्यास की खासियत है। 'अल्माकबूतरी' की पृष्ठभूमि मडोराखुर्द और गोरामछिया नामक दो गांव है। स्वतंत्रता के बाद इकसठ वर्ष बीत होने पर भी 'अपराधि कबूतरा' जैसी जनजाति शोषण के शिकार बनकर हमारे समाज में संघर्षभरित ज़िंदगी झेलते हैं। दूसरे उपन्यासों से भिन्न 'विज़न' का वातावरण शहरीय था। पढ़ी-लिखी और डाक्टर होने पर भी नारी की अवस्था में आज भी परिवर्तन नहीं आया। यह बात साबित करने केलिए लेखिका ने खूब परिश्रम किया है। 'कस्तूरी कुंडल बसै' का परिप्रेक्ष्य बंदेलखंड, झांसी आदि स्थान है। प्रस्तुत पृष्ठभूमि पर रखकर दो पीढ़ियों की कहानी लेखिका ने कही है। 'कही ईसुरी फाग में' लेखिका ने लोककथा और समकालीन परिवेश का सम्मिश्रण किया है। इसलिए ईसरी और रजऊ की कहानी के साथ ऋतु का शोध कार्य की अभिव्यक्ति केलिए ग्राम और शहर का परिवेश लेखिका ने इस्तेमाल किया है।

मैत्रेयीजी के अधिकांश उपन्यासों की पृष्ठभूमि गांव है और शहर को भी इन्होंने छोडा नहीं है।

संवाद, भाषा और शैली

ज़्यादातर पात्र अनपढ़ और ग्रामीण है, कुछ तो अल्पशिक्षित भी है। पढ़े-लिखे पात्रों का चित्रण भी लेखिका ने किया है। गांव के साथ शहर को भी पृष्ठभूमि बनायी गई है। एक, दो या तीन पीढ़ियों की कहानी कहने पर भाषा में भी परिवर्तन लायी है। दलित और जनजाति पात्रों का चित्रण भी किया गया है। पात्र, परिप्रेक्ष्य, शैक्षिक अवस्था आदि के अनुसार प्रासंगिक भाषा का प्रयोग संवाद केलिए लेखिका ने किया है।

'स्मृतिदंश' में चंदर को छोड़कर बाकी सभी पात्रों ने ग्रामीण भाषा का प्रयोग किया है। 'इदन्नमम' में मंदा पाँचवीं कक्षा तक पढ़ी थी, लेकिन उसा संसर्ग अनपढ़ गांववालों के साथ हुआ था, इसलिए ज़्यादातर रूप से मंदा ने स्थानीय बोलियों का इस्तेमाल किया है। 'स्मृतिदंश' और 'अगनपाखी' में वर्मनात्मक शैली के साथ लेखिका ने पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग किया है, क्योंकि दोनों उपन्यास चंदर की स्मृति के रूप में लेखिका ने किये हैं। 'बेतवा बहती रही' की भाषा तो बुंदेलखंडीय थी लेकिन मीरा की स्मृति के रूप में कहानी की प्रस्तुति की गयी है और मीरा पढ़ी लिखी लड़की थी। 'इदन्नमम' में राऊत जनजाति के जीवन संघर्ष का वर्णन मैत्रेयीजी ने किया है। अनपढ़, निर्कषर भीत जात के संवाद से उनके जीवन-संघर्ष, तनाव, आक्रोश सब स्पष्ट है।

अपनी बेटी अहिल्या की दुरवस्था पर क्रोधित तुलसिन के जगेसर काका से आक्रोश से उनके जीवन संघर्ष का यथार्थ चित्र जाहिर हुआ

"तुम पहाड़िया बेंच रहे हो ठेकेदार। अहिल्या बहौत बीमार है। डाकघर को दिखाई-भराई है, पइसा लगा रहे है गुंजाइश भर।

"अरे हमारी तो बेबसी है ठेकेदार, हमें पीट के लाने दिन में ही पथरा नहीं तोड़ने पड़त, रात में देह भी, हमें बिना रौंदे-चौथे तुम्हारी बिरारी के लोग पत्थरों से हाथ नहीं लगाने देते। बिटियाँ का करें, बूढ़ी मताई को, बाप को काम नहीं देता कोई.... और जनी की जात मरद बिरोबार काम नहीं कर पाती सो सहद के छत्ता की तरह निचोरत हैं मालिक लोग... "फिर? हमारी बिटिया कैसे रहे कुँआरी? कैसे रहें निरोग? हम का जानें कि की ने दई जा बीमारी....।"[1]

स्थानीय भाषा के साथ असल बुंदेलखंडी भाषा का प्रयोग लेखिका ने किया है। प्रकृति चित्रण केलिए चित्रात्मक भाषा और संदर्भानुसार व्यंग्यात्मक और नाटकीय का प्रयोग मैत्रेयीजी ने इस उपन्यास में प्रयुक्त किया है। वर्णनात्मक, पूर्वदीप्ति और व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग लेखिका ने यहाँ किया है। पत्र शैली और संवाद शैली का प्रयोग उपन्यास में नाटकीयता लाने में सहायक होता है।

समुचित संवाद के द्वारा मैत्रेयीजी अपने लक्ष्य तक आसानी से पहुँच गयी हैं। सशक्त भाषा द्वारा संवाद संदर्भ का चयन लेखिका ने अत्यंत मार्मिक ढंग से किया है। 'चाक' में रेशम के विद्रोह प्रकट करने केलिए लेखिका ने रेशम और सास के बीच का संवाद इस्तेमाल किया है

---

1. इदन्नमम पृ. 241

"मेरे बेटा की मौत से दगा करनेवाली हरजाई बदकार ! तेरा मुँह देखने से नरक मिलेगा, खेती-जलेगी, अकाल पडेगा। गंगा में सौ अस्नान करो, तो भी यह महापाप घुटना नहीं।

"क्यों दोगे सज़ा? पाप मैं ने किया है पाप तुम करेगे।"

"रंडी, मेरे पूत की चिता तो सीरी हो जाने देती।"

"अम्माँ, तुम तो बिरथा ही दाँत किटकिटा रही हो। तुम्हारे पूत की चिता ठंडी हो जाने से क्या मेरी देह की आग बुझ जाती? जीतों-मरतों का भेद भी भुल गई तुम? बेटे के संग मैं भी मरी मान ली?"

'अल्माकबूतरी' में क्रजबा और कबूतरा दोनों जातियों की ज़िंदगी होने के कारण बुदेलखंडीय ग्रामीण भाषा के साथ कबूतरा वर्ग की अपनी बोली का प्रयोग लेखिका ने किया है। व्यंग्यात्मक, चित्रात्मक आत्मकथात्मक और संस्मरणात्मक शैली का प्रयोग लेखिका ने 'अल्मा कबूतरी' में किया है। आजकल के राजनीतिक भ्रष्टाचार और प्रजातंत्र के नाम पर करनेवाले शोषण के वर्णन के कारण इसमें प्रासंगिकता तो ज़्यादा है।

'विज़न' की पृष्ठभूमि में पढ़े-लिखे लोगों की दुनिया है लेकिन वहाँ भी शोषण कम नहीं है। अजय और नेहा के संवाद से उनकी ज़िंदगी का शोषण व्यक्त होता है

"देखें रिजल्ट क्या कहता है?"

"कौन? किसका है?"

"पापा"

"नेहा"

"हाँ"

"घर चलो"

"अभी, कैसे?"

"जल्दी पहुँचना है।"

"रिजल्ट नहीं देखोगे?"

"पापा आ गए हैं।"

इतने छोटे संवाद से नेहा की गुलामी स्पष्ट दिखाई देती है।

प्रस्तुत उपन्यास के पात्रों ने समकालीन लोगों जैसे जिस भाषा का प्रयोग किया है जिसमें अंग्रेज़ी शब्दों की भरमार है और चिकित्सा क्षेत्र के कई शब्दों का प्रयोग किया गया है। पूर्वदीप्ति और वर्णनात्मक शैली का प्रयोग लेखिका ने किया है।

'कस्तूरी कुंडल बसै' आत्मपरक उपन्यास होने पर भी वर्णनात्मक शैली में बुंदेलखंडी परिमार्जित भाषा और ग्रामीण भाषा का प्रयोग पात्रानुकूल किया गया है। 'कही ईसुरी फाग' में संदर्भोचित संवाद के साथ आत्मपरव और पूर्वदीप्ति शैली में कई लोककथाओं और फागों के संदर्भानस

इस्तेमाल के साथ मैत्रेयीजी ने प्रस्तुत उपन्यास को अत्यंत आकर्षक बन दिया है।

उपर्युक्त विवेचन से यह विदित होता है कि शिल्प पक्ष की दृष्टियों से मैत्रेयीजी के उपन्यास सफल दीख पड़ते है। कथासाहित्य में शिल्प को नया आयाम प्रदान करनेवाले साहित्यकारों में मैत्रेयीजी का स्थान अतुलनीय है।

उपसंहार

उपसंहार

हिन्दी साहित्य जगत की बहुचर्चित लेखिका हैं मैत्रेयीपुष्पा। समकालीन भारतीय समाज की नारी में अपने स्वतंत्र अस्तित्व की सुषुप्त चेतना जागृत करने केलिए मैत्रेयीजी का कथा साहित्य सक्षम दिखाई पड़ता है। सिर्फ नारी ही नहीं ग्रामीण किसान मज़दूर, दलित और जनजाति आदि उपेक्षित, पीड़ित शोषित वर्गों को अपनी स्वतंत्र अस्मिता स्थापित करने की प्रेरणा देने केलिए अपना कथासाहित्य द्वारा मैत्रेयीजी ने जो कदम उठाया है, वह सराहनीय है। दूसरे शब्दों में कहने पर वे उपेक्षित ग्राम्य जीवन के कथाकार हैं।

पुरुष समाज में अपने विचारों एवं अवधारणाओं के तहत नारी का रूपायन किया है। गुलामी के जंजीर तोड़ने के लिए नारी को समाज के नियमों का उल्लंघन करने का साहस दिखाना चाहिए। समाज में व्याप्त रूढ़ियों एवं परंपरागत अनाचारों से लड़कर अपनी अस्मिता पहचानने केलिए मैत्रेयीजी का रचना संसार उनका मददगार है। सदियों से चली आ रही परंपरा और रीति-रिवाज तोड़कर लेखिका ने अपने कथा साहित्य में नारी को अलग व्यक्तित्व प्रदान किया है। उनमें अलग किस्म का स्वतंत्रता-बोध ज़रूर दिखाई देता है।

'चाक' उपन्यास में रेशम समाज की धार्मिक आस्था का प्रतिरोध करती है। विधवा होने पर भी वह गर्भवती बन गयी है। विधवा होने पर भी

युवतियों की आशा और आकांक्षा खत्म नहीं होती, लेकिन समाज ने उसे एक कठपुतली मानी है। इसलिए उसका गर्भपात करने की पूरी कोशिश की गयी है। परंतु रेशम तैयार नहीं हुई थी। लेखिका ने रशम द्वारा समाज रूढ़ियों के विरुद्ध तीखे शब्दों से आवाज़ उठायी है। फिर भी डोरिया ने उसकी हत्या की। रेशम का विद्रोह ज़ारी रहने केलिए मैत्रेयीजी ने सारंग की पात्र-सृष्टि की। वह भी पुरुषसत्तात्मकता के विरुद्ध रेशम की हत्या के विरुद्ध आवाज़ उठाती थी। पति होते हुए भी वह श्रीधर के साथ शारीरिक संबन्ध स्थापित करती है। ये दोनों नारी पात्र परिवार और समाज में अपनी अलग अस्मिता बनाने की कोशिश करती है। यहाँ लेखिका ने स्पष्ट किया है कि समाज के नियम सिर्फ नारी केलिए नहीं पुरुष केलिए भी माननीय होना चाहिए।

'इदन्नमम' की मंदाकिनी ने कैलास मास्टर द्वारा बलात्कार के शिकार होने पर भी अपराध बोध से अपनी ज़िंदगी बरबाद नहीं की। उसने गांव की नारियों, गरीब किसान मज़दूरों, राऊत जनजातियों की प्रगति केलिए प्रयास किया है। उनके द्वारा गांव में कई परिवर्तन आए। गांव में ट्रैक्टर खरीदा गया, अस्पताल में डाक्टर और कंपाउंडर आ गए, राऊतों के बच्चों को शिक्षा का प्रबंध किया गया, क्रेशर मालिकों को गांव के बाहर भेजने केलिए आन्दोलन चलाने में गांववालों को नेतृत्व किया गया, अपनी सोनपुरा की प्रकृति के संरक्षण केलिए और गांव के चारों ओर के पहाड़-विस्फोट के विरुद्ध कई पीडाएँ भोगी गई।

'अल्मा कबूतरी' की कदमबाई, भूरी आदि सशक्त नारी पात्रों के द्वारा लेखिका ने 'अपराधि' कहनेवाली एक जनजाति को स्वतंत्र अस्मिता की पहचान कराने में प्रयत्न किया है। कदमबाई और भूरी दोनों अपने पुत्रों को शिक्षा देकर अपने वर्ग की मुक्ति केलिए कार्यरत थीं। शिक्षित बनकर कामयाबी प्राप्त करना भी शोषित वर्गों की मुक्ति का साधन है।

नारी और शोषित वर्गों की मुक्ति संभव होने केलिए सबसे पहले राज्यनैतिक और धार्मिक क्षेत्र में परिवर्त आना चाहिए। सत्ताधारियों के शिक्षित होने पर, नशे से मुक्त होने पर, अर्थ, काम, लोभ से दूर रहने पर राजनैतिक और धार्मिक क्षेत्र में उन्नति आ जाएगी। सत्ता में नारी की स्वतंत्र भागीदारी ज़रूर होनी चाहिए। इसलिए नारियों की समस्याओं का समाधान जल्दी हो सके।

नारी परिवार में, वैवाहिक जीवन में समाज में और नौकरी के क्षेत्र में शोषित हैं। बलात्कार आजकल की एक साधारण घटना बन गयी है, लोगों को यह कोई अपराधी नहीं लगता है। मैत्रेयीजी के कथा साहित्य में पुरष की वासना की शिका बननेवाली नारी अपराधबोध से बाहर आती है और उसकी प्रतिक्रिया भी करती है। 'इदन्नमम' की मंदा, 'अल्मा कबूतरी' की कदमबाई, अल्मा 'केतकी' कहानी की केतकी, 'अब भूल नहीं खिलते' की झरना, 'मन नाहिं दस बीस' कहानी की चंदना, 'कस्तूरी कुंडल बसै' की मैत्रेयी आदि पात्र स्त्री शोषण से सचेत हैं और इसका प्रतिरोध भी करती हैं।

आजकल हमारे भारत के ही नहीं विश्वभर की सबसे बडी समस्या है सांप्रदायिकता से उत्पन्न आतंकवाद। आतंकवादियों द्वारा मुंबई में चलाए गये हमले में कई निरपराधी मारे गए, अनेक घाय हो गए और अनेक अपराधि हो गए। इस हमले के द्वारा किसी को कोई लाभ नहीं हुआ। मैत्रेयीजी ने 'छाँह' नामक कहानी में एक सांप्रदायिक दंगे का वर्णन किया है। 'हवा बदल चुकी है' कहानी में भारत-पाकिस्तान विभाजन के समय हुई समस्याओं की अभिव्यक्ति की गयी है। इसके साथ जाति के नामपर अपमान भोगनेवाले अनेक पात्रों को लेखिका ने अपने कथा साहित्य में प्रस्तुत किया है। जैसे 'चाक' में श्रीधर मास्टर, बिसुनदेवा, 'अल्मा कबूतरी' में पूरा कबूतरा वर्ग 'कस्तूरी कुंडल बसै' में एदल्ला, हबीबन, 'इदन्नमम' में राऊत जनजातियाँ 'फैसला' कहानी की ईसुरिया, 'मन नाहिं दस बीस' कहानी के स्वराज वर्मा, 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी के कामता और दुर्गी आदि अनेक पात्र समाज के धार्मिक शोषण के शिकार बने हैं। इनके जीवन संघर्ष का वर्णन करते हुए मैत्रेयीजी ने समाज से बहिष्कृत वर्गों को समाज के केंद्र में लाने का प्रयत्न किया है।

हिंदी कथा-साहित्य के क्षेत्र में मैत्रेयीजी की खासियत है 'ग्राम्य लेखिका'। बुंदेलखंड में जन्मी और पली लेखिका ने अपने साहित्य की पृष्ठभूमि के रूप में गांव को स्वीकार किया। इसलिए ग्राम्य स्पंदन मैत्रेयीजी के कथा साहित्य का अभिन्न अंग बन गया है। ग्राम्य जीवन का परिदृश्य, प्रकृति शोषण, शोषण के प्रति विद्रोह, ग्राम की राजनीति, ग्रामीण संस्कृति,

वहाँ की विभिन्न जातियाँ, ग्राम्य जीवन में जागरण आदि विषयों को कथागति के अनुसार उचित ढंग से इस्तेमाल किया गया है।

दलित और जनजातियों की अस्मिता पर लेखिका ने अपने कथा साहित्य में ज़ोर दिया है। उनका जीवन संघर्ष, उनकी संस्कृति, विभिन्न दलित और जनजातियों का शोषण, राजनीति के क्षेत्र में दलितों और जनजातियों का शोषण दलित जनजाति की नारियों में शोषण, शोषण के प्रति विद्रोह आदि पर बल देकर लेखिका ने उपेक्षित वर्गों की विडंबना पूर्ण ज़िंदगी को पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है।

रचनाकार शिल्पी भी है। इसलिए कथा-सौंदर्य केलिए शिल्प सौंदर्य अनुपेक्षणीय है। एक मूर्ति या शिल्प के आस्वादन करने केलिए उसकी गहराई में बैठना चाहिए। यहाँ मैत्रेयीजी अपने कथा साहित्य के शिल्प पक्ष में नया आयाम और समकालीन वातावरण लाने में सिद्धहस्त हुई हैं। उनके हर एक उपन्यास और कहानियों के शीर्षक विषयानुकूल, संक्षिप्त, स्पष्ट, रोचक, अर्थपूर्ण और नवीन भी है। कथ्य में लेखिका का जीवनानुभव और कल्पना का समुचित सम्मिश्रण दिखाई देता है। थल और काल के उचित समन्वय में उनकी रचनाएँ और रोचक बन गई हैं। संक्षिप्त और संवेदात्मक, सशक्त संवाद के प्रयोग से लेखिका ने कथागति को प्रभावपूर्ण ढंग से आगे बढ़ाया है। भाषा और शैली का प्रयोग पात्र योजना और घटनाओं की प्रासंगिकता पर आधारित है। मैत्रेयीजी की भाषा को स्त्रीयों की भाषा कहकर छोड़ना संभव नहीं है। उनकी रचनाओं का शिल्पगत वैशिष्ट्य ज़रूर प्रशंसनीय है।

उपयुक्त कारणों से हिन्दी साहित्य जगत् में अन्य कथासाहित्यकारों से मैत्रेयीजी एक अलग और विशिष्ट स्थान है। भारत की आत्मा गांवों में बसती है। क्योंकि भारत की आबादी के सत्तर प्रतिशत गांवों में रहते हैं। लेखिका ने इन्हीं ग्रामों से अपने कथासाहित्य का विषय चुन लिया है। दूसरे लेखकों से भिन्न उनकी खासियत भी यही है कि समाज द्वारा उपेक्षितों में जागरण लाने केलिए ही उन्होंने अपनी रचनाएँ की हैं। वे आज भी इसी लक्ष्य को सामने रखकर अभंगुर साहित्य-साधना करती आ रही हैं।

विषय ग्रन्थ सूची

मैत्रेयी पुष्पा का कथा साहित्य

उपन्यास

1. अगनपाखी — वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-110002, प्र.सं. 2001

2. अल्मा कबूतरी — राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002, प्र.सं. 2000

3. इदन्नमम — राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002, प्र.सं. 1999

4. कस्तूरी कुंडल बसै — राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002, प्र.सं. 2002

5. कही ईसुरी भाग	राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग नई दिल्ली-110002 प्र.सं. 2004
6. चाक	राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग नई दिल्ली-110002 प्र.सं. 1997
7 झूलानट	राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग नई दिल्ली-110002 प्र.सं. 2000
8. बेदवा बहती रही	किताबघर प्रकाशन 24, अंसारी रोड़ दरियागंज, नई दिल्ली-110002 प्र.सं. 1994
9. विज़न	शब्द सृष्टि सी-5/एस-2-ईस्ट ज्योति नगर शाहदरा, नई दिल्ली प्र.सं. 2002
10. स्मृति दंश	किताबघर प्रकाशन 24, अंसारी रोड़ दरियागंज, नई दिल्ली-110002 प्र.सं. 1990

कहानी संग्रह

1. गोमा हँसती है	किताबघर प्रकाशन 24, अंसारी रोड़ दरियागंज, नई दिल्ली-110002 प्र.सं. 1998
2. चिह्नार	आर्य प्रकाशन मंडल सरस्वती भण्डार, गाँधीनगर दिल्ली-110 031 प्र.सं. 1991
3. ललमनियाँ	किताबघर प्रकाशन 24, अंसारी रोड़ दरियागंज, नई दिल्ली-110 002 प्र.सं. 1996

संदर्भ ग्रंथ सूची

1.	आठवें दशक की हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य	डॉ. रमेश देशमुख प्रकाशक विद्या प्रकाशन गोविंद नग्न, कानपुर-6 प्र.सं. 1994
2.	आठवें दशक के हिंदी उपन्यास (प्रवृत्तिमूलक अध्ययन)	डॉ. रजनीकांत जैन ऋषभचरण जैन एवम् संतति दरियागंज, नई दिल्ली प्र.सं. 1998
3.	आदमी की निगाह में औरत (स्त्री विमर्श और स्त्री लेखन)	डॉ. राजेंद्र यादव राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली प्र.सं 2001
4.	आधुनिक हिंदी कहानी में वर्णित सामाजिक यथार्थ	डॉ. ज्ञानचंद शर्मा राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली-110002 प्र.सं. 1996
5.	आधुनिक हिंदी साहित्य विविध आयाम	संपादक डॉ. वि.के. अब्दुल जलील वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-110002
6.	उपन्यास की शर्ता पृ.स.218	जगदीशनारायण श्रीवास्तव किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली-110002

7	उपन्यास-स्वरूप एवं संवेदना	डॉ. राजेंद्र यादव वाणी प्रकाशन नई दिल्ली-110002 प्र.सं. 1997
8.	औरत-अस्तित्व और अस्मिता (महिला लेखन का समाज शास्त्रीय अध्ययन)	अरविंद जैन सारांश प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड 142 ई, पॉकेट-4 मयूर विहार-1 दिल्ली-110091
9.	अंबेदकरवादी सौंदर्यशास्त्र और दलित-आदिवासी जनजातीय विमर्श	डॉ. विनयकुमार पाठक नीरज बुक सेंटर दिल्ली-110092 प्र.सं. 2006
10.	कथाकार चंद्रकांता	डॉ. रेखा मुले विकास प्रकाशन, 311 सी कानपुर-27 प्र.सं. 2007
11.	कथा साहित्य के सौ बरस	विभूति नारायण राय शिल्पायन, नई दिल्ली प्र.सं. 2001
12.	कलम और कुदाल के बहाने (स्त्री विमर्श)	शिल्पायन, नई दिल्ली प्र.सं. 2004

13. कहानी अनुभव और अभिव्यक्ति — राजेंद्र यादव, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-2, प्र.सं. 1996

14. खुली खिड़कियाँ (स्त्री विमर्श) — मैत्रेयी पुष्पा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं. 2003

15. गुडिया भीतर गुड़िया (आत्मकथा) — मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली-110002, प्र.सं. 2008

16. जनवादी कहानी पृष्ठभूमि से पुनर्विचार तक — रमेश उपाध्याय, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं. 2000

17 दलित चेतना और समकालीन कहानी — डॉ. रमेश कुमार, निर्माण प्रकाशन, नई दिल्ली-32, प्र.सं. 1998

18. दलित चेतना-साहित्यिक एवं सामाजिक सरोकार — रमणिका गुप्ता, समीक्षा पब्लिकेशन्स, गाँधीनगर, नई दिल्ली, प्र.सं. 2004

19. दुर्ग द्वार पर दस्तक — कात्यायनी
परिकल्पना, गामंती नागर
लखनाऊ-226010
प्र.सं. 1997

20. दलित मुक्ति का प्रश्न और दलित साहित्य — दिनेश राम
श्री साहित्यिक संस्थान
लोनी बॉर्डर, गाजियाबाद
प्र.सं. 2002

21. दलित साहित्य रचना और विचार — डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी
अतिश प्रकाशन, पाकेट-एफ-1
9 बी, जि-8, एरिया
हरिनगर, नई दिल्ली-64

22. नई सदी के उपन्यास — सं डॉ. नवीनचंद्र लोहनी
भावना प्रकाशन
नई दिल्ली-110091

23. नये उपन्यासों से नये प्रयोग — डॉ. दंगल झाल्टे
प्रभात प्रकाशन
चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6
प्र.सं. 1994

24. नारी एक विवेचन — धर्मपाल
भावना प्रकाशन, 126, पटपडगंज
दिल्ली-110091
प्र.सं. 1996

25. नारी मुक्ति संग्राम	शांति कुमार स्याल आत्माराम एम्ड संस, दिल्ली प्र.सं. 1995
26. परिधइ पर स्त्री	मृणाल पाण्डे राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड दरियागंज, दिल्ली प्र.सं. 1996
27 प्रमुख आंचलिक उपन्यास संवेदनात्मक दृष्टि	डॉ. कैलाशनाथ पाण्डेय जयभारती पब्लिशिंग हाऊस इलाहाबाद प्र.सं. 1995
28. पर्यावरण और हम	राजीव गर्ग राजपाल एण्ड सन्ज़ कश्मीरीगेट, दिल्ली प्र.सं. 1989
29. बाज़ार के बीच बाज़ार के खिलाफ भूमण्डलीकरण और स्त्री के प्रश्न	प्रभाखेतान वाणी प्रकाशन नई दिल्ली-01 प्र.सं. 2004
30. भूमण्डलीकरण ब्राड संस्कृति और राष्ट्र	प्रभा खेतान सामाजिक प्रकाशन नई दिल्ली प्र.सं. 2002

31. भूमंडलीकरण-मीडिया और बाज़ारवाद	रामशरण जोशी राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली प्र.सं. 2004
32. महिला उपन्यासकार (21 वीं शती की पूर्व संध्या के संदर्भ में)	डॉ. मधुसंधु निर्मल पब्लिकेशन्स ए-1 39, गली नं 3, कबीर नगर दिल्ली-110094 प्र.सं. 2000
33. महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में वैचारिकता	डॉ. शशि जेकब जवाहर पुस्तकालय, मथुरा
34. मिथक एक अनुशीलन	मालती सिंह लोकभारती प्रकाशन महात्मागाँधी मार्ग, इलाहाबाद
35. लोक और लोक का स्वर	विद्यानिवास मिश्र प्रभात प्रकाशन आसिफ़ अली रोड़ नई दिल्ली-110002 प्र.सं. 2000
36. समकालीन कहानी का समाजशास्त्र	देवेंद्र चौबे प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली-2 प्र.सं. 2001

37 समकालीन कहानी सोच और समझ	डॉ. पुष्पपाल सिंह आत्माराम एण्ड संस कश्मीरी गेट, दिल्ली-110006 प्र.सं. 1986
38. समकालीन महिला लेखन	डॉ. ओम प्रकाश शर्मा पूजा प्रकाशन, एवं खामा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली प्र.सं. 2002
39. समकालीन हिन्दी कथा लेखिकाएँ	डॉ. रामकली सराफ़ अनुराग प्रकाशन, वाराणसी प्र.सं. 1972
40. समकालीन हिंदी कहानियाँ	नरेंद्र मोहन भारतीय प्रकाशन, नई दिल्ली प्र.सं. 2000
41. समकालीन हिंदी कहानी का इतिहास (1971-2000)	डॉ. अशोक भाटिया भावना प्रकाशन नई दिल्ली-110091 प्र.सं. 2003
42. समकालीन हिंदी कहानियों में नारी के विविध स्वरूप	डॉ. धनश्यामदास भुतड़ा अतुल प्रकाशन ब्रह्मनगर, कानपुर-208012 प्र.सं. 1993

43. समकालीन हिंदी कहानी में समाज संरचना	मोनिका हारित श्याम प्रकाशन, जयपुर
44. समकालीन हिंदी कहानी यथार्थ के विविध आयाम	डॉ. ज्ञानवती अरोरा हिंदी बुक सेंटर 4/5-बी आसफ़ अली रोड़ नई दिल्ली प्र.सं. 1994
45. समकालीन हिंदी उपन्यास	सं. डॉ. एम. षण्मुखन हिंदी विभाग कोचिन प्रौद्योगिकी और वैज्ञानिक विश्वविद्यालय
46. समकालीन हिंदी उपन्यास की आधुनिकता	डॉ. प्रतिभा पाठक हिमाचल पुस्तक भण्डार गाँधीनगर, दिल्ली-110031 प्र.सं. 1992
47 समकालीन हिंदी दलित साहित्य एक अध्ययन	जीतूभाई मकवाणा नीजयाद, दर्पण प्र.सं. 2004
48. स्त्री अस्मिता के प्रश्न	सुभाष सेंतिया कल्याणी शिक्षा परिषद् दरियागंज, नई दिल्ली-02 प्र.सं. 2008

49. स्त्री अस्मिता साहित्य और विचारधारा	जगदीश चतुर्वेदी और सुधासिंह आनंद प्रकाशन कोलकत्ता-700-007
50. स्त्री उपेक्षिता (सीमोनद बोउवार की विश्व चर्चित कृति 'The Second Sex' का हिंदी रूपांतर	डॉ. प्रभा खेतान हिंदी पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड जोरबाग लेन, नई दिल्ली-110003 प्र.सं. 2002
51 स्त्री मुक्ति का सपना	सं. प्रो. कमला प्रसाद राजेंद्र शर्मा वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-02
52. स्त्री संघर्ष का इतिहास (1800-1990)	राधा कुमार वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-02 प्र.सं. 2002
53. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों में युगबोध	डॉ. लालसाहब सिंह अभय प्रकाशन, कानपुर प्र.सं. 2005
54. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी में ग्राम्य जीवन और संस्कृति	डॉ. राजेंद्र कुमार परिमल पब्लिकेशन्स, दिल्ली
55. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी में नारी के विविध स्वरूप	डॉ. गणेश दास अक्षय प्रकाशन, कानपुर प्र.सं. 1992

56. स्वातंत्र्य पूर्व हिंदी महिला लेखिकाओं की कहानियों का अध्ययन	डॉ. आलीस वी.ए. सूर्य भारती प्रकाशन नई सड़क, दिल्ली-6 प्र.सं. 1996
57 साठोत्तरी हिंदी कहानी और महिला लेखिकाएँ	डॉ. विजया वारद (रागा) विकास प्रकाशन साकेत नगर, कानपुर-14 प्र.सं. 1993
58. साठोत्तरी हिंदी कहानी और राजनीतिक चेतना	डॉ. जितेंद्र 'वत्स' साहित्य रत्नाकर कानपुर प्र.सं. 1989
59. सातवें दशक के लघु उपन्यासों में नारी चित्रण	डॉ. दुर्गेश नंदिनी अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर प्र.सं. 1992
60. हम और हमारा पर्यावरण	डॉ. रविशंकर पाण्डेय अनामिका प्रकाशन, 185 नया बैरहना, इलाहाबाद प्र.सं. 2000
61. हमारा पर्यावरण	दामोदर शर्मा, हरिश्चंद्र व्यास साहित्यागार, जयपुर प्र.सं. 1995

62. हिंदी उपन्यास अछूते संदर्भ
डॉ. रणवीर शंग्रा
साहित्यिक प्रकाशन
नई दिल्ली
प्र.सं. 1986

63. हिंदी उपन्यास और जीवनमूल्य
डॉ. मोहिनी शर्मा
प्रकाशन साहित्यागार
एस.एम.एस. हाइवे, जयपुर

64. हिंदी उपन्यास और स्त्री जीवन
ज्योति किश्न
मेधा बुक्स, नवीन शाहदरा
दिल्ली-110032
प्र.सं. 2004

65. हिंदी उपन्यास का इतिहास
गोपाल राय
राजकमल प्रकाशन प्रा.लि.
नई दिल्ली
प्र.सं. 2002

66. हिंदी उपन्यास की दिशाएँ
डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ
गोविंद प्रकाशन
सदर बाज़ार, मधुरा-281 001
प्र.सं. 2003

67 हिंदी उपन्यास में कथा शिल्प का विकास
डॉ. प्रतापनारायण टंडन
हिंदी साहित्य भंडार, लखनाऊ
प्र.सं. 1964

68. हिंदी उपन्यास में पारिवारिक संदर्भ	उषा मंत्री नेशनल पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली प्र.सं. 1999
69. हिंदी उपन्यास समकालीन परदृश्य	सं. डॉ. महीप सिंह लिपि प्रकाशन, नई दिल्ली-02 प्र.सं. 1980
70. हिंदी उपन्यासों में रूढ़ीमुक्त नारी	डॉ. राजरानी शर्मा साहित्य मंडल, नई दिल्ली प्र.सं. 1989
71. हिंदी उपन्यासों में स्त्री अस्मिता की अभिव्यक्ति	डॉ. वीना रानी यादव अकादमिक प्रतिभा दिल्ली-110031 प्र.सं. 2006
72. हिंदी कहानी अस्मिता की तलाश	मधुरेश आधार प्रकाशन प्राइवेट लि. सेक्टर-16, पंचकूला प्र.सं. 1997
73. हिंदी कहानी का समकालीन परिदृश्य	डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ कुंजबिहारी पचौरी जवाहर पस्तकालय सदर बाज़ार, मथुरा-281001 प्र.सं. 2005

74. हिंदी कहानी में नारी
डॉ. अनिल गोयल
आर्याना पब्लिषिंग हाऊस, दिल्ली-12

75. हिंदी की महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना
डॉ. उषा यादव
राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि.
नई दिल्ली-02
प्र.सं. 1999

76. हिंदी के अधुनातन नारी उपन्यास
इंदुप्रकाश पाण्डेय
हिंदी बुक सेंटर, नई दिल्ली-02
प्र.सं. 2004

77 हिंदी के आंचलिक उपन्यास और उनकी शिल्पविधि
डॉ. आदर्श सक्सेना
सूर्यप्रकाश मंदिर, बिकानेर

78. हिंदी के आंचलिक उपन्यासों में मूल्य संक्रमण
वेदप्रकाश अमिताभ
वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

79. हिंदी के आंचलिक उपन्यास
सं. रामदरश मिश्र
ज्ञान चंत्र गुप्त
नमन प्रकाशन, नई दिल्ली-02
प्र.सं. 1999

80. हिंदी के कौतूहल प्रधान उपन्यास
डॉ. विमलेश आनंद
अनुराग प्रकाशन
नई दिल्ली-110030
प्र.सं. 1990

81. हिन्दुत्ववादी नारीवाद
कमलेश्वर
मेधाबुक्स, नई दिल्ली
प्र.सं. 2003

पत्रिकाएँ

1) आजकल	1)	सितंबर 1984
	2)	मई-जून 1995
	3)	मई-जून 2001
2) आलोचना (प्रैमासिका)		जुलाई-सितंबर 2001
3) कथन	1)	जुलाई-सितंबर 2000
	2)	जनवरी-मार्च 2002
	3)	जुलाई-सितंबर 2003
4) कथाक्रम (त्रैमासिक)		अक्तूबर-दिसंबर 2002
5) कथादेश	1)	अक्तूबर-2002
	2)	दिसंबर-2002 (प्र.सं. 52)
	3)	जुलाई-2003 (प्र.सं. 30-33)
6) दस्तावेज	1)	अक्तूबर-दिसंबर 1995 (प्र.सं. 1-3)
	2)	अप्रैल जून 1999
	3)	जुलाई सितंबर 2001
7) भाषा		जनवरी फरवरी 2001
8) मधुमती		जनवरी फरवरी 2001
9) वतार्थ		अंक 93 अप्रैल - 2003 (पृ. सं. 9-19)
10) वर्तमान साहित्य		आगस्त 2001
		मार्च 2001
11) संकल्प		अप्रैल-जून 2006
12) सचेतना		अंक-1 1) मार्च 2000
		2) सितंबर 2001

13) समीक्षा	1)	अक्तूबर-दिसंबर	1997
	2)	जनवरी-मार्च	2001
	3)	जुलाई-सितंबर	2002
	4)	अप्रैल-जून	2004
	5)	मार्च	2005
	6)	अक्तूबर-दिसंबर -	2008
14) साहित्य अमृत	1)	अप्रैल 2004	
15) साक्षात्कार		जुलाई 2002	
16) हंस	1)	जनवरी 1998	
	2)	जनवरी 1999	
	3)	जुलाई 1999	
	4)	जुलाई 2000	
	5)	अक्तूबर 2000	
	6)	मार्च 2001	(पृ.सं. 26-39)
	7)	अप्रैल 2002	(पृ.सं. 85-88)
	8)	मार्च 2003	(पृ.सं. 36, 37)
	9)	अप्रैल 2003	(पृ.सं. 47)
	10)	दिसंबर 2003	
	11)	अक्तूबर 2004	
	12)	दिसंबर 2004	
	13)	मार्च - 2005	
	14)	सितंबर - 2005	
	15)	जनवरी - 2006	
	16)	फरवरी - 2006	
	17)	आगस्त - 2006	

मलयालम

भाषा भोषिणी	नवंबर 2000 (पृ.सं. 5-15) मार्च 2001 (पृ.सं. 26)

अंग्रेज़ी

इंडिया टुडे	सितंबर 2002

❖❖❖